✻ श्रीगोवर्द्धननाथोविजयते ✻

✻ श्रीगोवर्द्धन ग्रन्थमाला सीरीज का दसवाँपुष्प ✻

अष्टछाप के महाकवि चतुर्भुजदास कथित—

खटऋतु वार्ता

तथा

श्रीवल्लभकुल को प्रागट्य सहित

★

सपादक:

श्री द्वारकादास परीख,

★

प्रकाशक:
श्रीगोवर्द्धन ग्रन्थमाला कार्यालय
दाऊजी घाट, मथुरा।

अक्षय तृतीया

तृतीयआवृति १२५०] सं० २०२५ [न्यौछावर १)

संशोधित न्योछावर १)२५ मथुरा

हरीहर इलैक्ट्रिक मशीन प्रेस, मथुरा।

समर्पण-

प्यारे कृष्ण !

लीजिए, अङ्गीकार कीजिए, यह तुम्हारे प्रिय बालसखा और अंतरग सेवकों द्वारा सिद्ध किये हुए सुगधित पुष्प ! अहह ! कितने महँक रहे हैं ! कितने मनोहर हैं ! इन पुष्पोंमें आपही के भोगयोग्य मकरंद भरा हुआ है ।

क्यों ठीक हैं न, पसद आये तुम्हें ! बोलते क्यों नहीं ? प्यारे रसिक भंवर ! क्यों इन पुष्पों से तुम संतुष्ट हुए न तो फिर आओ, इन पुष्पों को लेकर हमारे हृदय में । यही सच्ची मित्रता एक मात्र प्रतीक है ।

मैं हूँ तुम्हारा—
वियोगी साथी

।। श्रीगोकुलनाथजीविरचित ।।

★ खट ऋतुन की वार्ता ★

[अष्टछाप के कवि चतुर्भुजदास कथित]

उत्थानिका—सो एक समें श्रीगुसांईजी श्री गोपालपुर में श्रीगोवर्द्धनधरन की सेवा करिवे को प्रातःकाल के समें अस्नान करिकें अपनी बैठक सों पधारे । तब चतुर्भुजदास को आज्ञा किये, जो तू अप्सरा कुंड ऊपर जाय कैं रामदास भीतरिया सो कहियो, जो—तुम को श्रीगुसांईजी बुलावें हैं । और फूल मिले सो लेतो अइयो । ताही समय चतुर्भुजदास श्रीगुसांईजी को दण्डवत् करि पूंछरी के आडो जाय कैं, **रामदास भीतरिया की गुफा में जाय कैं**, रामदास भीतरिया सो कही, जो—तुम्हें श्रीगुसांईजी बुलावें हैं । ताही समय रामदास श्रीगिरिराजजी ऊपर श्रीजी के मदिर को चले । और चतुर्भुजदास फूल लेवे को श्रीगिरिराजजी की तरहटी आये । तहाँ फूल बीनत बीनत श्रीगिरिराजजी की कन्दरा में भूलि कैं चले गये । तहाँ देखे तो श्रीगोवर्द्धननाथजी श्रीस्वामिनीजी सहित भीतर कन्दरा में विराजें हैं । सो दर्शन करिकें चतुर्भुजदास ने दण्डवत् करी ।

ता पाछें श्रीगोवर्द्धननाथजी चतुर्भुजदास सो आज्ञा किये जो—अरे चतुर्भुजदास ! तू यहाँ या समें प्रातःकाल कहाँ सूँ

आयो ! तब चतुर्भुजदास ने विनती कीनी, जो--कृपानाथ ! मोकों श्रीगुसांईजी ने फूल लेवे को पठायो है। सो मैं फूल लेते लेते कंदरा में भूलि कें चल्यो आयो हूं। तब श्री गोवर्द्धननाथजी आनु चतुर्भुजदास की भोरी भोरी बातें सुनिकैं बहोत प्रसन्न भये। और अपुने मनमें प्रसन्न होय कैं आज्ञा किये, जो--चतुर्भुजदास ! तू कछु माँगि। मैं तेरे उपर बहोत प्रसन्न भयो हूं। तब चतुर्भुजदास ने विनती कीनी, जो--महाराज ! आपकी नित्यलीला को दरसन भूतल के दैवी जीवन कों कौन भांति सों होय ?

तब श्रीगोवर्द्धन नाथजी आज्ञा किये, जो—चतुर्भुजदास ! तू सुनि, मैं तोसों आज्ञा करत हों। जो मैंनें मेरे षट्सपत्ति स्वरू भूतल पें प्रगट किये हैं। सो जो कोऊ या षट्संपत्ति स्वरूपन क भली भांति सों सेवेंगे, काम, क्रोध, मोह, मद, लोभ मत्सरता, सो ये षट् अपराधन सों बचि कैं मेरो सुमिरन करेंगे, त मैं उन जीवन कों दूसरी देह दउंगो। तब ये सखी देह स मेरे पास आवेंगे। पाछं यहां आयकें श्रीस्वामिनीजीकी दासी होंयग तो अनेक रासादि लीलाके दरसन कराउंगो। और जो श्रीस्वामिनीज सों ईर्षा राखेंगी तो पाछे भूतल पें पड़ेंगी। और अनेक जन्म क अंतराय परेगो।

ता पाछें चतुर्भुजदासने फेरि विनती कीनी, जो--महाराज आपने षट् सपत्ति स्वरूप सेइवेकी आज्ञा करी सो कौनसे जानिये ?

तब श्रीठाकुरजी कृपा करिकैं आज्ञा किये, जो--चतुर्भुजदास तू सुनि, जो एक तो मेरो **मूरती स्वरूप** पुष्टि है। दूस

श्री आचार्यजी को कुल। तीसरो **श्रीयमुनाजी**। चोथो स्वरूप **श्रीगिरिराजजी** पाछे पाँचमो स्वरूप **श्रीभागवत**। और छटमो **व्रजमण्डल**। सो ये छेओ निधि स्वरूप मेरो स्वरूप जाननो।

तब इतनी आज्ञा सुनि कैं चतुर्भुजदास ने फेरि विनती कीनी, जो कृपानाथ ! आपकी आज्ञा होय तो मैं नित्यलीला कीरतन वार्ता भूतल के दैवी जीवन को सुनाऊँ। तब श्रीगोवर्द्धननाथजी मुसिकाय के आज्ञा किये, जो—तेरो दैवी जीवन पर ऐसो स्नेह है तो सुखेन वर्णन करि। तोकों सर्व लीला--स्फूर्ति होयगी।

तापाछें श्रीठाकुरजी, श्रीस्वामिनीजो अपने व्रजभक्तन सहित कन्दरा सों निकसि परवत ऊपर अपने मन्दिर में पधारे। सो ता समेंकी शोभा देखि कैं चतुर्भुजदास ने एक कीरतन गायो। सो पद—

राग-भैरव

श्रीगोवर्द्धन गिरि सघन कंदरा रैन निवास कियो पियप्यारी।
उठ चलें भोर सुरत रङ्गभीने नन्दनन्दन वृषभान दुलारी ॥१॥
इति विगलित कचमाल मरगजी अटपटे भूषन, रगमगी सारी।
उतही अधर मसि पाग रही धसि दुहुं दिस छवि बाढो अति भारी ॥२॥
घूमत आवत रतिरन जीते करनी संग गज गिरिवरधारी।
'चतुर्भुजदास' निरखि दंपति छवि तनमनधन कीनो बलिहारी ॥३॥

ता पाछें चतुर्भुजदास फूल लेकें श्रीजी के मन्दिरमें आये। सो आयकें फूलघर में फूल पहुँचाये। ता पाछें श्रीगुसांईजी मङ्गलभोग धरिकें बाहर पधारें। तब चतुर्भुजदास ने साष्टांग दण्डवत् कीनी। तब श्रीगुसांईजी आज्ञा किये, जो-चतुर्भुजदास ! तोकों इतनी बेर

कहाँ लगी ? तब चतुर्भुजदास ने सब समाचार विधिपूर्वक कहे । सो सुनिकें श्रीगुसांईजी बहोत प्रसन्न होय कैं आज्ञा किये, जो तू धन्य है । जो तेरे माथे श्रीनाथजी की कृपा है ।

ता पाछें चतुर्भुजदास नित्यलीला वार्ता वरनन करन लगे । तहाँ श्रीगुसांईजी के चरनारविन्दको ध्यान करिकें कहिवे लगे––

अथ खटऋतुनकी वार्ता––

श्रीनन्दकुमार सदा सर्वदा व्रजमें विराजत हैं, तिनकी निजवार्ता कहते हैं—

जो एक समें श्रीठाकुरजी, श्रीस्वामिनीजी, श्रीयमुनाजी, श्रीचन्द्रावलीजी तथा अष्टसखी आदि अनेक व्रजभक्तनकों सङ्ग लेकैं स्यामढाँकसों बिलछु कुण्ड पें पधारे । सो वहाँ स्यामतमाल के नीचे बिराजें । सो बिलछु कुण्ड की शोभा देखि कैं श्रीठाकुरजी बहोत प्रसन्न भये । और आज्ञा किये, जो–या समें कछु गान कीजे । तब श्रीस्वामिनी जी कहैं, जो–पहले आपु कछु गाइये । तब श्रीठाकुरजी ने वेणुगीतको एक श्लोक मुरलीमें अद्भुत गान कियो । सो श्लोक—

“बर्हापीडं नटवरवपुः कर्णयोः कर्णिकारम् ।
बिभ्रद्वासः कनककपिशं वैजयन्तीञ्च मालाम् ॥
रन्ध्रान् वेणोरधरसुधया पूरयन् गोपवृन्दैः ।
वृन्दारण्यं स्वपदरमणं प्राविशद् गीतकीर्तिः” ॥१॥

ता पाछें श्रीठाकुरजी ने स्वामिनीजी सों आज्ञा कीनी, जो–अब कछु आपहू गाइये । तब श्रीस्वामिनीजी ने श्रीयमुनाजीकों पास बुलाय कें कही, जो–हम तुम मिलि कैं गान करें । तब दोउ स्वरूप मिलि कैं गान किये । सो दोय श्लोक युगलगीत के अद्भुत अलौकिक गान किये । सो श्लोक—

“वामबाहुकृतवामकपोलो वल्गितभ्रुरधरार्पितवेणुम् ।
कोमलांगुलिभिराश्रितमार्गं गोप्य ईरयति यत्र मुकुन्दः ॥१॥
व्योमयानवनिताः सह सिद्धैर्विस्मितास्तदुपधार्य सलज्जाः ।
काममार्गणसमर्पितचित्ताः कश्मलं ययुरपस्मृतनीव्यः ॥२॥

तब वा समय की कैसी शोभा भई, जो–जितनेक व्रजभक्त हे सो सब गान सुनि कैं चित्र के से लिखे रहि गये ।

सो ता पाछें श्रीठाकुरजीने वेणुनाद करि कें सबनकी मूरछा दूरि कीनी । तब श्रीस्वामिनीजी के मनमें अति आनन्द बढ्यो । ता पाछें श्रीस्वामिनीजी ने श्रीठाकुरजी सों आज्ञा करी, जो–प्यारे ! एक मेरो मनोर्थ है । जो–एक नवीन निकुंज खट ऋतुन के विभाग सहित रतन जटित अद्भुत अलौकिक रचना करो । तो एक अष्टजाम की लीला नित्य नौतन करें । एक दिनरात्र में छेओ ऋतुन की छेओ निकुंजन में पधारि आमें । और हमारे छेओ स्वरूपनके मनोरथ सहित वस्तुभाव सिद्ध होय ।

तिन के नाम : एक श्रीठाकुरजी; दूसरे श्रीस्वामिनीजी; तीसरे श्रीयमुनाजी; चौथे श्रीचन्द्रावलीजी; पाँचमें श्रीललिताजी छटमें श्रीविसाखाजी ।

इतनी सुनि के श्रीठाकुरजी बोले, प्यारी ! जो आज्ञा ! ता पाछें श्रीठाकुरजी अष्टसखीन कों पास बुलाइ, श्रीललिताजी, श्रीविसाखाजी,दोउ निज प्रिय सखीन कों श्रीहस्त पकरिकैं अपुने पास बुलाय लिये । तब छेओं सखी रही, सो बहोत उदास भईं । जो–आज के श्रीस्वामिनीजी के मनोरथ में हमही रहि गईं । जो ललिता विसाखा बड़ी बडभागिनी हैं। तिनकों पास बुलाये ।

ता पाछें श्रीठाकुरजी इनके मन की जानिकैं इन छेओं सखीन सों आज्ञा किये, जो–श्रीगिरिराज के भीतर तुम जाय कैं जुगल खट निकुंज खट ऋतुन के अनुसार रत्नमय तथा पुष्पलतामय हमारे छेओं स्वरूपन के मनोरथ सहित सब वस्तुभाव संयुक्त अद्भुत अलौकिक रचना करो । तब छेओं सखी प्रसन्न होय कैं श्रीठाकुरजी सों आज्ञा मांगि कैं श्रीगिरिराजजी के भीतर पधारे । तहाँ श्रीगिरिराजजी कों दण्डवत् करिकैं बिनती कीनी, जो—श्रीठाकुरजी श्रीस्वामिनीजी की ऐसी आज्ञा हैं । जो–जुगल खट निकुंज रचना करिवेकी । तब यह सुनिकैं श्रीगिरिराजजी प्रगट होय कैं छेओं सखीन कों दरशन दिये ।

सो श्रीगिरिराजजी को स्वरूप कैसो है ? जो–बारह बरस के बालक को सो, और लाल वस्त्र पहेरे हैं । और लाल छरी श्रीहस्तमें लिये हैं । और श्याम स्वरूप हैं । सो मन्द मन्द मुसिकायकें छेओं सखीन सों पूछें, जो—कहा आज्ञा है ?

तब छेओं सखीन ने सब मनोरथ विस्तारपूर्वक कह्यो, जो–श्रीस्वामिनीजी को मनोरथ रतनजटित छै निकुंज छैउ ऋतुन के विभाग सहित करिवे को है । और श्रीठाकुरजी को मनोरथ पुष्पलतामय छैऊ निकुंज छैऊ ऋतुन के अनुसार श्रीस्वामिनीजी के निकुंजन के भेले भेले रचना करिवे को है । जैसे एक ऋतु के दोय मास होय हैं तैसेही एक ऋतु के दोय निकुंज एक-एक रत्नमय और एक-एक पुष्पलतामय ।

या भाँति छेओं सखीन की बात सुनिकैं सखीन पैं श्रीगिरिराजजी बहोत प्रसन्न भये । ता पाछे श्रीगिरिराजजी छेओं सखीन कों संग लें निकुंज रचना करिवेकों पधारे ।

तहाँ प्रथम श्रीस्वामिनीजी के मनोरथ की वसन्त ऋतु की पुखराज की जटित निकुंज किये । सो चरनघाटी सों ले दंडौती सिला ताँई । दूसरो निकुंज पुष्पलतामय । सो श्रीठाकुरजी के मनोरथ को । सूर्य उदय तें दस घरी दिन चढे ताँई बसंत ऋतु सदा रहें ।

दूसरी निकुंज श्रीललिताजी के मनोरथ की ग्रीष्मऋतु की पन्ना की जड़ाउ सोनाकी किये । दूसरी निकुंज पुष्पलतामय

सो श्रीठाकुरजी के मनोरथ की । सो दंडोती सिला तें मानसी गङ्गा ताँई । दस घरी दिन चढे तें दस घरी दिन रहे ताँई ग्रीष्म ऋतु सदा रहे ।

तीसरी निकुंज श्रीविसाखाजी के मनोरथ की वरसा ऋतु की मानिक की जडाऊ सोनाकी किये । मानसी गङ्गा तें श्रीकुण्ड ताँई । दूसरी श्रीठाकुरजी के मनोरथ की पुष्पलतामय । दस घरी दिन रहे तें सायंकाल ताँई वरसा ऋतु सदा रहें ।

चौथी निकुंज श्रीचन्द्रावलीजी के मनोरथ की शरद ऋतु की हीरा की जड़ाऊ सोना की किये । दूसरी निकुंज श्रीठारकुजी के मनोरथ की पुष्पलतामय । श्रीकुंड तें लेकें चन्द्रसरोवर ताँई । परमरासस्थली ताँई । सायंकाल तें लगाय दस घरी राति आए ताँई शरद ऋतु सदाँ रहें ।

पाँचमी निकुंज श्रीयमुनाजी के मनोरथ की हेमन्त ऋतु की लहरियादार मीना की किये । दूसरी निकुंज श्रीठाकुरजी के मनोरथ की पुष्पलतामय । चन्द्रसरोवर तें लेकें आन्यौर ताँई । दस घरी राति आये तें दस घरी राति रहे ताँई हेमन्त ऋतु सदाँ रहे ।

छठी निकुंज श्रीठाकुरजी के मनोरथ की शिसिर ऋतु की नीलमनि जडाऊकी किये । दूसरी निकुंज श्रीठाकुरजी के मनोरथ की पुष्पलतामय । आन्यौर तें लेकें गोविन्द कुंड सघन कंदरा ताँई । दस घरी राति रहे तें सूर्य उदय ताँई शिसिर ऋतु सदा बिराजे ।

या भांति श्रीगिरिराजजी ने छेओ ऋतु प्रकट किए । जो राति दिन की साठ घरी में । श्रीठाकुरजी श्रीस्वामिनीजी की आज्ञा तें स्थापन किये । ता पाछें श्रीगिरिराजजी गिरिराज में अंतर्धान भए ।

ता पाछें छेओ सखीन ने जहाँ श्रीठाकुरजी, श्रीस्वामिनीजी, श्रीचन्द्रावलिजी, श्रीललिताजी, श्रीविसाखाजी ए छेओ स्वरूप बिराजे हते तहाँ आय बिनती कीनी । जो कृपानाथ ! द्वादस निकुंज खट तो रतन जटित और खट पुष्पलतामय खट ऋतुन के संयुक्त सब सिद्ध हैं । कृपा करि कैं एकबार अवलोकन कीजिए ।

सो ताही समय छेओं स्वरूप प्रसन्न होईकें श्रीगिरिराजजी की कन्दरा में पधारे । तहाँ प्रथम श्रीयमुनाजी के तीर पधारिकें श्रीयमुनाजी कों आज्ञा किए, जो–अब आप दोउ स्वरूप सों श्रीगिरिराजजी भीतर निकुंज में बिराजो ।

ता पाछे आपु सघन कन्दरा में होइ कैं भीतर पधारे । तहाँ श्रीरिराज को स्वरूप रत्नमय देख्यो । और श्रीयमुनाजी की सीढी हू रत्नजटित देखीं ।

ता पाछे बसंत ऋतु की निकुंजन में पधारे । तहाँ श्रीस्वामिनीजी के मनोरथ की पुखराज की जडाऊ निकुंज । तामें अस्नान: सिंगार : गोपीवल्लभभोग । दूसरी पुष्प की निकुंज सो श्रीठाकुरजी के मनोरथ की । तहाँ डोल उत्सव । और इनको नाम वसन्ती सखी भयो ।

ता पाछे ग्रीष्म ऋतु की निकुंजन में पधारे । तहाँ एक निकुंज पन्ना के जडाउ की सो श्रीललिताजी के मनोरथ की। तहां राजभोग । दूसरी पुष्प की निकुंज सो श्रीठाकुरजी के मनोरथ की। तहाँ फूलमण्डली को उत्सव । ता पाछें इनको दूसरो नाम ग्रीष्म सखी भयो ।

ता पाछे बरषा ऋतु की निकुंजन में पधारे। तहाँ मानिक के जड़ाऊ की निकुंज। सो श्रीविसाखाजी के मनोरथ की। तहाँ उत्थापन भोग। दूसरी पुष्प की निकुंज सो श्रीठाकुरजी के मनोरथकी तहाँ हिंडोरा झूलिवे को उत्सव। और इनको दूसरो नाम बरषा सखी भयो।

ता पाछे शरद ऋतु की निकुंजन में पधारे। तहाँ हीरा के जडाऊ की निकुंज। सो श्रीचंद्रावली श्रीप्राणेश्वरीजु के मनोरथकी। तहाँ सेनभोग। दूसरी पुष्पन की निकुंज सो श्रीठाकुर जी के मनोरथ की। तहाँ रासोत्सव। और इनको दूसरो नाम श्रीठाकुरजी ने शरद सखी धर्‍यो।

ता पाछे हेमन्त ऋतु की निकुंजन में पधारे । तहाँ एक निकुंज लहेरियादार सोना की मीना के जडाउ की। सो श्रीयमुनाजी महारानीजू के मनोरथ की। तहाँ अनोसर में कुनवारो आरोगायवे को मनोरथ। दूसरी पुष्पन की निकुंज सो श्रीठाकुरजी के मनोरथ की । तहाँ जागरन के मनोरथ को उत्सव। और तिनको दूसरो नाम हेमन्त सखी धर्‍यो ।

ता पाछें सिसिर ऋतु की निकुंजन में पधारे। तहाँ नीलमनि जडाउ की निकुंज । सो श्रीठाकुरजी के मनोरथ की। तहाँ मङ्गलभोग। दूसरी पुष्पन की निकुंज सो श्रीठाकुरजी के मनोरथ की। तहाँ होरी खिलायवे को मनोरथ और इनको दूसरो नाम शिशिर सखी धर्‍यो ।

सो या भाँति श्रीठाकुरजी ने षट निकुंजन के नाम धरे। और छेओ सखी ही तिनके नाम छेओ ऋतुन के हैं। सोई धरें।

ता पाछें शिसिर सखी दोय थार सामग्री के भोग धरें सो नाम छेओ ऋतुनके—

(१) चैत-वैसाख; वसंत ऋतु के सो धरें। (२) ज्येष्ठ-आषाढ; ग्रीष्म ऋतु के सो धरें । (३) श्रावण-भादों; बरषा ऋतु के सो धरें (४) आश्विन-कार्तिक, शरद ऋतु के सो धरें (५) मार्गसिर्ष-पौष, हेमन्त ऋतु के सो धरें। (६) माघ फाल्गुन, शिसिर ऋतु के सो धरें।

या प्रकार षट ऋतुनके बारह मास कहे हैं । सो या भांति श्रीस्वामिनीजी की आज्ञा तें श्रीठाकुरजी ने एक दिन राति में छेओ ऋतुन कों छेओ निकुंजन में स्थापना करी।

ता पाछें श्रीठाकुरजी ने छत्तीसों राग रागिनीन कों बुलाय के आज्ञा करी, जो-तुम छै छै सखी रूप होय कें छत्तीसों बाजेन सहित एक एक ऋतु की निकुंजन में छै छै समें अनुसार श्रीस्वामिनीजी की आज्ञा तें नृत्य गान तथा बाजे

सावधानी सों बजाइयो। तब छत्तीसों राग रागिनी श्रीठाकुरजी को दण्डवत् करि कैं छैत्रो ऋतुन के छैत्रो निकुंजन में छै छै बाजे सहित छै छै पधारे। सो तिन छत्तीसों रागिनीन के तथा छत्तीसों बाजेन के नाम कहत हैं——

राग रागिनीन के नाम——(१) मलार, (२) ललित, (३) पंचम, (४) आसावरी, (५) भैरव, (६) मालव (७) टोडी. (८) कल्याण, (९) गुर्जरी. (१०) मालश्री, (११) गोड़ी (१२) बिलावल (१३) धनाश्री, (१४) रंगिली (१५) खंमाच (१६) देसाख, (१७) कान्हरो, (१८) गोडमल्हार (१९) केदारो (२०) षट्मंजरी (२१) रामकली, (२२) गंधार, (२३) वराडी, (२४) कुकुंभ, (२५) कामोद, (२६) नट (२७) गुनकली, (२८) माधवी, (२९) देस, (३०) बिभास (३१) हास, (३२) काफी, (३३) सोरठ, [३४] ईमनि, [३५] जेजेवंती [३७] सारङ्ग।

बाजेन के नाम——[१] बीनाचीन, [२] मुरली, [३] अमृतकुंडली, [४] जलतरङ्ग, [५] मदनभेरी, [६] धोंसा, [७] दुंदुभी, [८] निसान [९] नगाड़ा, [१०] शङ्ख, [११] घन्टा, [१२] मोहोचंग, [१३] सींगी, [१४] खंजरी, [१५] ताल, [१६] षट्ताल, [१७] मंजीरा, [१८] मुहचरि [१९] थारी [२०] झालर, [२१] ढोल, [२२] डफ, [२३] डिमडिमी[२४] झांझ, [२५] मृदङ्ग, [२६] गिडगिडी, [२७] पिनाक, [२८] रबाब, [२९] जंत्र, [३०] शहनाई, [३१] श्रीमण्डल,[३२] सारंगी, (३३) दूधारी, (३४) करताल, (३५) तुरई, (३६) किन्नरी।

ता पाछे श्रीठाकुरजी ने श्रीस्वामिनीजी सों आज्ञा करी, जो हे प्यारी ! आप अब इन निकुंजन में अष्टजाम की लीला भली भाँति सों नित्य नौतम करो। तब श्रीस्वामिनीजी बहोत प्रसन्न होय कैं कहें जो प्यारे ! आज ही सों आरंभ करेंगे।

ता पाछें श्रीठाकुरजी, श्रीस्वामिनीजी, श्रीयमुनाजी, श्रीचन्द्रावलीजी, श्रीविसाखाजी, आदि सब व्रजभक्तन सहित सायंकाल के समें शिसिर ऋतु की निकुंज में नीलमनि के जडाऊ की चित्रसारी के भीतर पधारे। तहाँ जडाऊ की सिज्या पर श्रीठाकुरजी तथा श्रीस्वामिनीजी दोय स्वरूप बिराजे। और श्रीयमुनाजी, श्रीचंद्रावली, श्रीललिताजी, श्रीविसाखाजी चारों स्वरूप सिज्या के पास श्रीस्वामिनीजी की आज्ञा तें चोकेन न पें बिराजे। और सब व्रजभक्त सिज्या के चारयों ओर ठाडे रहे।

तहाँ सैया के ऊपर श्रीठाकुरजी श्रीस्वामिनीजी बिराजि-कैं आज्ञा करे, जो-प्रातःकाल सों अष्टजामकी लीला होयगी सो तुम छैओं सखी अपनी अपनी निकुंजन में परचारगी में सावधान होय कैं सब सोंज त्यारी भली भाँति सों करोगी। ता पाछे श्रीठाकुरजी ने सबनकों आज्ञा दिए, जो तुम सब अपनी अपनी निकुंजमें सोओ। पाछें श्रीठाकुरजी श्रीस्वामि-नीजी बीरी आरोगि कैं नीलमनि की कुंजन में पोढे।

ता पाछे घरी छै राति रही तब वा समय शिसिर सखीने जाय के मंगल भोग की सामग्री सिद्ध करी । पाछे रागनीन कों जगाय कैं आज्ञा करी, जो—तुम श्रीठाकुरजीकी चित्रसारी के साम्हें जाय के बजावो । तब ललित रागिनी बीन बजायवे लगी× । सो बीन सुनि कें श्रीजमुनाजी श्रीचन्द्रावलिजीआदि सब ब्रजभक्त अपनी अपनी निकुंजन सों सिंगार करि के बेगि बेगि जहां श्रीठाकुरजी श्रीस्वामिनीजी पोढे हते तहां सिज्या के आडी आय बिराजे । ता पाछे शिसिर सखीने जुगल चरन चांपि के प्रभुन कों जगाये ।

ता पाछे सिज्या में दोउ स्वरूप गादी तकियानके उपर बिराजे । सो नीलमनि की चित्रसारी की कैसी शोभा है ? जो मनीन के दीपक प्रकास करें हैं । और बहुत उंचे गादी तकिया कारचोबी के मखमल के हैं । ता ऊपर स्वरूप बिराजे हैं । श्रीठाकुरजी की दाहिनी ओर कों श्रीचन्द्रावलिजी श्रीविशाखाजी बिराजे हैं । और श्रीस्वामिनीजी की बांई आडी श्रीजमुनाजी ललिताजी पास बिराजे हैं । या प्रकार छेओ स्वरूप गादी तकियान उपर भेले बिराजे हैं ।

और श्रीयमुनाजी सब निकुंजन में दोउ स्वरूपन सों बिराजे हैं । आधिदैविक स्वरूप सों श्रीठाकुरजी के पास जेंमनी

× पाछें रागनीनकों जगाय के आज्ञा करी जो श्रीठाकुरजीकी चित्रसारी के साम्हे जाय के बीन बजावो । और, ललित रागनी ने मंद मंद सुर सों गायो । सो गान सुनि के...'' ऐसा भी पाठ मिलता है ।

आडी बिराजे हैं । और श्रीयमुनाजी को प्रागट्य हू श्रीठाकुरजी के जेंमने अङ्ग सों हैं । और आधिभौतिक स्वरूप जल प्रवाह अद्‌भुत । सो मंद मंद शीतल छेओं निकुंजन में श्रीठारकुजीने स्थापन कियो है ।

ता पाछें शिसिर सखीने शीत ऋतु जानि कैं एक सोना की अंगीठी चौकी उपर साम्हे राखी । तामें कपूर के टूक करि के प्रकासी । ता पाछें शिसिर सखी ने मंगल भोग के छै थार में मनोरथकी सामग्री साम्हे पधराइ और सखडी तथा अनसखडी दूधघर तथा नागरी आदि अनेक भाँति की सामग्री धरी । तहाँ मनोरथ की सामग्री की विगत: —

श्रीठाकुरजी के मनोरथ के मनोहर के लडुआ । श्रीस्वामिनीजी के मनोरथ के पंचधारी के लडुआ । श्रीयमुनाजी के मनोरथ के बूंदी के लडुवा । श्रीचन्द्रावलीजी के मनोरथ के मेदा के मनोहर के लडुवा । श्रीललिताजीके मनोरथ के बेसन के मगद के लडुवा । और श्रीविसाखाजी के मनोरथ के सेव के लडुआ ।

ता पाछें शिसिर सखी ने छेओं स्वरूपन के पास छेओं झारी श्रीयमुनाजी के जलकी सोनाकी भरि कैं धरी । ता पाछें श्रीठाकुरजी श्रीस्वामिनीजी बहोत प्रसन्न भये । तासों परस्पर हास्य विनोद सों अरोगे । ता पाछें महाप्रसाद अपने श्रीहस्त सों दोऊ स्वरूपनने सब ब्रजभक्तन कों दिये । ता पाछें शिसिर सखी ने सोने के थार में मोती की आरती करी । इतने में ूर्य उदय को समें भयो ।

ता पाछें वसंतो सखी नें साष्टांग दंडवत करि बि
करी, जो-राज ! मेरी वसंत निकुंज में पधारो । सो इ
बिनती वसंत सखी की सुनि कें दोऊ स्वरूप हरखि
पधारे । सो कैसी शोभा सों पधारे ? जो–श्रीठाकुरजी
श्रीहस्त श्रीस्वामिनीजी के कन्धा उपर धरे हैं। दाहिनो श्री
श्रीचन्द्रावलिजी के कन्धा ऊपर धरे हैं । और श्रीस्वामिनी
दाहिनो श्र हस्त श्रीठाकुरजी के कन्धा ऊार धरे हैं और
श्रीहस्त श्रीयमुनाजी के कन्धा ऊपर धरे हैं। और सखीजनन
झुरमट पाछें ते संग हैं । और सब रागरागिनी नृत्यगान,
नाना प्रकार के बाजे सन्मुख बजे हैं, और श्रीमस्तक पर स्
पाग अति ही शोभा देत है । मानो रातिकों कोई रति
जीति कैं पधारे हैं । या भाँति हँसत हँसावत वसन्त निकुं
पधारे तहाँ वसंती सखी ने सोना की चोकी उपर पधराये ।

ता पाछे वसंती सखी ने श्रीठाकुरजी श्रीस्वामिनीजी
नीलम के जडाऊ आभरन राति कों धराये हते सो सब
करे । ता पाछें वसन्ती सखी ने श्रीठाकुरजी श्रीस्वामिनीजी
दोउ पीढा पर आमने सामने पधराये । पाछें दोनों स्वरुपन
अभ्यंग कराये । श्रीठाकुरजी कों श्रीचन्द्रावलिजी श्रीविसाख
दोउ ने मिल कैं कराये, और श्रीस्वामिनीजी कों श्रीयमुन
श्रीललिताजी दोउन ने कराये । और वसन्ती सखी ने केशी
उष्ण जल सोना की गागरन सों भरि कें अस्नान करा
ता पाछें श्रीठाकुरजी श्रीस्वामिनीजी कों कोमल वस्त्र सों
वस्त्र कराये । ता पाछें वसंती सखी ने केसरीया पीताम्बर दो

स्वरूपन कों अङ्गीकार कराये । पाछें पुखराज की जटित चित्रसारी में केसरी रेसमी मखमल कारचोबी के बड़े बड़े गादी तकियान पर पधराये । और नाना भाँति के अत्तर, फुलेल अरगजा आदि, कुंकुम, केसर, काजर, कांगसी, आरसी आदि सब साम्हें धरे । और केसरी गोटा किनारी के वस्त्र तथा पुखराज की जोड जडाउ आभरन के नख तें शिख पर्यंत के दोउ ठिकाने सोना के थार भरि कें धरें । तहाँ श्रीचन्द्रावलिजी श्रीविसाखाजी नें श्रीठाकुरजी कों सिंगार कियो । और श्रीयमुनाजी श्रीललिताजी नें श्रीस्वामिनीजी को सिंगार कियो । तहाँ प्रथम श्रीमस्तकमें दोनो ठिकाने केस, प्रति प्रति मोतिन सों गूहे । और नख तें सिख ताईं नाना भाँति सों सिंगार किये । तहाँ प्रथम श्रीठाकुरजी को सिंगार कहे हैः—

वस्त्र केसरी गोटा किनारी के दोउ ठिकाने रूचि अनुसार धरें । और पुखराज की जोंड । श्रीमस्तक पें जडाउ मुकुट दाहिनी ओर झुक्यो । बाँई ओर सीस फूल चंद्रमा, तुर्रा, झोंरा, सुन्दर लर दूहरी । या प्रकार श्रीमस्तक पें छै आभूपन धरें । भाल उपर सुन्दर जडाउ केसरी खोर । तिलक कुंकुम को । नेत्रकमल में आरक्त डोरा । कज्जल सों मिश्रित भोंहे धनुषवत् । नासिका सुआ सारिखी । तामें बेसर जडाउ । दोऊ कानन में मकराकृत कुंडल * पहरे हैं श्रीमुख में बीडा को बरन । तहाँ दंतावली में

---

* "दोउ काननमें छै नग पहरे हैं । मोतिन के चोकडा, करन फूल, झूमका ।" एक प्रति में ऐसा भी पाठ है । किन्तु मुकुट के सिंगार पर कुंडल मुख्य है। इसलिये उपर का पाठ ही मुख्य रखा है ।

मंद मंद मुसक्यान । दोउ कपोलन पर स्याम अलक की शो
ठोड़ी उपर चिबुकाभरन । श्रीकंठमाला गोपमाला, छै मो
की माला पुखराज के मनिन की । चन्दनहार सतलरा को
टिकडा मोटे मोतिन के मिश्रित । ता ऊपर गुन्जा को हा
ता पाछें दोउ भुजान में चन्द्रावलीजी नें छै नग पहराये,
बाजु,दो जोड़ी,नवरतन की । श्रीहस्त में छै गहना, दो पहों
दो सांकलां, दो खडुला, मूंदरी छै धारन किये, तामें नखा
परम शोभा देत है । उंचो वक्षःस्थल । कमर पतरी,तापें धों
सोना की झीनी छै लड़ि की, तामें किंकिनी बजे । लाल स
पर केसरी काछनी; अत्तर सों सुगंधित हैं । ता पाछें चरन
दोऊ नूपुर,दोऊ पायल, दोऊ सांकला, यों छै धरे । और ग
तो बहोत धरे, सो कहाँ ताँइ वरनन करें ? नखचन्दनकी
शोभा है । तहाँ कमलसे चरनारविन्द । अनवट के अस्तपल्ल
ताके नीचे षोडश चरनचिह्न शोभित हैं—१ ध्वजा, २ अं
३ वज्र, ४ कमल, ५ स्वस्तिक, अष्टकोन, ७ उर्द्ध रेख, ८
९ कलस । ये दाहिने चरनारविन्द में । १ गोपद २
३ धनुष, ४ मीन, ५ त्रिकोन, ६ अर्द्धचन्द्र, ७ व्योम ये
चरनारविन्द में ।

ता पाछें श्रीस्वामिनीजी को सिंगार श्रीयमुनाजी ललित
दोउ मिलि के किये । तहाँ श्रीमस्तक ते लें चरनारविन्द त
पुखराज की जोड मोतिन सों लसत धराये । ता पाछे
स्वरूप गादी तकियान पर भेले विराजे । तहाँ बसन्ती सखी
एक जडाऊ आरसी सन्मुख आगे धरी । तहाँ परस्पर हा

वनोद नाना प्रकार के करन लागे । ता पाछे श्रीस्वामिनीजीने
सन्ती सखी कों आज्ञा दीनी, जो तुम श्रीयमुनाजी, श्रीचंद्रा-
लीजी, श्रीललिताजी, श्रीविसाखाजी इन चारचोन को सिंगार
गि ही करिकें हमारे पास पधरावो । ता पाछे छैओ सखीनने
ारचो स्वरूपन कों शृंगार वेगि ही करिके आपुके पास
धराये । ता पाछे वसन्ती सखीने अत्तर समर्पिके रूपा के
की पट्टान पर सोने के छै डबरा बड़े गोपीवल्लभ भोग समर्पें ।
न की बिगत:—

एक डबरा में केशरी मलाई के लडुवा । सो श्रीठाकुरजी
मनोरथ के । दूसरे डबरा में केशरी बरफी, सो
स्वामिनीजी के मनोरथ की । तीसरे डबरा में केशरी पेड़ा,
चन्द्रावली के मनोरथ के । चौथे डबरा में केशरी
रचन, सो श्रीयमुनाजी के मनोरथ के । पाँचमे डबरा में
शरी गुंझीया, सो श्रीललिताजी के मनोरथ की । छटमे
बरा में केशरी सकलपारा, सो श्रीविशाखाजी के मनोरथ के ।

ये छै सामग्री दूधघर की गोपीवल्लभ भोग में सब सखीन
समर्पिकें विनती करी, जो कृपासिंधु अरोगिये । सो ताही
य नाना प्रकार के हास्यविनोद सों अरोगिबे लगे । और
रोगते अरोगते अपने श्रीहस्त में दोउ स्वरूपन ने जितनेक व्रज-
क सामने हते तिन सबनकों महाप्रशाद अपने स्थारमेंसोंदियो ।

ता पाछे वसंती सखी ने बीडा अरोगाय कें विनती करी,
महाराज ! यह मनोरथ तो श्रीस्वामिनीजी को पूरन कियो ।

अवराज ! मेरे मनोरथ की लतानिकुञ्जमें पधारिकें मेरो मनोरथ पूरन करो । सो यह वसन्ती सखी की सुनिकें छैओ स्वरूप लता निकुञ्जमें पधारे । तहाँ वसन्ती सखीनें अति सुगंधित एक बड़ो डोल पुखराजको जडाउ ता ऊपर नाना भाँति के पुष्पलतान सों रचना कियो । सो छैओ स्वरूप देखिकें अति प्रसन्न भये । सो ताही समय जुगल स्वरूपकों डोलमें पधराये । तहाँ एक ओर श्रीचन्द्रावलीजी और श्रीविशाखाजी झुलावें हैं । दूसरी आडी श्रीयमुनाजी, श्रीललिताजी दोनो झुलावें हैं । और रागिनी सब नृत्य गान करे हैं ।

ता पाछें वसंती सखीनें खेलको सब साज साम्हे धरचो जो अबीर, गुलाल, रङ्ग, चोवा, चन्दन, अत्तर,अरगजा आदि अनेक कुमकुमा पिचकारी आदि । सब डोलके सन्मुख धे छोटी बड़ी पिचकारी श्रीहस्त में दिये ।

सो प्रथम एक खेल श्रीयमुनाजी अपने श्रीहस्तसों किये तहां रङ्ग गुलाल बहोंत छिरक्यो ।

ता पाछे नाना प्रकारकी सामग्री डोल में वसंती सखी आरोगाई । पाछे सोनेके थारमें आरती कीनी ।

ता पाछें श्रीचन्द्रावलीजीके मनोरथको दूसरो खेल । त भोग धरें पाछें मोतीकी आरती श्रीचन्द्रावलीजी ने कीनी ।

पाछें तीसरो खेल श्रीललिताजीके मनोरथको । तहाँ भो धरें पाछें मोतीकी आरती ललिताजी किये ।

पाछें चौथो खेल श्रीविशाखाजी के मनोरथ को । तामें नसखडी, दूधघर, नागरी, सब आरोगे ।

तामें मनोरथकी छैओं सामग्री की विगतः—

श्रीठाकुरजी के मनोरथ को मोहनथार । श्रीस्वामिनीजीके नोरथको मेवाती गूंझा । श्रीजमुनाजी के मनोरथको दूध को धरामृत । श्रीचंद्रावलीजीके मनोरथकों घेवर, । श्रीललिताजी मनोरथ को सुखविलास । श्री विशाखाजी के मनोरथ को रमंडा ।

या भाँति छैओ सामग्री आरोगाये ! पाछें होरी खिलाये । होसों छेले भोगमें अवार लागत हैं ।

ता पाछें वसंती सखीने रङ्ग गुलाल, चोवा,बहोत छिरकि एक डोल नवीन रचना करिकें गायो । सो ताही कीर्तन के नुसार एक डोल कृष्णदासजीने गायाँ है । सो डोलः—

राग सारङ्ग

ल झूलत हैं पिय प्यारी । नंदनंदन वृषभानु दुलारी ।१।
मल नैन पर केसरि डारी ।अवीर गुलाल करी अंधियारी।२।
लत श्याम झुलावति नारी । हंसहंसि देति परस्पर गारी।३।
वति गीत दै दै कर तारी । वाजत वेनु परम रूचिकारी ।४।
ज लगी तन तनसुख सारी । खेल मच्यो वृन्दावन भारी ।५।
सक सिरोमनि कुंजविहारी ।"कृष्णदास"प्रभु गिरिधरवारी ।

भावप्रकाश*—तहां कोई सन्देह करें जो यह डोल ष्णदास कृत हैं । तहां कहत हैं, जो अष्टसखी को

---

* १६४२ की प्रति में सर्वत्र भावप्रकाश प्राप्त नही होता है ।

प्रागट्य अष्टसखा हैं। सो जो लीला निकुंजकी देखे हैं सो बाहर वरनन करत हैं ! तातें बाहर कृष्णदास ने अनुभव करि के गायो। जो ललिताजी को प्रागट्य कृष्णदास को है। सो उनकी वार्ता के भावमें कहि आये हैं। ऐसे ही और सखान को हू जाननो।

सो या भांति डोल भूले हैं, तब ताही समें ग्रीष्म सखीनें दडौत, विनती करी। जो कृपानाथ ! मेरी ग्रीष्म निकुंजनमें पधारो। ताही समें छैओं स्वरूप डोल विजय करिकें ग्रीष्म निकुंजमें पधारे। सो ग्रीष्म निकुंज की शोभा कैसी देखी ? जो–मानो, शीतल सुगन्ध छाय रही है। तहाँ पन्नाकी जडाऊ चित्रसारी विचित्र बनी है। तहाँ श्रीयमुनाजी की रतन जटित सीढीन ऊपर जमुनाजलके तरंगनकी लहर देखि, छैओं स्वरूप श्रीयमुनाजी में पधारिकें विहार करन लागे। ता पाछें ग्रीष्म सखीनें जो वस्त्र डोलके रंग के पहिराये हते, सो सब बडे कराय कैं ता पाछे दूसरे हो रङ्गके कोमल वस्त्र मिट्टीके अतर सों लसत छैओं स्वरूपन को अंगीकार कराये। और पन्ना मोतीन के आभरन को जोड रुचि अनुसार धराये। ता पाछें ग्रीष्म सखीने छैओं स्वरूपनकों भोजन घर में पधराय कैं राजभोग समर्पे। सो राजभोग की त्यारी कैसी ? जो सामग्री को पार नांहि। सखड़ी, अनसखडी, दूधघर, नागरी आदि जितनी सामग्री करिवेकी रीति हैं सो सब ललिताजी की आज्ञा सों ग्रीष्म सखीने

सब व्रजभक्तनकों सङ्ग ले कैं करी। ता पाछें ग्रीष्म सखीने मनोरथ की सखड़ी में सें सामग्री सन्मुख भोग धरी। ताकी विगत:—

श्री ठाकुरजी के मनोरथ को मेवाभात केसरीया। और दूसरो बासोंदीभात श्री स्वामिनीजी के मनोरथ को। तीसरो सिखरनभात श्रीजमुनाजी के मनोरथ को। चौथो सुफेदभात श्रीचंद्रावली के मनोरथ को। पांचमो दही भात श्रीललिताजी के मनोरथ को। छठमो खट्टोभात श्रीविसाखाजी के मनोरथ को

या भाँति छैओ भात ग्रीष्म सखीनें सोने के थार में भरिभरि कैं साम्हें धरे। और सामग्री को तो पार नांहि। जो छप्पनभोग तें हू अधिकि सामग्री राज भोग में ग्रीष्म सखीने अरोगाई।

और श्रीभागवत में चारि प्रकार की सामग्री कहे हैं जो भक्ष्य, भोज्य, चोस्य, लेह। सो या चारों प्रकार की सब सामग्री श्रीललिताजी के मनोरथ में श्रीठाकुरजी आरोगे। ता पाछें ग्रीष्म सखीने छैओं झारी सोने की जमुनाजलसों भरिकैं पधराई। पाछें नाना भांति हास्य विनोद सों श्रीठाकुरजी आपु आरोगे श्रीठाकुरजी ने श्रीहस्त सों महाप्रसाद सब व्रजभक्तनकों लिवाये। तापाछें ग्रीष्म सखीने विनती करी, जो महाराज ! मेरी पुष्प निकुंज में पधारो। मेरी फूल मण्डली को मनोर्थ हैं। सो विनती ग्रीष्म सखी की सुनि

कैं पुष्प निकुंज में पधारे। तहाँ पुष्प निकुंजकी चित्रसारी में शोभा देखिकें फूलन के गादी तकियान के उपर छैंओं स्वरूप बिराजे। तहाँ फूलन की चित्रसारी की अद्भुत सोभा देखी ? जो चारो आडी चित्रसारी के गुलाब जलकें फुहारे चलि रहे हैं। और नाना भाँति के पुष्पन की सुगंध छाय रही हैं। ता पाछे ग्रीष्म सखीनें एक सोनाकी चोकी ऊपर एक सोना के थार में छै डबरान में दूधघरकी शीतल सामग्री भोग धरी। ताकी विगत:-

एक डबरा में तो वासोंदी श्रीस्वामिनिजी के मनोर्थ की। एक डबरा में मिश्रीको पना सो श्रीठाकुरजी के मनोर्थको। एक डबरामें मलाई सो श्रीजमुनाजी के मनोर्थकी। एक डबरामें शिखरन सो श्रीचन्द्रावली के मनोर्थकी। एक डबरामें दूध सो श्रीललिताजी के मनोर्थको। एफ डबरा में सलोंनी छाछ सो श्रीबिसाखाजी के मनोर्थ की।

या भाँति छैओन के मनोर्थ के छे डबरान में तें सोने के चमचान सों रंचक रंचक आरोगे। ता पाछें ग्रीष्म सखीनें छैओं स्वरूपनकों बीरी अरोगाई। ता पाछें ग्रीष्म सखी नें श्रीठाकुरजी श्रीस्वामिनीजीके मुखारविद के दरशन करिकैं श्रीठाकुरजी के मनकी जानी। जो-आपुके मनमें पोढिवे की इच्छा हैं। ताही समें ग्रीष्मसखीनें तहाँ फूलनकी चित्रसारी के भीतर एक तिवारी फूलन की अद्भुत रचना करिकें, फूलनकी सिज्या तकिया गेंदुआ आदि सब सिद्ध करे। ता पाछें

ग्रीष्म सखीनें अतर समर्पि कैं चोपड़ बिछाय के अनोसर किये। ता समें को एक कीर्तन मैंने (चतुर्भुजदासनें) गायो। सो कीर्तन।

राग सारङ्ग—

फूलनकी मंडली मनोहर बैठे जहाँ रसिक पियप्यारी।
सोभित सबैं साज नाना विधिकैं फूलनके भवन परम रुचिकारी१
फूलनके खंभ फूलनकी चोखंडी फूलन बनी सुदेस तिवारी।
फूलन के भूमिका फूलन के झरोखा फूलनके छजे छबिभारी।२।
सघनफूल चहूं ओर कंगुरा फूलन बन्दनवार सँवारी।
फूलनके कलसा अति सोभित फूलन रची बिचित्र चित्रसारी ३
फूलन की सेज गेंदुआ तकिया फूलन की माला मनुहारी।
चतुर्भुज प्रभु फूले राधा उर रस फूले श्रीगोवर्धनधारी।४।

ता पाछें दस घरी दिन पाछेलो रह्यो ताही समें वरषा सखी फूलन की चित्रसारी के साम्हें आयकें अद्भुत बीन बजाय कें विनती करी, जो-राज ! मेरी वरषा निकुंज में पधारिये। ताही समें ग्रीष्म सखीनें चित्रसारीके किंवार खोले। तहाँ छैओं स्वरूप चोपड़ खेलें हैं। श्रीस्वामिनीजी की आडी श्रीजमुनाजी, श्रीललिताजी और श्रीठाकुरजी की आडी श्रीचन्द्रावलीजी श्रीविसाखाजी। और श्रीठाकुरजी श्रीस्वामिनीजी दोऊ श्रीहस्त सों पासा जड़ाऊ डारें हैं। सो तब वरखा सखी ने फेरि विनती कीनी, जो-राज! मेरी वरखा निकुंज में पधारो। इतनी बिनती सुनिकैं छैओं स्वरूप प्रसन्न होय कैं वरखा निकुंज में पधारे। सो वरखा

निकुंज की अद्भुत अलौकिक शोभा देखी, जो-मानिक के जडाऊ की सब चित्रसारी रची हैं। ताके भीतर रेशम के गादी तकिया हैं । सो ताके ऊपर छैओं स्वरूप बिराजे। ता पाछें बरषा सखीने उत्थापन भोग भली भाँति सों समर्प्यो। तहाँ नाना प्रकार के फूल और फूलन की सामग्री आरोगाई। तहाँ छै सामग्री मनोरथ की, ताकी बिगत:—

जो श्रीठाकुरजी के मनोरथ के एक थारमें मधुराफल । और श्रीस्वामिनीजी के मनोरथ की एक थार में आमकी बरफी और श्रीयमुनाजी के मनोरथ की एक थार में फालसान की बरफी। श्रीचन्द्रावलीजी के मनोरथ को एक थार में गिरी की बरफी। और श्रीललिताजी के मनोरथ को एक थार में खरबूजा को मगद। श्रीविसाखा के मनोरथ के एक थारमें जिमींकंद के लडुवा।

सो या भाँतिसों सामग्री तो बहोत आरोगे परि यहाँ संक्षेप सों कहे हैं। ता पाछें बरषा सखी ने बीरी आरोगाई। पाछें श्रीठाकुरजी श्रीस्वामिनीजी कों दूसरो सिंगार धरायो। तहाँ कसूमल चूनरी के वस्त्र गोटा किनारी के पहराये। और मानिक की जोड नखतें सिख लों भली भाँति सों धराई। तापाछें बरखा सखीने बिनती करी,जो-कृपानाथ! मेरो मनोरथ हिंडोरा झूलायवे को है। सो मेरी पुष्पलता निकुंज की चित्रसारी में पधारो। ताही समें छैओं स्वरूप हिंडोरा को मनोर्थ सुनिकें बडी प्रीति सों पधारे। तहाँ चित्रसारी के भीतर

एक मानिक के हिंडोरा उपर पुष्पन की अद्भुत रचना करी हैं। और नाना प्रकार के फूलन सों हिंडोरा छाय रह्यो है। और सन्मुख हिंडोरा के श्रीजमुनाजी तरंग सहित बहे हैं। और चारों आडी सों बादर झुक रह्यो है। और बादर घनघोरे हैं। बिजली चमके हैं। और मन्द मन्द फुहार परति हैं।

सों तहां श्रीठाकुरजी श्रीस्वामिनीजी दोऊ स्वरूपनको बरखा सखीने हिंडोरा के भीतर पधराये। और हिंडोराके एक आडी श्रीजमुनाजी श्रीललिताजी झुलावें हैं। और दूसरी आडी श्रीचन्द्रावलीजी श्रीविसाखाजी झुलावें हैं। और सब सुरन सों रागरागिनी अपनो समो साधे हैं। और बरखा सखी सों आदि लें सब सखी पंखा करति हैं।

पाछें बरखा सखी ने नाना भाँतिकी सामग्री हिंडोरा में आरोगाई। तहां मनोरथ की छै सामग्री कहत हैं—

बादामपाक श्रीठाकुरजी के मनोर्थको। पिस्तापाक श्रीस्वामिनीजी के मनोर्थको। चिरोंजीपाक श्रीजमुनाजी के मनोर्थको। गिरीपाक श्रीचन्द्रावलीजी के मनोर्थको। बीजपाक श्रीललिताजी के मनोर्थको। मखानापाक श्रीविसाखाजी के मनोर्थको।

सो या भांति सामग्री आरोगाई। पाछें बरखा सखीने नाना भांति के हिंडोरा झुलाये। नाना प्रकार के हिंडोरा गाये। ताहीं समें को अनुभव करि के गोविन्दस्वामी ने एक हिंडोरा गयो:-

—राग मलार—

राधा मोहन झूलत सुरङ्ग हिंडोरें ।
बरनबरन की चूनरि पहरें ब्रज बधू चहुँ ओरें ॥१॥
राग मलार अलापत सप्तसुरन तीन ग्राम जोरें ।
मदनमोहन जू की या छबि ऊपर ‘‘गोविंद’’ बलि तृन तोरें ॥२॥

ता पाछैं सायंकाल को समय भयो । तब वाही समैं शरद सखीने आयकैं बिनती कीनी, जो-राज ! मेरी शरद निकुंज में पधारो। ताही समें श्रीठाकुरजी हिंडोरा विजय करिके सब ब्रज भक्तन सहित शरद निकुंजमें पधारे । सो शरद निकुंजकी कैसी रचना करी है? जो-हीरा की जटित सब चित्रसारी, तामें रतनमय दीपक प्रकासित हैं । और चन्द्रकाँत मनि सहस्त्र चंद्रमाकी प्रकाश समानसो, श्रीठाकुरजी ने धर्यो है । पाछें शरद सखीने छैओ स्वरुपन कों चित्रसारी के भीतर गादी तकियान के ऊपर पधराये । पाछैं शरद सखीने सोनाके थार में मोती की संध्या आरती उतारी । ता पाछे शरद सैन भोग में नाना प्रकार की सामग्री सखडी अनसखडी सब तथा शरदके उत्सव के मनोरथकी सामग्री धरी । ताकी विगतः-

मोहनथार श्रीठाकुरजी के मनोर्थको । मगद के लड्डवा श्रीस्वामिनीजी मनोर्थ के । बासोंदी श्रीयमुनाजी के मनोर्थ की । चन्द्रकला श्रीचन्द्रावलीजीके मनोर्थ की । दूधपाक श्रीललिताजी के मनोर्थ को । फेनी श्री विसाखा जी के मनोर्थ की ।

या भांति छैओं सामिग्री मनोर्थकी श्वेत रुपा के थारनमें भरिभरिके साम्हें पधराये । पाछैं छैओं झारी सोनेकी जमुना जलसों भरिकैं पधराई ।

ता पाछें शरद सखीने बहुत भांति मनुहार करिकें सैनभोग अरोगाये । पाछें आचमन कराय बीरो सुगन्धी सहित अरोगाई । ताही समें शरद सखीने विनती करी, जो मेरी रासकी विनती हैं । सो पहले आपु दोउ स्वरुप ने आज्ञा करी ही जो तुम्हारी चित्रसारी में हम रास करेंगे सो मैंने सुधि कराई हैं । इतनी विनती शरद सखी की सुनि कैं श्री स्वामिनी जी मुसिकाय कैं आज्ञा किये, जो-हां सखी ! तैयारी करो । इतनी सुनिकैं शरद सखी प्रसन्न होय कैं अपनी निकुंज की भीतर सों बड़ी बड़ी गांठि वस्त्रनकी सखीन सों लिवाय कैं लाई । सो आभनरकी पेटी बंटा व्रजभक्त के हाथ पधराय लाई । और आरसी,कांगसो:अत्तर फूलेल चोवा,चन्दन,काजर, कुंकुम टीकी आदि जितनी रासकी उपयोगी वस्तु हैं सो सब शरद सखीने करिकैं दोउ सरुपनसों विनती करी, जो सब त्यारी सिद्ध है ।

ता पाछें श्री स्वामिनीजीने ठाकुरजी सों कह्यो, जो-प्रान-प्यारे ! अब रासकी पोषाक पहिरो । ताही समें छैओं स्वरुप गादीतकियान सों उठिकैं सिंगार भवन मैं पधारे।सोनाकी चौकी ऊपर विराजे ।

सो तब शरद सखीने कही, महाराज ! हिंडोरा की पोषाक बड़ी करिये । ताहीसमें ललिताजी और वसंतो सखी दोउ श्री-

स्वामिनीजी के दोउ बाजू ठाढे व्है नाना भांति के सिंगार कों हैं। और श्रीविसाखाजी और शरद सखी दोउ श्रीठाकुरजी के सिङ्गारकी परचारगी करें हैं। और श्रीचन्द्रवलीजी के पास सिसरि सखी बरषा सखी ये दोउ परचारगी करें हैं। और श्रीयमुनाजी के पास ग्रीष्म तथा हेमन्त सखी परचारगी करें हैं।

सो या भाँति चारों स्वरुप को सिङ्गार आठो सखीन ने मिलिकें नखतें सिख तांइ भली भाति सों करे। ताकी शोभा कहां ताँई कहें। जो श्रीठाकुरजी श्रीस्वामिनीजी दोउ स्वरू जडाउ चौकी ऊपर भेले विराजे। और श्रीठाकुरजी की दाहिनी ओर श्री यमुनाजी सिङ्गार करिकें विराजें हैं। और श्रीस्वामिनीजी के पास श्रीचँन्द्रालीजी सिङ्गार करिकैं विराजे हैं। सो चारयो स्वरूप को एक सो सिंगार हैं। सुफेद जरी कोमल वस्त्र धरे हैं। और हीरा की जडाउ मोती मिश्रित नख सों सिख तांई पहेरे हैं। सो आजुको सिंगार देखि के दामिनी लजायमान होतहैं। तहां श्रीठाकुरजीने मुकुट काछिनी को सिंगार कियो है।

पाछें श्रीठाकुरजी शरद सखी सों आज्ञा किये, जो तुम आठों सखी तथा सब व्रजभक्त तथा छत्तीसों रागिनी सब वेगि सिंगार करो। जरी के वस्त्र तस्त्र तथा हीन मोतिन के गहना नख तें सिख ताई पहिरो। इतनी आज्ञा सुनिकें शरद सखी मुसिक्याय कैं कहे, जो-आज्ञा! सो ताही समें शरद सखीने सब सखीन सों कह्यो, जो-तुम सब कृपा करिकें बेगि

बेगि अपनो सिंगार करो। तब वाही समय सब गोपीजन प्रसन्न होय कैं अपुनो अपुनो सिंगार किये।

सो गोपीजन कैसे हैं? जो-जिनकें श्री अङ्गमें सों गुलाब के फूलनकी सी सुगंध आवत हैं। ता पाछें शरद सखीनें अपुनो तथा सब व्रजभक्तनको सिंगार करिकें,आय दंडोत किये। ताही समें श्रीठाकुरजी शरद सखी सों आज्ञा किये,जो—तुम्हारो अब कहा मनोरथ हैं? ताही समें शरद सखी प्रसन्न होय कैं कह्यो,जो-मेरी पुष्पलता निकुंज में रासस्थली के भीतर पधारो।

ताही समें श्रीठाकुरजी श्रीस्वामिनीजीको श्रीहस्त पकरि कैं आगें पधारें। पाछें श्रीयमुनाजी,श्रीचन्द्रावलीजी आदि सबनकों शरद सखी पधराइ लाई,ता पाछें श्रीठाकुरजी ने श्रीस्वामिनीजी कों पुष्पलता निकुंज की शोभा दिखाई। सो कैसी अलौकिक शोभा है? जो चारों आड़ी नाना प्रकार की द्रुमवेलीनकी लतानकी हरियाली की सुगंध छाय रही हैं। और छैओं ऋतुनके पुष्प रासोत्सव जानि कें लतान के बीच बीच खिले हैं। ऐसी पुष्पलता निकुंज की शोभा देखि कें रासस्थली के भीतर पधारे। सो रासस्थली कैसी अद्भुत अलौकिक बनी हैं? जो-जाकी शोभा सब कहवे में नांही आवे हैं। जो गोलचन्द्राकार एक बंगला शरद सखीने हीरानके जडाऊ को, बहोत विस्तार में रचना किये हैं। ताके वीच वीच चन्द्रकान्त मनि टांगी हैं। सो वे चन्द्रकांत मनिन को उजियारो कैसो है? जो—एक मनिको एक सहस्र चन्द्रमाको सो प्रकाश होय रह्यो हैं।

भावप्रकाश—सो काहेतें ? जो–श्रीगोकुलचन्द्रमा यहां रास क
तासों लौकिक चन्द्रमा की तो यहां आइवेकी गम्य नांही है।

और रासमंडल के भीतर जरीको चन्दौवा बाँ
है। सो तामें मोतिनकी झालरि की अति शोभा है। मख
के गद्दान की बिछायत बिछि रही है। ताके ऊपर कारचोब
गादीतकियान के ऊपर छैओं स्वरूप बिराजे। ता पाछें श
सखीनें एक अतर की जडाऊ पेटी खोलि कें साम्हें ध
तामें छै शीशी अतर की छैओं स्वरूपन के मनोरथ की सम
ताकी विगतः—

श्रीठाकुरजीके मनोरथको केवराको अतर, । श्रीस्वामिन
के मनोरथ की केसरी गुलाब को अतर । श्रीजमुनाजी
मनोरथको केतकी को अतर । श्रीचन्द्रावलिजी के मनोरथ
सुफेद गुलाबको अतर । श्रीललिताजी के मनोरथको अम्ब
अतर । और श्रीविसाखाजी के मनोरथको मोतिया को।

सो इन छैओं शीसीन में सो श्रीठाकुरजी नें श्रीहस्त
श्रीस्वामिनीजी के श्रीअङ्ग में समर्प्यो । पाछें श्रीस्वामिन
नें श्रीजमुनाजी, श्रीचन्द्रावलीजी कों अतर लगायो । प
श्रीजमुनाजी, श्रीचंद्रावलीजी ने श्रीठाकुरजी के श्रीहस्त
लेकैं श्रीठाकुरजीके कपोलन सों लगायो । पाछें श्रीठाकुर
श्रीललिताजी,श्रीविशाखाजी आदि सब व्रजभक्तनकों एकएक
बुलाय बुलाय कैं सबन को अपने श्रीहस्तसों चोलीनसों,कपो

सों लगाये। तापाछें शरद सखी नें सोनाके जडाउ नूपुर चारों स्वरूपन कों पहिराये । और सोनाके घूंघरु सब सखीन कों पहिराये।

ता पाछें श्रीठाकुरजीने, श्रीस्वामिनीजी सों कही, हे रासेश्वरी ! अब रास प्रगट कीजे। सो ताही समें श्रीस्वामिनीजी नें श्रीजमुनाजी श्रीचंद्रावलिजी सों कह्यों, जो-अब रास कौन भाँति प्रगट कीजे ? ताही समय दोनों स्वरूपनने कह्यो,जो-हे प्रानप्यारी ! हम तो तुम्हारी आज्ञाकारी हैं। जो आजु को मनोरथ तो आपुकोही हैं। जैसे आपुकी आज्ञा होय जैसे मण्डली करें। तब श्रीस्वामिनीजी श्रीजमुनाजी सों आज्ञा किये जो मैंने एक बात सुनी है। जो इनने एक समें राधा सहचरी के सङ्ग प्रथम रास कियो हो । तहां गोपीनकों छोडिकें अन्तरध्यान होइकैं पाछें राधा सहचरी को बनमें इकेली छोडि गये। इतनी बात सुनिकें श्रीजमुनाजी कही,जो-प्यारी ! हमनेहू सुनी हैं। तापाछे श्रीस्वामिनीजीने सब व्रजभक्तन सों बुलाय कैं कह्यो जो तुम हम कहे सो करो। हम रासमण्डली की रचना करे हैं। तामें सब मण्डलीन में तुम दो दो गोपी एक एक कृष्ण के दोऊ बाजू गाढे करिकैं श्रीहस्तसों छोडियो नाही ।

ता पाछें श्रीठाकुरजी श्रीस्वामिनीजी दोऊ स्वरूपन की दृष्टि फूलन की आडी गई। ताही समें नाना भांति के फूल सब वृक्षनमें सों आपके सामही परवे लगे। ताही समें श्रीठाकुरजी शरद सखी सों आज्ञा किये,जो तुम पुष्पन की माला लतान सों

मिश्रित वेगि अंगीकार कराओ । तब शरद सखीने बीरी अ
गाइ कें विनती करी, जो--अब रास प्रगट कीजिये । ताही
श्रीठाकुरजीने छत्तीसों रागिनीन कों बुलाइके आज्ञा करी.जो-
छत्तीसों बाजे रास उपयोगीहैं सो मधुर सुरसों बजाओ और
या समेंकी छै रागिनी जो हो सो नृत्यगान करो सो इतनी अ
श्रीठाकुरजी की सुनि कैं सब रागिनी नृत्यगान करिवे ल
सो श्रीठाकुरजी गान सुनिकैं सबकी बडाइ करी तब रंचक
नृत्य भये पाछे श्रीस्वामिनीजीने श्रीठाकुरजी सों कह्यो, जो-
प्रिय, प्रानप्यारे ! जो अब आपु नृत्य कीजिये । ताही
श्रीठाकुरजी श्रीस्वामिनीजी की आज्ञा लै इकेलें नाना प्रक
सङ्गीत आदि सों नृत्य किये । तब श्रीस्वामिनीजीने बहोत
करी । पाछे सब व्रजभक्तननें पुष्पनकी श्रीठाकुरजी के
बरसा बरसाई । ता पाछें श्रीठाकुरजीनें श्रीस्वामिनीज
कह्यो, हे प्यारी । अब आपु भी पधारो । ताही समें श्रीरासे
श्रीजमुनाजी, श्रीचन्द्रावलीजी, दोऊन कों संग ले
पधारे । तब श्रीस्वामिनी आपु कहें, जो—प्यारे ! अब
भाँति मंडली प्रगट करिये ? तब यह सुनिकें श्रीठाकुरजी
कहें, जो हे प्यारी ! आज्ञा होय तो अष्ट दल कमलकी
करें और आज्ञा होय तो खट दल कमलकी रचना करें
श्रीकिशोरीजी कहें, जो प्यारे ! मेरो मनोरथ तो खटअ
है । सो अब खटदल कमलकी रचना वेगि करो । तब
समें श्रीठाकुरजी और श्रीस्वामिनीजी दोउ स्वरूपने मि
खटदल कमल की रचना करी सो ताकी विगत:—

प्रथम अष्टकृष्ण षोडश स्वामिनी । दूसरे दल में षोडश कृष्ण बत्तीस गोपी, तीसरे दलमें शत कृष्ण जुगल शत गोपी, चौथे दलमें सहस्त्र कृष्ण जुगल सहस्त्र गोपी । पंचम दलमें लक्ष कृष्ण जुगल लक्ष गोपी । षष्ठ दलमें कोटि कृष्ण जुगल कोटि गोपी ।

या भाँति खटदल की रचना करी । तहाँ पाँचो दलमें द्वै द्वै गोपी बीच एक एक कृष्ण भुज सों भुज जोरि कैं विराजे । तिनके भीतर निजमंडली में आठ कृष्ण सोरह स्वामिनी । ये खटदल की रचना की विगत कहत हैं:—

जो सात स्वरूप श्रीकृष्ण के तिनके एक एक के दोय दोय बाजुबंद द्वयद्वय स्वरूप श्रीस्वामिनीजी के भुज सों भुज जोरें बीचमें करणिका के उपर श्रीगोवर्धनधर नंदकिशोर बिराजे । जिनके वामभाग श्रीस्वामिनी और दक्षिन भाग श्रीजमुनाजी श्रीहस्त सों हस्त जोरें । या भाँति खटदल कमल करणिका सहित रासमंडली की रचना करे । सो वाही समें रासमंडली की कैसी अलौकिक रचना भइ । सौ कहिवे कों पार नांहीं । और शरद की रात की चांदनी अत्यंत शोभा देति हैं । और ब्रजनारी के मध्य श्रीस्वामिनीजी अत्यंत शोभा देत हैं । तापाछें श्रीठाकुरजी श्रीस्वामिनीजी सब स्वरूप मिलि नृत्य करन लागे । तहाँ नानाभांतिके नृत्य किये । तहां एक शोभा अद्भुत प्रगट भई । जो श्रीठाकुरजी श्रीस्वामिनीजीके रासमण्डलमें श्रीस्वामिनीजी के मुखारबिंद को प्रतिबिंब श्रीठाकुरजी के मुखारबिन्द में

परत है । तब श्रीठाकुरजी को मुखारविंद हरित होत है । जै नीलकांति मनीको प्रकाश सुवरन के सनमुख जाय तो मरकत मनीको सो दरशन होय । जैसे यहाँ नीलकांति मनी श्रीठाकुरजी को श्रीअङ्ग और सुवरनवत् श्रीस्वामिनीजीको श्रीअङ्ग । सो परस्प प्रतिबिंब परत है । तब श्रीठाकुरजी को मुखारविंद हरित होत है । ताही समय व्रजभक्तनने एक नयो नाम प्रगट कियो । जो "हरिकृष्ण" । ऐसी अद्भुत शोभा रासको देखिकैं परमानन्द दासजीने एक कीर्तन कह्यो, सो कीर्तनः-

* राग मालव *

व्रजवनिता मध्य रसिक राधिका बनी शरद की राति हो ।
निरतत ततथेई गिरधरनागर गौरस्याम अङ्ग कांति हो ॥१
द्वै द्वै गोपी बिच बिच माधो बनी अनूपम भांति हो ।
जयजय शब्द उचारत सुरमुनि कुसुमन बरख अघाति हो ॥२
निरखि थक्यो शशि आयो शीश पर क्यों हूं न होत प्रभात हो
"परमानंद" मिले यह अवसर बनी है आज की बात हो ॥३

ता पाछें हेमंत सखी ने दंडवत् विनती करी, जो-राज ! मेरे हेमंत निकुंज में पधारिये । ताही समें शरद सखी आज्ञा मांगि कैं रास की आरती किये ।

पाछें छैओं स्वरूप व्रजभक्तन सहित हेमंत निकुंज पधारे । सो श्रीजमुनाजी के मनोरथकी हेमंत निकुंज । सं कैसी अद्भुत शोभा देखी ?—जो चित्रसारी मीनाकी लहेरीयाकी अद्भुत रचना करी हैं । तहाँ कारचोबीके गादी तकिया

पर छैओं स्वरुप विराजे । पाछे हेमन्त सखीने छैओं स्वरूप के स के वस्त्र आभरन सब बड़े करिकें दूसरे अतलसके पचरङ्ग के राये । और मीनाके आभरनके जोड़ रुचि अनुसार अङ्गीकार राये । सो श्रीयमुनाजीने गुप्त उत्सव मानि कें कुनवारे में नाना ाँतिकी पुष्ट और मिष्ट सामग्री अरोगाई । तब श्रीठाकुरजी हेमंत खी सों आज्ञा किये, जो—कछू सलोनी सामग्री परोसीये । सो ही समे हेमंत सखीने छै प्रकार के फडफडीया घृतमे तलिके रोसे । छैओं स्वरूपन के मनोरथ के । ताकी विगतः—

जो श्रीठाकुरजी मनोरथ के बादाम के फडफडीया । ार श्रीस्वामिनिजी के मनोरथ के पिस्ता के । श्रीयमुनाजी के नोरथ के मूंगकी दारिके । श्रीचन्द्रावलीजी के मनोरथ के खाने के श्रीललिताजी के मनोरथ के चनाकी दारिके । विशाखाजी के मनोरथ के आखे चनान के ।

या भाँति छैओं सामग्री सलौनी अरोगे । पाछे आचमन राय बीरी आरोगाये । ये श्रीयमुनाजी को गुप्त मनोरथ हैं । हाँ श्रीयमुनाजीने गुप्त शृङ्गार कियो है । जो श्रीठाकुरजी ों श्रीस्वामिनीजी के वस्त्र आभरन पहराये, नख तें सिखताईं, स्वामिनीजी कों श्रीठाकुरजी के वस्त्र आभरन नखतें सिखाताँई राये । ता समेंकी सोभा उपमा कछू कहिवे में आवे नांही । बीचमें श्रीस्वामिनीजी मुकुट काछनी धराय कें मुरली बजामें । बांई ओरकों श्रीठाकुरजी नवदुलहन बनि मुसिक्यामें

हैं । दाईं वाजू श्रीयमुनाजी सिङ्गार किये बिराजे हैं । ये स्याम
स्याम के दरशन करिकें सब सखी मुसिक्याय कें तृन तो
हैं । ताई समें हेमंत सखी दंडोत बिनती करी, जो राज !
पुष्पलता निकुंज में पधारिये । मेरो जागरन की मनोरथ सि
कीजिये । ताई समें सब स्वरूप पुष्पलता निकुंज में पधारें त
पुष्पलता निकुंज में एक रङ्ग महल मीना को जडाउ अद्
रचना कियो है । ताके भीतर मीनाके जडाऊ की एक सिज
अद्भुत गादी तकिया गेंदुआ सहित बिछाई । ताके उ
श्रीठाकुरजी श्रीस्वामिनीजी दोऊ स्वरूप बिराजें । तहाँ सिज
के पास सोना की चौकीन उपर चारों स्वरूप बिरा
श्रीजमुनाजी, श्रीचन्द्रावलीजी, श्रीललिताजी, श्रीविसाखा
और सब व्रजभक्त सनमुख ठाडे हैं । ताही समें श्रीठाकुरजी
आज्ञा करी, जो प्यारी ! अब कहा आज्ञा है ? वाही
हेमन्त सखी ने एक सोना के थार में सुगन्धित बीरी सबन
मनोरथ की सनमुख धरी । ताकी विगत:-

जो पान श्रीठाकुरजी के मनोरथ के । इलायची श्रीस्वामि
के मनोरथ को । कत्था सुगन्धी श्रीजमुनाजी के मनोरथ
मोती को चूना श्रीचन्द्रावलीजी के मनोरथ को ।
श्रीललिताजी के मनोरथ को । सुपारी श्रीविशाखाजी
मनोरथ की ।

या प्रकार की बीरी दोउ स्वरूप ने आरोगी ।
श्रीठाकुरजीने अपने श्रीहस्त सों श्रीजमुनाजी श्रीचन्द्रावल

आदि सब व्रजभक्त कों दिये । और श्रीजमुनाजीसों आज्ञा किये, जों-हे महारानी जू ! तुम अपनी अपनी निकुंजमें अपनी अपनी सिज्या ऊपर रंचक सोय रहों । पाछें सिसिर निकुंज में होरी खेलेंगे । सोतुम वेगि आईयो। ताही समें श्रीजमुनाजी श्रीचन्द्रावलीजी तथा ललिताजी आदि सब जूथ जों रास में हते सो सब अपनी अपनी निकुंजमें अपनी अपनी सिज्या उपर सिङ्गार करि करिकें सोंधो लगाय के पोढे । ताही समें श्रीठाकुरजी ने जितने व्रजभक्तहते तितनेही स्वरूप धरि कें सबनको सिज्याउपर पधारि के सबन के मनोरथ सिद्ध करे ।

और श्रीस्वामिनजी के रङ्ग महलमें सिज्या उपर दोऊ स्वरुप स्यामा स्याम बिराजेहैं । तहाँ श्रीस्वामिनिजी सों कह्यो, अहो प्यारी ! तेरो मुख देखे चन्द्रमाकी कांति हू फीकी लागति हैं । हे प्यारी ! तेरे गले में मीनाकी चौकी रहत है, तिन ठौर मोकों वास दीजे । यह वचन श्रीठाकुरजी ने कह्यो तब श्रीराधे किशोरीजी कंठ लागी । तब दोउ स्वरुपरसबस भये । श्रीमदनमोहनजी कों श्रीस्वामिनीजीने वस किये ।

ता पाछे श्रीस्वामिनीजीने श्रीठाकुरजी सों कह्यो, जो तुम मेरो सिगारवेगि वेगिकरो मेरी सखीजन सब आवेंगी । तासों तुम जैंसो सिंगार होय तैंसो वेगि करो तब । श्रीठाकुरजी नें चोटी गूंथिके वैसोही सिंगार कियो । ता पाछें श्रीठाकुरजी सिज्यासों पधारि कैं रंगमहलके किवाड खोलि दिये । ताही समें श्रीजमुनाजी श्रीचन्द्रावलीजी आदि सबन की सिज्या सों श्रीठाकुरजी

पधारि के फेरि सब स्वरुपन को एक स्वरूप होय कैं श्रीस्वामिनीजी के पास बिराजे ।

भावप्रकाश—ये श्रीठाकुरजी को नित्य को क्रम जानिये, जो प्रातःकाल तें सेन पर्यंत श्रीस्वामिनीजीके पास ही एक स्वरूप तें विराजत हैं। पाछे रात्रिकों पोढती बिरीयां सब गोपीजनन के भेले विराजे हैं। और श्रीस्वामिनीजी तें श्रीठाकुरजी यह बात गुप्त राखे।

ता पाछें श्रीजमुनाजी, श्रीचंद्रावलीजी, श्रीललिताजी आदि सब व्रजभक्त अपनी अपनी निकुंजन सों हेमन्त निकुंज में रङ्ग महल के भीतर आय बिराजे। ताही समें शिशिर सखीने दंडोत विनती करी, जो राज ! मेरी शिशिर निकुंज में पधारिये। ताही समें श्रीठाकुरजी शिशिर सखी कों आज्ञा किये, जो तुम हमारो मुकुट काछनी को सिंगार बेगि करो । ता पाछें शिशिर सखी नें श्रीस्वामिनीजी सों बिनती करी जो—हे लडिलीजू ! आपकी दूसरो सिंगार करिवे की मरजी हैं ? तब श्रीस्वामिनीजी मुसिक्याय कैं शिशिर सखी सों आज्ञा किये, जो—हे सखी ! आज तो मैं यही मुकुट काछनी को सिंगार राखोंगी। तब शिशिर सखी नें श्रीठाकुरजी को मुकुट काछनी को सिंगार दूसरो कियो। रात्रि को त्रिया को सिंगार बड़ो कियो। और जोड मीनाकी तथा बंसी लकुट दोऊ स्वरूपन कों मीनाकी धराई । ता पाछें छैओं स्वरुप सब व्रजभक्तन सहित हेमन्त निकुंज में सों शिशिर निकुंज में पधारे । तहाँ

शिशिर निकुंज की दो चित्रसारी प्रथम कहे हैं। सो तामें पहलें पुष्पलतामय चित्रसारी के सोने के बंगला के भीतर गादी तकियान ऊपर बिराजे। सो ता समें की शोभा कहा कहिये ? जो बीचमें जुगलकृष्ण मुकुट धरें बिराजे हैं ! और एक ओर कों श्रीजमुनाजी, श्रीललिताजी बिराजे हैं। और दूसरी ओर कों श्रीचन्द्रावलीजी, श्रीविसाखाजी बिराजे हैं। ता पाछें शिशिर सखीनें बिनती करी, जो राज ! मेरो होरी खिलायबे को मनोर्थ है। इह विनती सुनिकें दोऊ स्वरूप प्रसन्न होय कें आज्ञा किये जो तुम बेगि होरी खिलावो। ताही समें शिशिर सखीनें बंगला के साम्हें दूसरे गादी तकिया बिछाये। खेलको सब साज दोऊ ओर गादी तकियान के साम्हें मांड्यो।

तहाँ दो डबरा सोना के केशरी गुलाल के दोऊ ओरकों भरिकें धरे । सो श्रीस्वामिनीजी के मनोरथके। और लाल गुलाल के श्रीठाकुरजी के मनोरथके। दोउ ओर चोवा के, दोऊ डबरा सो श्रीजमुनाजीके मनोरथके। और अबीर के दोउ डबरा श्रीचन्द्रावलीजीके मनोरथ के दोऊ ओर। और हरित गुलालके दोउ डबरा श्रीललिताजीके मनोरथ के दोऊ ओर। और स्याम गुलाल के दोउ ड़बरा श्रीविसाखाजी के मनोरथ के दोउ ओर।

और सखीन के मनोरथ के रंग, गुलाल, अतर अरगजा कुमकुम आदि सब धरें ।

ता पाछें शिशिर सखीनें दोय थार सामग्री के भोग धरें। तामें एक में मेवामिश्री के टूक। दूसरे थार में माखन मिश्री।

सो छैओं स्वरूप आरोगे। तापाछैं श्रीठाकुरजी ने अपने श्रीहस्त सों सब ब्रजभक्तन कों महाप्रशाद दिये। तापाछें श्रीठाकुरजी श्रीस्वामिनजी दोऊ स्वरूप गादीं तकियान सों पधारि कें होरी को रास करिवे लागे। और सब रागरागिनी गायवे बजायवे लगीं। तहाँ नानाभांति सों रास करें। तहाँ एक शोभा अद्भुत प्रगट भई। जो श्रीस्वामिनीजी श्रीठाकुरजी को सिंगार आपुनो आपु करे हैं। दोउ स्वरूप रास में बांहजोटी करि नृत्य करत हैं। ता समें सब सखीजन भ्रमित होत हैं। और कोई सखीजन कहत हैं यह श्रीस्वामिनीजी हैं। कोई गोपीजन कहत हैं यह श्रीठाकुरजी हैं। यह स्वामिनिजीने एक सो रंग, रुप, मुद्रा,वे प्रगट कियो हैं तहाँ। गोपीजन के हृदय कोई भ्रम जानि श्रीठाकुरजी श्रीस्वामिनीजी गान करिवे लगे। ता समे को ए कीर्तन श्रीगुसांईजीने गायो हैं। सो कीरतनः—

* राग देसरी *

सखीरी मैं हों नंदकिसोर।
ये बृषभानुदुलारी प्यारी बनी नटवर वर जोर। १।
मैं दधिदान लेत वृन्दावन रोकत हों बरिजोर।
"श्रीविट्ठल"गिरिधरनलाल मैं ये मेरी चित्तचोर।२।

सो या भाँति सों रास कियो। तापाछें दोउ गा तकियान उपर दोऊ स्वरूप आमें साम्हें बिराजे। श्री श्रीस्वामिनीजी के पास श्रीजमुनाजी, श्रीललिताजी दो बाजू बिराजे। और दूसरी गादीपें श्रीठाकुरजी के पा

श्रीचंद्रावलीजी, श्रीविसाखाजी दोऊ बाजू विराजे। ता पाछें सिसिर सखी नें गुलालन के, कुमकुमान के, थार भरि भरिकें साम्हें धरे। और विनती किये जो-राज! आज होरी खेलिये! ताही समें श्रीठाकुरजी सोना की पिचकारी श्रीहस्तमें लैकैं श्रीस्वामिनजी के ऊपर रंग की बरषा बरसाई। दूसरी बाजूतें श्रीस्वामिनीजीने पिचकारी ले श्रीठाकुरजी के ऊपर चलाई। पाछें श्रीजमुनाजी सब सखीन सों आज्ञा किये तुम सब पिचकारी चलाओ। और या आडीसों श्रीचन्द्रावलीजी आज्ञा किये तुम सब पिचकारी चलाओ। ताही समें दोनों आडी सों पिचकारीन की बरसा होन लगी। ता पाछें सब रङ्ग के गुलालन की पोटरी चलिवे लगी और परस्पर चोवाकीअंजली भरिभरि सब छिरकन लागें। या भाँति होरी की शोभा देखिकें सिसिर सखीने श्रीठाकुरजी श्रीस्वामिनीजी सों विनती करी, जो—राज! अब दूसरे वस्त्र धरीये। यह वस्त्र सब रङ्ग में भींजि गये हैं। ताही समें सिसिर सखी नें दूसरे वस्त्र स्याम अतलस रुई के सब स्वरूपनकों धराए। औरनीलम के जडाऊ के गहना रूचिअनुसार धराये। पाछें सब सखीजन श्रीस्वामिनीजी श्रीठाकुरजी कों सङ्ग लैकैं नीलम की जडाऊ चित्रसारी के भीतर सिज्या के ऊपर पधराय। ता पाछें श्रीठाकुरजी सब गोपीजनन सों आज्ञा किये, जो–तुम अपनी अपनी निकुञ्जन में जाय सोओ। प्रातःकाल मङ्गला के समें बेगि आओगे। ता पाछें श्रीठाकुरजी श्रीस्वामिनीजी बीरा आरोगिकें दोऊ स्वरूप भेलें पोढें।

सो याही भाँति नित्य नौतन रासादिलीला नाना प्रका
सों छैंओं निकुञ्जन में श्रीगोवर्द्धनधर सदा सर्वदा करत हैं ।

सो एक दिन शरद निकुञ्ज में हीराके जडाऊ की चित्रसा
के भीतर रास करत श्रीठाकुरजी कों भूतल के दैवी जीवन
सुधि आई । जो ऐसे दैवी जीव बहोत काल सों आसुरी सृष्टि
मिलि रहे हैं । तिनकों भूतल में प्रगट होइकें मैं अंगीका
करूँगो । ताही समें श्रीस्वामिनीजी ने श्रीठाकुरजी के मन
जानी, जो-ये भूतल पैं पधारेंगे । ताही समें दोनों स्वरुपन
मुखारविंद सों विरह की स्वाँस निकसी । ताही स्वाँस को ए
स्वरूप मनोहर सुन्दर आनन्दमय प्रगट भयो । सोई स्व
श्रीवल्लभ श्रीमहाप्रभुजी को जानिए ।

ता पाछें वे स्वरुप प्रगट होय कैं दक्षिण में चंपारण्य वन
अग्निकुंड के भीतर विराजे । सो लक्ष्मणभट्टजी तथा उनकी
इलम्माजी कों गर्भस्राव के समें दरसन भये । सो अद्भुत अल
किक बालक देखे । तिनके दरशन करिकें श्रीलक्ष्मणभट्टजी
अपनी स्त्री सों कह्यो जो ये बालक–तुम गोदि में पधराय ले
तब श्रीइलम्माजीने कह्यो जो अग्निके भीतर ते पधराईवे की
सामर्थ्य नाँही । तब श्रीलक्ष्मणभट्टजी ने कह्यो, तुम अग्नि
विनती करो ।

ता पाछें इलम्माजी ने अग्नि कों दण्डवत् करि विन
कीनी । जो ये बालक हमारो होय तो शीतल होऊ । ता
समें अग्नि शीतल भई । और बालक कों श्रीइलम्माजी

गोदिमें पधराय लिये । ता पाछें श्रीलक्ष्मणभट्टजी- और श्रीइलम्माजी श्रीमहाप्रभुजी कों काशी पधराये । सो कितनेक दिन ताँई श्रीमहाप्रभुजी की बाललीला को सुख अनुभव कियो । पाछें श्रीलक्ष्मणभट्टजी ने श्रीमहाप्रभुजी कों यज्ञोपवित् भली भाँति सो कियो । ता पाछें श्रीमहाप्रभुजी ने चारि वेद षटशास्त्र आदि अङ्गीकार किये ।

ता पाछें श्रीलक्ष्मणभट्टजी बालाजी की जात्रा कों सकुटुम्ब पधारें । तहाँ श्रीलक्ष्मणभट्टजी तो श्रीलक्ष्मणबालाजी के स्वरुप में प्रवेश भये । औरश्रीइल्लाम्माजी कछुक दिन रहि कैं श्रीमदनमोहनजी आपुने श्रीठाकुरजी को पधराय कैं काशी में बिराजें । और श्रीआचार्यजी महाप्रभुजी आपु पृथ्वी परिक्रमा करिवे कों पधारे । तहाँ मारगमें श्रीदामोदरदासजी तथा कृष्णदास मेघन आदि वैष्णवन कों अङ्गीकार किये । और दैवी जीवन को उद्धार किये । और चरित्रतो आपु के अनन्त हैं सो कहाँ ताँई कहिए । परन्तु सूक्ष्मरीति सों खटप्रकार सों कहत हैं —

प्रथम-आपु भूतल में प्रगट होई कैं दैवी जीवनकों ब्रह्मसम्बन्ध कराई कै श्रीनन्दनन्दन पूरन पुरुषोत्तम कों अंगीकार कराये ।

द्वितीय–श्रीमहाप्रभुजी ने श्रीभागवत उपर तिलक रूप श्रीसुबोधिनी करि कैं गूढ अर्थ प्रकाश कियें ।

तृतीय--श्रीआचार्यजी महाप्रभुजी नें तीन बार पृथ्वी परिक्रमा करि कैं सर्व तीर्थ सनाथ किये ।

चतुर्थ-श्रीआचार्यजी महाप्रभुजी ने मायामतको खंडन सर्व देशमें करि कैं भक्तिमार्ग स्थापन किये ।

पंचम-श्रीआचार्यजी महाप्रभुजीने पुष्टिमार्ग रीति सों सेवा करि कैं कलियुग के धर्म सब गुप्त करिकैं, द्वापर के धर्म प्रगट किये ।

षष्टम-श्रीआचार्यजी महाप्रभुजी अपने सेवकनकी महिम दिखाये ! जो भक्ति और मुक्ति शिव ब्रह्मादिकन सों न दीन जाय सो आपुने सेवकन द्वारा दिवाई । जो गदाधरदासजी माधोदासजी कों भक्ति दीनी । और प्रभुदासजीने अही कों मुक्ति दीनी ।

पाछे बहोत जीवने श्रीआचार्यजी महाप्रभुजी के शर आइवेकी विनती कीनी । तब आज्ञा किये, जो तुम श्रीगुसाँईजी अंगीकार करेंगे । ता पाछें कृष्णदास मेघन श्रीआचार्य महाप्रभुजी सों विनती कीनी, जो—कृपान आपुने श्रीगुसाँईजी को नाम लियो ताको कारन कहा ? श्रीआचार्यजी महाप्रभुजीने आज्ञा करी,जो ये उनके जीव है

भावप्रकाश—सो काहें तें जो दैवीजीव सात्विक, राज तामस, निर्गुण इन चारयो सृष्टिमें मिलि रहे हैं । निर्गुण के मुख चौरासी भक्त कों श्रीमहाप्रभुजी ने अंगी किये । और सात्विक, राजस, तामस, इन तीन्यों मिलाय २५२ भये, सो इन तीन्यों जूथनके मुख्य २५२ भक्त श्रीगुसाँईजी अङ्गीकार करेंगे । और जीव तो बहोत शरनि आवे

सो श्रीआचार्यजी महाप्रभुने ८४ वैष्णवन के उपर कृपा करि कैं श्रीठाकुरजी की सेवा पधराय कैं सेवा, विधि सों कराये । तहां नवधा भक्ति श्रीभागवत मै कहे हैं । सो नवधा भक्ति और एक प्रेमलक्षणा भक्ति सो ये दस भक्ति श्रीआचार्यजी महाप्रभु ने अपने एक एक सेवक कों श्रीठाकुरजी की सेवा कराय कैं सिद्ध करी । और विष्णु भगवान ने तो पहले एक एक भक्ति एक एक भक्त कों बड़ी काष्टा सों दीनी हती । सो या प्रकार हैं

१ **श्रवन**—राजा परीक्षित कों, २ **कीर्तन**—शुकदेवजी कों, ३ **स्मरण**—प्रहलादजी कों, ४ **अर्चन**—राजा पृथु कों, ५ **पादसेवन**—श्रीलक्ष्मीजी कों, ६ **वंदन**—अक्रूरजी कों, ७ **दास्य**—हनुमानजी कों, ८ **सख्य**—अर्जुन कों, ९ **निवेदन**—राजा बलि कों ।

यह तो मर्यादा मार्ग में एक एक भक्ति दीनी है । अब यह एतन्मार्ग, सो पुष्टिमार्ग में, श्रीमहाप्रभुजी ने सबन कों दीनी है। सो कहत हैं :—

१ **प्रथम श्रवन**—सो कथा वार्ता सुने बिना वैष्णवन कों रह्यो जाय । २ **द्वितीय कीर्तन**—सो सेवा कीर्तन बिना होइ सके ांही । ३ **तृतीय सुमिरन**—थोडो ओर बहौत पंचाक्षर तथा ष्टाक्षर सुमरन किये बिना वैष्णव महाप्रसाद लेइ सके नांही । ४ **तुर्थ अर्चन**—सो साक्षात् स्नान, सिंगार, प्रभु कों करें हो हैं । ५ **चम पादसेवन**—सो श्रीठाकुरजी अपने माथे पधराये हैं तिनके रणस्पर्श आदि करत हैं । ६ **षष्ठम वंदन**, सो श्रीठाकुरजी के

चरणारविंद में वैष्णव बारम्वार स्तुति और वंदन करे हैं। ७ स
दास्य–सो एतन्मार्ग में वैष्णव सदा दास हैं । **८ अष्टम स**
श्रीठाकुरजी श्रीमहाप्रभुजी तथा श्रीगुसाँईजी के सेवकन सों
भाव सवारी राखत हैं । सो गोविन्द स्वामी तथा गज्जन की
में कहे हैं । कबहू घोडा करत हैं, कबहू गाय करत हैं । ९ न
निवेदन– तो तुलसी दे कैं श्रीठाकुरजी के चरणारविन्द में नि
करावे हैं। और १० **दसम प्रेमलक्षणा** सो श्रीमहाप्रभुजी ने
होय कैं अपने वैष्णवन को दीनी हैं। जो गोपी की भावना र
लीला में तुम्हारी भक्ति पूरन होउ ! सो आशीर्वाद दिये हैं ।
श्रीमहाप्रभुजी परम दयाल हैं।

तापाछें तीसरी आज्ञा महाप्रभुजी जी कों भई,जो तुम ल
में वेगि पधारो । तब श्रीमहाप्रभुजी अपने सेवकन सों अ
कीनी, जो–अब हम लीला निकुंज मैं पधारेंगे। इतनी सुनि
सेवक सब उदास होयवे लगें । और विनती कीनी, जो
कृपानाथ ! आपु के दरशन विना हम कैसे रहेंगे ? तब
प्रसन्न होई आज्ञा किये, जो, मैं खट प्रकार सों दरशन
दउंगो । सो षट प्रकार कहत हैं–

१ प्रथम तो अपने वंश द्वारा, २ द्वितीय बैठक द्व
३ तृतीय श्रीपादुकाजी द्वारा, ४ चतुर्थ चित्र द्वारा
पञ्चम ग्रन्थ द्वारा, ६ षष्टम माला सों । ये खट प्रकार
दरशन देउंगो । और तुम सबन कों ये षट संपत्ति स्वरुप गि

ता पाछें श्रीमहाप्रभुजी ने श्रीगुसाँईजी के हृदे में पुष्टिमार्ग ग्रन्थ तथा अपनो ''अशेष'' स्वरूप (ईश्वर महात्म्य स्वरुप) स्थापन किये । तब श्रीगुसाँईजी बरस १५ के हते ।

तापाछैं श्रीमहाप्रभुजी आपु काशीजी श्रीगङ्गाजी मेंपधारि-कै अग्नि पुंज द्वारा आपु गिरिराज में अपनी बैठक में पधारे । ता पाछें श्रीगुसाँईजी श्रीनाथजी की सेवा वैभव सहित किये ।

और एक समें श्रीगुसाँईजी संवत १६२३ में परदेश पधारे हते । तब श्रीगिरिराजजी सों श्रीनाथजी श्रीमथुराजी सतघरा में श्रीगुसाँईजी के घर पधारे । तहाँ मास ॥ २ ॥ दिन ॥ २२ ॥ तांई श्रीगुसाँईजीके घर विराजे । सो तहाँ नाना प्रकारकी सामग्री बहु बेटीन नें आरोगाई। और होरी खिलाई । पाछें श्रीगुसाँईजी को श्रीगिरिराजजी आईवे को समें भयो ताही दिन श्रीनाथजी गिरिराजजी पधारे ।

तब सब समाचार श्रीनाथजी ने श्रीगुसाँईजी सों कहे । सो श्रीगुसाँईजी सुनि कैं बहोत प्रसन्न भये ।

ता पाछें श्रीगुसाँईजी केतेक दिन पाछें अडेल सों सब कुटुम्ब सहित श्रीमथुराजी पधारे । सो छैओं बालकन को प्रागट्य अडेल को है ।

और संवत १६२७ में श्री मथुराजी सों गोकुल पधारे । तहाँ हवेली तथा एक मन्दिर सिद्ध करायो । ताकी नीम ादवेंद्रदास नें खोदी । ता पाछें सातमे लालजी श्रीधन–

ता पाछें श्रीगुसाँई श्रीविठ्ठलनाथजी श्रीनवनीतप्रियाजी
सैन आरती करिकैं श्रीगोकुलजी तें श्रीमथुराजी ब्रजयात्रा की
कों पधारे । तहाँ प्रथम विश्राँतघाट पें श्रीआचार्य
महाप्रभुजी की बैठक में भोग धरि कैं पाछें श्रीगुसाँ
श्रीयमुनाजी कों भोग धरि कैं नेम लीनो । ता पाछें ब्रज
रासी कोस की प्रदक्षिणा करि कैं जितने तीरथ और स्थल
व्हे गये हते, सो सब आपुन फेरि प्रगट किये । सो श्रीवज्रनाभ
कों प्रागट्य करे तो बहोत काल भयो । तासों फे
नवीन आपुने किये । ता पाछें यात्रा पूरन करिकैं
श्रीगोकुल पधारे । ता पाछें कितनेक दिन ताँई श्री नवनी
प्रियाजीकों सिंगार धरायो । फेरि श्रीगोपालपुर पधारि
श्रीनाथजी कों राजभोग सराय बीरी आरोगाई । पाछें राजभो
आरती करि अपनी बैठक में भोजन करि कैं गादी तकिय
पर बिराजे । नन्ददास आदि भगवदीयन सों वचना
कहे ।

पाछें एक समें श्रीगोकुल में श्रीनवनीतप्रियाजी के मं
में बिराज कैं सातों बालकन कों बुलायकैं आपुने आज्ञा दीन
जो तुम एक एक स्वरूप पधराय कैं न्यारे न्यारे
सिंगार करो । तब श्रीगिरिधरजीने बिनती कीनी, जो राज
आपु जिनके माथे जो स्वरूप पधराय देउगे सो तिनकी
करेंगे । यह सुनिकैं श्रीगुसाँईजी बहोत प्रसन्न भये ।
एक सिंघासन पै सब स्वरूप बिराजत हे । सो श्रीगुसाँ

तथा सातों बालक मिलिकैं सेवा करते । सो गुसाँईजीने न्यारे न्यारे सबनके माथे पधराये ।

भावप्रकाश—सो या प्रकार—श्रीगिरिधरजी के माथे श्रीमथुरेशजी । श्रीगोविंदरायजो के माथे श्री विट्ठलेसरायजी । श्रीबालकृष्णजी के माथे श्री द्वारिकानाथजी । श्रीगोकुलनाथजी के माथे श्रीगोकुलनाथजी श्रीरघुनाथजी के माथे श्रीगोकुलचन्द्रमाजी । श्रीयदुनाथजी के माथे श्रीबालकृष्णजी पधरायवेकी आज्ञा करी ता समें श्री यदुनाथ जी महाराजने विनती करी, जो महाराज ये तो बहोत छोटे स्वरूप है । मेरी तो बड़े स्वरूप में रूचि है । ता समें श्रीगुसाँईजी आज्ञा किये जो तुम बड़े महाराज हों । श्रीठाकुरजी के स्वरूपमें छोटो कहा मोटो ? पाछें श्रीगुसाँईजी ने फेरि बड़े सिंहासन पर पधराइ के आज्ञा करी, जो तुम्हारों मन होइ तव पधराई लीजो । श्रीघनश्यामजी के माथे श्रीमदनमोहनजी पधराये ।

पाछे श्रीनवनीतप्रियाजी की सेवा अपने माथे राखी ।

पाछे एक दिन श्रीनाथजी ने श्रीगिरिधरजी सों आज्ञा करी, तुम श्रीगुसाँईजी सों कहियो जो—तुमने सातो स्वरूप सातो बालकन के माथे पधराये हैं, तिन स्वरूपन सहित मैं न्नकूट अरोगूंगो । तब श्री गिरधरजी बिनती किये, जो आज्ञा । ता पाछे श्रीगुसाँईजी श्रीगोकुलजी सों श्रीनवनीत-यजी कों सिंगार धराइ के आपु श्रीगोपालपर पधारे । नाथजीकी राजभोग आरती करि कैं अपनी बैठक में पधारे,

ता पाछें भोजन करि कैं गादी तकियान पर विराजे । त
श्रीगिरिधरजी भोजन करि कैं श्रीगुसाँईजी के पास पधारि
दंडौत विनती कीनी,जो–काकाजी ! मोकों आज श्रीजीने आ
करी जो सातों स्वरुपन सहित मैं अन्नकूट अरोगूँगो । जो तु
श्रीगुसाँईजी सों मेरी आज्ञा कहियो । जो मैं अन्नकूट अब
तब अरोगूंगो जब सातो स्वरुप भेले पधराओगे । तब
बात श्रीगुसाँईजी सुनि कैं चुप होय रहे । पाछे आज्ञा करी
श्रीजीकी इच्छा होयगी सोई करेंगे ।

पाछे श्रीगुसाँईजीने श्रीगोपालपुरमें सात मन्दिर न
सिद्ध किये । फेरि श्रीनाथजीकी आज्ञा ते श्रीगुसाँईजीने
गोकुल तें सातो स्वरुपन कों श्रीगोपालपुर पधराये । त
श्रीमथुरानाथजी, श्रीद्वारकानाथजी, श्रीगोकुलनाथजी, श्रीग
कुलचन्द्रमाजी, श्रीविट्ठलनाथजी, श्रीमदनमोहनजी ये छै
स्वरुप तो पालकीन में पधराये । और श्रीनवनीतप्रियाजी
में पधारे । और श्रीबालकृष्णजी कों श्रीद्वारकानाथजीकी पाल
में पधराये । श्रीनटवरजी कों श्रीमथुरानाथजी की गोदि
पधराये ।

या भाँति श्रीगुसाँईजी सातो बालक सहित बहुबेटी
सङ्ग समाज लै कैं गाजेबाजें सहित गोपालपुर पधारि
अपने अपने मन्दिरन में बिराजे । तहाँ श्रीगुसाँईजीने पाट बैठा
कैं उच्छव बधाई बहोत मानी ।

ता पाछे श्रीगुसाँईजीने आठों सखान कूं बुलाय के आज्ञा
दीनी । जो तुम एक एक मन्दिर में एक एक स्वरुप के इहाँ
कीर्तन सेवा करो । तब सब सखानने मिलि कैं दण्डौत करी ।
पाछें विनती कीनी, जो राज । आपु कृपा करिकैं जा जा
स्वरुप के इहाँ की आज्ञा करो ता ताके इहाँ हम सेवा करें । तब
श्रीगुसाँईजीने कृपा करिकैं सेवा बांटी । ताकी विगत—

(१) श्रीजी के इहाँ कुंभनदासजी (२) श्रीमथुरेशजी
के इहाँ सूरदासजी (३) श्रीविट्ठलेसरायजी के यहाँ छीतस्वामी
(४) श्रीद्वारकानाथजी के इहाँ गोविंदस्वामी (५) श्रीगोकुल-
नाथजी के इहाँ मैं (चतुर्भुजदास) (६) श्रीगोकुलचंद्रमाजी के
हां नन्ददास (७)श्रीनवनीतप्रियजी के इहां परमानन्ददासजी)
(८) श्रीमदनमोहनजी के इहाँ कृष्णदासजी ।

या प्रकार आठों सखान कों आठों मंदिरन के कीर्तनकी
सेवा सोंपी ।

❁इति श्री चतुर्भुजदासकृत खट ऋतु वार्ता सम्पूर्ण❁

ग्रन्थांकः-२

श्रीहरिः।

॥ श्रीमद् वल्लभकुल को प्रागट्य ॥

अथ श्रीमद्वल्लभ कुल को प्रागट्य लिख्यो है—

श्रीगङ्गाबेटीजीनें पत्र विष्णुदास कों लिख्यो सो लिख्यते-*

श्री हरिः । तैलंग देशमें कारककुंभ × गाम है। त मूलपुरुष यज्ञनारायण सोमयागी। तत्सुत गंगाधर सोमयागी तत्सुत गणपति सोमयागी । तत्सुत वल्लभभट्ट । तत् लक्ष्मणभट्ट* तिनकी स्त्री लक्ष्मीजी नाम विधान ईल्लमाजी तत्सुत श्रीवल्लभाचार्य महाप्रभु प्रागट्य चंपारण+देशे। संवत

---

* जतीपुरा वाली प्रति में, जो मेरे पास है, यह प्रारंभिक प बीच के पत्र के साथ लिखी है। किन्तु ग्रान्योर और गोवर्धन वा प्रतियों में, जो शायद स० १८०० के पूर्व की प्रतिलिपियाँ ज्ञात हो हैं यह पंक्ति प्रारम्भमें ही दी गई हैं।

×"कारक..." जतीपुरा वाली प्रति में खंडित तीन अक्ष ही प्राप्त होते हैं।

* जतीपुरा वाली प्रति में इतना अंश खण्डित होने से प्र नही है।

+ प्रागट्य पंचारण देशे (जतीपुरा वाली प्रति)

१५३५ शाके १४०० वैसाख वदी ११ दिने सोमवारे÷ । वर्ष ५२ दिन ६७ । सुख दरसन दियो है। संवत् १५८७ अंतर्धान लीला दिखाई। आषाढ सुदी ३ (लोक) त्याग किये। अक्का जी महालक्ष्मीजी स्त्री को नाम। तत्सुत दोय। प्रथम श्रीगोपीनाथजी को जन्म संवत १५६७ के भाद्रपद वदी १२। द्वितीय पुत्र श्रीविट्ठलनाथजी को प्रागट्य संवत १५७२ वर्षे शाके १४३७ प्रवर्तमाने पौष मासे कृष्ण पक्षे ९ घटी ६० हस्त नक्षत्र घटी २६ पल १४ अ...दिने। उदयात् घडी ९—२१ समय×धन संक्रांति अंश १ कला १४ समय प्रागट्य। वर्ष ७० दिन २८ लौ सुख दियो। संवत १६४२ महा वदी ७ आसुर-व्यामोह लीला दिखाई । श्रीगुसाँईजी के बहुजी । प्रथम रुक्मिणी बहुजी द्वितीय पद्मावती बहुजी । तत्सुत ७। प्रथम श्रीगिरिधरजी को जन्म संवत १५९७ के कार्तिक सुदी १२ बहुजी नाम श्रीभामिनी बहुजी। दूसरे श्रीगोविंदरायजी को

÷कविकेशव किशोरकी वंशावलीमें भी जिसकी रचना वि० सं० १८० के पूर्व हुई है, सोमवार ही प्राप्त होता है। (देखो कांकरोलीसे प्रकाशित "श्रीमहाप्रभुजी को प्रागट्य वार्ता"। गणित से भी उदयात् शुद्ध एकादशी उस वर्ष के वैशाख कृष्णपक्ष को सोमवार को ही आती है। देखो "अनुग्रह" के वि० स० २००० के अंकों में दिया हुआ गणित)

× घडी २१ समये (जतीपुरा की प्रतिमें)

जन्म, संवत, १५९९ + के कार्तिक वदी ८ ॥ बहुजी को नाम
श्रीराणी बहुजी । तीसरे श्रीबालकृष्णजी को जन्म संवत १६०६
के आसो ÷ वदी १३ । बहुजी को नाम श्रीकमला बहुजी ।
चोथे श्रीगोकुलनाथजी को जन्म संवत १६०८ के मार्गशिर्ष
सुदी ७ । बहुजी को नाम श्रीपार्वती बहुजी । पाँचमे श्रीरघु-
नाथजी को जन्म संवत १६११ के कार्तिक सुदी १२ । बहुजी
नाम श्रीजानकीजी बहुजी । छठे श्रीजदुनाथजी को जन्म संवत
१६१६ के चैत्र सुदि ६ बहुजी को नाम श्रीमहाराणी बहुजी ।
सातमे श्रीघनश्यामजी को जन्म संवत १६२८ के कार्तिक वदी
१३ बहुजी को नाम श्रीकृष्णावती बहुजी । तिनमें पुत्र ६
प्रागट्य श्रीरुक्मिणी बहुजी के गर्भ तें । और पुत्र १
श्रीघनश्यामजी को प्रागट्य श्रीपद्मावती बहुजी के गर्भ रत्त
तें । ए सकल स्वरूप के जन्म दिवस को विस्तार लिख्यो है ।

श्रीहरिः । अब श्रीआचार्यजी के सेव्य ठाकुर ७ ध
पधारे सो लिख्यते (जतीपुरा की प्रतिमें यहाँ गङ्गाबेटी औरै
विष्णुदासजी का उल्लेख है) अब प्रथम श्रीनवनीतप्रियजी महा
बन श्रीजमुनाजी में ते प्रगटे । सो श्रीआचार्यजी कों प्राप्त भये*

+स० १६०० (जती० की प्रतिमें)

÷भादपद (जतीपुरा वाली प्रति)

* जतीपुरा की प्रतिमें—"अब श्रीनवनीतप्रियाजी श्रीआचार्यजी
गौघाट स्नान करते हुते । तहां डुबकी मारी तब जनेउ सों लगे आये
तब छाती लगाय लिये है ।"

(१) दूसरे ठाकुर श्रीविठ्ठलनाथजी सों काशीमें एक ब्राह्मण कों
आज्ञा भई श्रीवल्लभ दीक्षित के घर पधराउ । तब वह ब्राह्मण
पधराय गयो । आज्ञा ते । जो तुम्हारे घर प्रगट होउँगी । (२)
तीसरे ठाकुर श्रीद्वारिकानाथजी कन्नोजमें दरजी × के घरसों
पधराय ल्याये श्रीजीं की आज्ञा ते श्रीआचार्यजीने पाठ बैठाए ।
कहे जो सामग्री उत्तम तें उत्तम समर्पियो (३)अब चोथे ठाकुर
श्रीगोकुलनाथजी श्री अक्काजी पधराय ल्याये श्रीआचार्यजी
के साथ आए तब पधरावत आए(४)अब पाँचवें श्रीगोकुलचन्द्र-
माजी महावन तें पधारे । नारायणदास ब्रह्मचारी कों सेवा दिये ।
(५) छठे श्रीमथुरानाथजी कोईला के घाट के मेखड में ते पधारे
सो कन्नोज पद्मनाभदास ब्राह्मण के इहाँ श्री आचार्यजी
पधराये ।(६) *सातवें श्रीमदनमोहनजी सो श्रीआचार्यजी की
माता इल्लाम्माजी के पास हते तहाँ ते पधराए ।

अब श्रीगोवर्धननाथजी प्रगट भये सो श्रीगोवर्धन पर्वत
संवत १४९६ के श्रावण वदी ३ गाँठोली में मंगलराय
ोरवा कों आज्ञा भई । मैं इहाँ हूँ । पाछे संवत १५३५
वैशाख वदी ११ कों मुखारविंद को प्रागट्य भयो । पाछे
ंवत १५५६ में श्रीमहाप्रभुजीने पाठ बैठारे । पाछे सवत
१५५९ के वैशाख सुदी ३ पूरणमलने मन्दिर बनवायो

×"क्षत्री के घरसों" जतीपुरा की प्रति में ।

* जतीपुरा की प्रतिमे "श्रीमदनमोहनजी आचार्यजी के सेव्य" इतना विशेष प्राप्त है ।

सो वर्ष ४ लौ काम चल्यो । पाछे शिखर मात्र बाकी रह्यो । संवत १५६३ के वैशाख सुदी ३ श्रीगोवर्धननाथजी मन्दिर में सिंघासन बिराजे+ । पाछे संवत १६३० मे श्रीगुसाँईजी शय्या मन्दिर मणिकोठा बनवायो । सिरियाराजन कियो । मोंह (सिलि) श्रीगोवर्धननाथजी हुते ।

अब श्रीगोवर्धननाथजी के श्रीअंग के तथा सब जगह× के चिन्ह है सो लिखत हैं। सुआ÷ बीच । शैया मन्दिर की ओर मुख । ताके आसपास दोउ कोनेमें दोउ स्वरूप । दाहिने श्रीहस्त के पास पीठकने मेढा है । वाके नीचे फणिधर सर्प है । ताके नीचे चरण के पास गाय २ हैं। तामे दोय प्रगट हैं । एक कंदरा में, मुंह बाहिर हैं । वा पर एक सर्प चल्यो जात है । बांई ओर एक सर्प है । ताके नीचे एक नृसिंहजी को स्वरूप है तथा पर्वत की शिला को भाव है । बांये चरन के पास मोर दो❋ । पीछे पीठक समचोरस है । श्रीअंग के चिन्ह । शिखाको जूडा बीच है । श्रीकर्ण सम है

+ पाछे सम्वत् १५५६ के सावन सुदी ३ पूरणमल्लने मन्दिर बनवायो । सो वर्ष ४ लौ काम चल्यो । पाछे शिखर मात्र बाकी रह्यो । सम्वत् १५५९ के वैशाख सुदी ३ गोवर्द्धननाथजी मन्दिर मे सिहासन पे बिराजे'' (जतीपुरा की प्रतिमें)

× ''सहज के'' (जतीपुरा की प्रतिमें)

÷ मोर सुआ.

❋ जतीपुरा की प्रतिमें नहीं है।

छेद युक्त हैं। नाभिके भीतर छिद्र है। श्रीकंठके आभरन सहज हैं। दुलरी पर्यंत। अंग या भांति को। चिह्न हृदे विषैहै। यज्ञोपवीत है। यज्ञोपवीत भीतर तीन मणि । दाहिनी जङ्घा ऊपर गांठि है। दाहिने श्रीहस्त कटि प्रदेश पर मुट्ठी बाँधे हैं। बाँये श्रीहस्त सहज की नसन गुंजल हैं (?)। दांहिने श्रीहस्त में कडा के उपर दाग रह्यो है। वनमाला सहजकी दोऊ श्रीहस्त के स्कंध के नीचे बाहु पर है। गुल्फतें उपर हैं। चरनारविंद सम हैं। दाहिने हस्तको अंगुष्ठ ऊंचो है। ऊपर तें। नखभूषण तें नहीं । नीचे चरनारविंद तें अंगुल ४ पीठक आसन को ऊँचो हैं। दुलरी को फुदना दाहिनी ओर है। वस्त्र लेखे सहज। सहज को तनिया है। श्रीहस्त में सहज के कडा है।

अब श्रीनंदजूको उत्सव पोष सुदी ८: श्रीमदानंदजी को उत्सव माघ वदी ४; [मारू (१)] श्रीबलदेवजी को उत्सव मार्गशीर्ष सुदी १५ । श्रीयशोदाजी को उत्सव माघ सुदी ६ श्रीचन्द्रावलीजी को उत्सव भाद्र पद सुदी ५; श्रीव्रजसुन्दरीजी को उत्सव भाद्रपद सुदी १०; श्रीव्रजमंगलाजू को उत्सव भाद्रपद सुदी १३, श्रीव्रजशोभाजू को उत्सव भाद्रपद वदी ३ (मारु ?)

श्रीजी आप कूखमें प्रगटे सो उत्सव अगहन सुदी २ कार्तिक सुदी १० कंस लीला । मार्गशीर्ष सुदी १५ वछहरन लीला । संवत १५८५ में श्रीआचार्यजी श्रीद्वारिकानाथजी के दरशन कों पधारे । संवतादि–वैशाख सुदी ३ त्रेतायुगादि ।

माघ सुदी ७ द्वापरयुगादि । कार्तिक सुदी ९ सत्युगादि आश्विन वदी १३ कलियुगादि ।

श्री हरिः । श्रीगुसाँईजी ६ वेर गुजरात पधारे ।(१) प्रथ तो संवत १६०० में अडेल ते पधारे । (२) दूसरे संवत १६ में अडेल तें पधारे । (३) तीसरे सम्वत १६२१ में मथुरा पधारे । (४) चोथे संवत १६२३ फाल्गुन वदी ७ श्रीनाथ श्रीगोवर्धन पर्वततें श्रीमथुराजी श्रीगुसांईजी के घर पधा तब श्रीगुसाँईजी गुजरात हते । श्रीगिरिधरजी प्रभृति घर सों सेवा किए । पाछे वैशाख सुदी १४ के दिन निजमंदिर पधारे । पांचमी वेर संवत १६३१ में श्रीगोकुल तें पधा (६) छठी वेर सम्वत् १६३८ में श्रीगोकुल तें पधारे । श्रीगिरिधरजी सङ्ग हुते ।

पाछे संवत १६१६ के माघ वदी १३ श्रीगुसा पुरुषोत्तम क्षेत्र पधारे । तब साथ श्रीरुक्मणीजी श्रीगिरिधरजी हुते । रामा सुतार साथ हुतो ।

श्रीगुसांईजी सम्वत १६२१ में श्रीगोकुल बास कि कितनेक दिन पाछे मथुरा में रहे । पाछे फेर संवत १६२ फाल्गुन वदी ७ कों श्रीगोकुलवास किये । सब बा विराजमान । श्रीगुसांईजी वृद्धावस्था अँगीकार किये ।

* इति श्रीमद् वल्लभ कुल को प्रगट्य संपूर्णः *

'पुष्टि मार्गीय सार संग्रह'

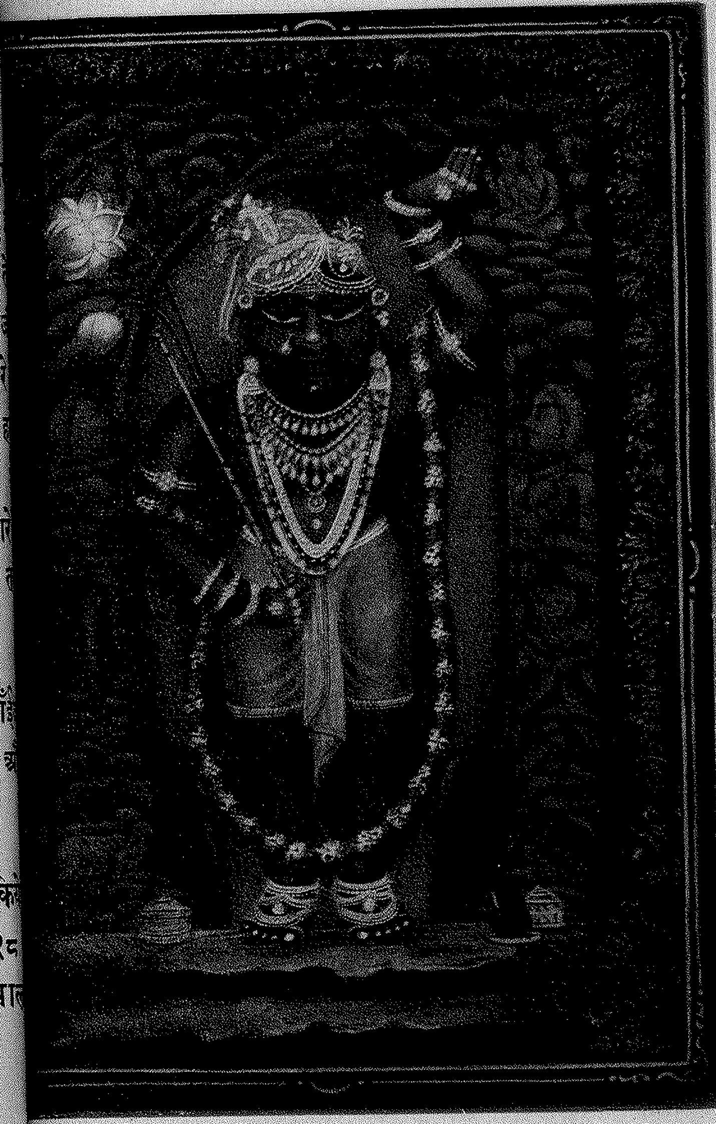

चियता-गो० श्री रमणलाल जी महाराज मथुरा वारे

गो० श्री १०८ श्री रमण लाल जी महाराज
मथुरा वारे

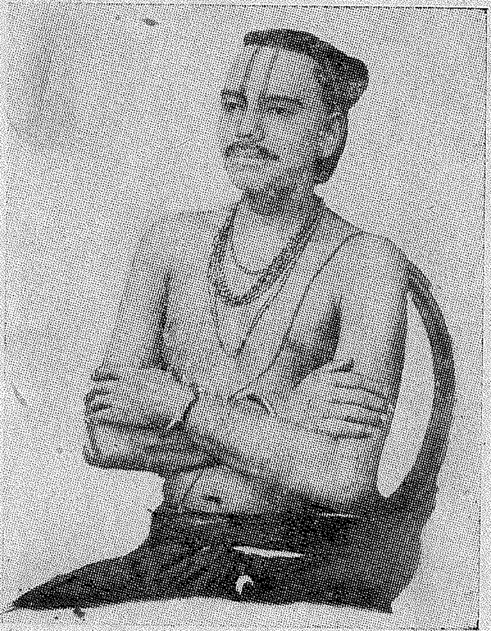

प्राकट्य सं० १९०४

---

* श्री गोवर्द्धननाथोविजयते *

श्री गोवर्द्धन ग्रन्थमाला का बीसवां पुष्प

मथुरा वारे श्रीमद्गोस्वामी श्री १०८ श्री रमणलालजी
महाराज रचित—

पुष्टि मार्गीय सार संग्रह

[रचनाकाल—वि० सं० १९७४]

★

प्रस्तावना लेखक—
गो० श्री १०८ श्री द्वारकेशलालजी महाराज
मथुरा-पोरबंदर

★

सम्पादक—
निरंजनदेव शर्मा

प्रथम संस्करण
१ १ ० ०

प्रकाशक—
श्री गोवर्द्धन ग्रन्थमाला कार्यालय
दाऊजी घाट, मथुरा।

[illegible] मथुरा
2

प्रस्तुत "पुष्टिमार्गीय सार संग्रह" श्रीरमणलालजी महाराजश्री
महत्वपूर्ण रचना है। इसमें सर्वत्र श्रीमद्वल्लभाचार्य चरण के उज्ज
सिद्धान्तों का दिग्दर्शन होता है। पुष्टिधाम को वर्णन, पुष्टि सृष्टि प्रति उपदे
श्रीराधास्वरूपवर्णन, पुष्टि भक्त निरूपण, व्रजकुमारिका, धर्मी स्वरूप मूल
वर्णन, श्रीगोकुल-वर्णन, श्रीगिरिराज वर्णन, वृन्दावन वर्णन, आचार्य स्वरू
श्रीगोकुलेश प्राकट्य, सेव्य स्वरूप और सेवा भावना, मार्ग प्राकट्य, भ
वृद्धि, वर्णाश्रमधर्मनिर्देश, वैष्णव-चिन्ह, अन्याश्रय, असमर्पितत्याग, असदाल
सदाचार, आचार-विचार, इत्यादि प्रकरणों में आपने पुष्टिमार्ग के सम
सिद्धान्तों का निष्कर्ष रख दिया है। अनन्य वैष्णव सृष्टि को चाहिये कि आ
श्री का जो अमूल्य उपदेश इस ग्रन्थ में भरा हुआ है उसका अक्षरश: पा
करे।

स्थायी महत्त्व के साहित्य को प्रकाशित करने के लिए श्री निरंज
सदैव प्रयत्नशील रहते हैं। इस ग्रन्थ का प्रकाशन करके इन्होंने पूज्य महार
श्री के चरणयुगम में अपनी भावाञ्जलि समर्पित की है और अनन्य सृ
लिये महदुपकार किया है। हम भगवान् वैश्वानर के चरणों में यही प्रार्थ
करते हैं कि निरंजनजी को दीर्घायु प्रदान करें और उनके द्वारा निर
सम्प्रदाय की नाम सेवा होती रहे। साथ साथ प्रत्येक वैष्णवों को सा
सूचित करते हैं कि इस ग्रन्थ को मँगवाकर प्रतिदिन इसका अध्ययन-श्रवण
करें। कलि में भगवन्नाम स्मरण ही सर्वोत्तम साधन है।

माधव भवन
पोरबन्दर
ता० २१-१०-६२

गो० श्री द्वारकेशलाल
मथुरा–पोरबंदर

---

* श्री हरि *

[श्री मद्‌गोस्वामी १०८ श्री रमणलाल जी महाराज रचित]

पुष्टिमार्गीय सार संग्रह

श्री गोपीजनवल्लभाय नमः।
कृष्णास्यंवल्लभाचार्य्यं तथा श्री विट्ठलेश्वरम्।
वन्दे श्रीगोकुलाधीशं ग्रन्थ सम्पूर्ति सिद्धये॥

उत्थानिका—अथ मर्यादामार्ग तथा पुष्टिमार्ग कूं एक ही समझ रहे हैं। तथा मर्यादा पुरुषोत्तमादि अंशकलान में और पुष्टिस्वरूप पूर्ण पुरुषोत्तम में तारतम्य नहीं जाने, तथा मर्यादा पुष्टिलीलान कूं एक समझे तारतम्य रंचहू नहीं जाने ऐसो अन्यथा ज्ञानरूपी भ्रम तथा पुष्टि-मार्गीय सेव्य स्वरूप और शुद्ध पुष्टि भक्ति मार्ग को स्वरूप और पुष्टिभक्त तथा पुष्टि लीलान के स्वरूप कूं यथार्थ नहीं जाने ऐसे मनुष्यन कूं अज्ञान निवृत्ति पूर्वक पुष्टिमार्गीय ज्ञान की प्राप्ति के लिये पुष्टिमार्गीय सारसंग्रह ग्रंथ निरूपण करें हैं। क्योंकि यथार्थ स्वरूप ज्ञान बिना मुख्य फल सर्वथा ही नहीं प्राप्त होय हैं और मनुष्य देह बारम्बार मिले नहीं है, परम दुर्लभ है, क्षणभंगुर है, तामेंहू भगवान् के प्रिय अनन्य भक्त सत्पुरुष तिनको दर्शन भाषण भगवत वार्तान को श्रवण अति दुर्लभ है और वह भगवत अनुग्रहैकलभ्य है। साधनन सूं प्राप्त नहीं होय है। ताते सर्व दुःख की निवृत्ति के लिये और परम आनन्द सुख भगवत् प्राप्ति के लिये अत्यन्त आदर पूर्वक दृढ़ आश्रय अनन्यता पूर्वक शुद्ध पुष्टिभक्ति-मार्गीय सार को ग्रहण प्रीति-

पूर्वक करे। अनेक शास्त्रन के भ्रमजाल में चित्त नहीं भ्रमानों, क्यों
कलियुग के जीवन की मन्द ते हू मन्द तो मति है और मन्द भाग्य है
और ताहू में रोग ग्रस्त है, उद्योग प्रतिबन्ध लौकिक विषय भोगास
हैं, विक्षिप्त जैसे मन चंचल है। भ्रान्त है, जिव्हा उपस्थ में पराय
हैं, अनेक दु:खन सों विकल हैं, अनेक उपद्रवन करके युक्त हैं। आयु
को प्रमाण नहीं है। मृत्यु रूप नदी के किनारे पै सर्व जगत ठाढ़ो
कोई या पार है, कोई वा पार है, कोई गाँठ बाँधि के तैयार है। या
सर्व संकट त्यागिके श्रीकृष्ण को ही भजन सेवन नाम कीर्तनादि
करनो उचित है याही में कल्याण है याही ते पुष्टिमार्गीय सार सं
ग्रन्थ श्रीआचार्य श्रीप्रभु-चरण श्री गोकुल अनन्य स्वामी के चरण
बलतें श्रुति स्मृति श्रीभागवतादि पुराण स्वमार्गीय ग्रन्थन के अनुस
वर्णन करें हैं।

यह अपार संसार रूपी सागर के तरिवे में नौका रूप मनुष्य
ही है। ताकूं प्राप्त होय करिके भी जो संसार रूपी समुद्र की पार
जाय तो अतीव मूर्ख है। वो अपनपे को नाश आप ही करे हैं जो क
तो संसार समुद्र में प्राप्त जो कोई जीव ताकूं भगवदनुग्रह सो श्र
को उपदेश होय तब ही अविद्या दूर होय है। और यथार्थ भगव
स्वरूप को ज्ञान भी तब ही होय है। और तब ही परमेश्वर
गुणानुवाद के श्रवण, कीर्तन, स्मरण, वन्दन को करे इत्यादिकन
दु:ख की निवृत्ति होय है, और जन्म-मरण सों आदि ले असंख्य
दु:खन ते छूटे है। और परमानन्द स्वरूप जो परमेश्वर तिनको तिन
ही प्राप्ति होय है, ताही के लिये या सग्रह में पहिले श्रीपुरुषोत्तम धा
को निरूपण करिके श्रीकृष्ण को स्वरूप निरूपण कियो है।

अथ पुष्टि धाम को वर्णन करें हैं–

वो विष्णु को परम पद है, मंगलन को भी मं

है, गुणन ते अतीत है, पर जे सत्य लोकादिक तिन सों भी परे है। परमानन्दरूप जे लीला तिनसों युक्त है, तेजोमय है, रोगादिकन करके रहित है। तहाँ स्थित नही लिपायमान रसरूप वहुत उज्ज्वल अपने ही आधार बारो तर्क करिवे में आवे नहीं, प्रकाशमान बड़ो शोभायुक्त सगुण निर्गुण सो प्राकृत्त गुण ते रहित नित्य शुद्ध रूप सनातन आकार सहित और निराकार सो प्राकृत्त आकार रहित स्वच्छ प्रकाश युक्त कल्याण रूप वो कहवे में आवे नहीं,ऐसो व्यक्त अव्यक्त एक ही, अपनी इच्छामय खंडन सों रहित नित्य नाना प्रकार की मणिन सों मंडित सबको आधार, सबकौ कारण, सब कारणन को भी कारण, नित्य ही आनन्द युक्त बाधान सों रहित सुबोध सुख के देवे बारो अथवा सुबोध जे भक्त तिनको सुख को देवे वारो शुभ के देवे वारो, सार भूत जन्म मृत्यु जरा के दूर करिवे बारो, मनको रमणरूप परमधाम सुमनोहर श्री गोकुल है। तैसे ही बृहद्वामनपुराण में भी श्रीमद् आदि वृन्दावन में, गुणातीत पुष्टिधाम को स्वरूप कह्यो है। जहाँ वृन्दावन नामको बन है, कल्पवृक्षन के जो मनोरम निकुंज तिनसों युक्त है। सब ऋतुन के जे सुख तिनसों युक्त है। जहाँ भली भली झरनान बारी जो

गुहा तिनसों युक्त रत्नधातुमय शोभायमान भले भले पक्षिन के समुदायों सों युक्त श्रीगिरिराज है । जहाँ निर्मल जलवारी श्रीयमुनाजी विराजे हैं । नदीन में उत्तम रत्नन तें जड़ित हैं । दोनों तट जिनके हंस और कमल सों युक्त हैं । नाना प्रकार के जो रास के रस सों उन्मत्त श्रीगोपीजनन को समुदाय है; ता समुदाय के मध्य में स्थित किशोर आकृति वारे अच्युत श्रीकृष्णचन्द्र हैं ।

या रीत सों धाम को वर्णन करिके धामी श्रीकृष्ण पुष्टिस्वरूप को निरूपण करे हैं वेद और श्रीकृष्ण के वचन भगवद्गीता पुष्टिमार्गीय प्रमाण चतुष्टय। और वेदव्यासजी के सूत्र और वेदव्यासजी की समाधि भाषा चार प्रमाण हैं । ऐसे निबन्ध में श्रीमहाप्रभुन ने कह्यो है । ताही क्रम सों और स्वमार्ग के ग्रन्थन के अनुसार सों, सब यहाँ निरूपण कियो जाय है ।

पहिले कह्यो भयो शोभायमान आदि वृन्दावन जो गोकुल धाम में विराजमान नित्य लीलान सों युक्त किशोराकृति जो पुष्टिस्वरूप परम श्रीपुरुषोत्तम तिनके स्वरूप को निरूपण करें हैं ।

कृषि ये सत्ता कों कहिवे बारो है । और ण ये शब्द निवृत्ति को कहिवे बारो है । इन दोनोंन की एकता जो है सोई परब्रह्म कृष्ण ऐसे कह्यो जाय है, अथवा कृषि जो है, सो तो निश्चेष्ट बचन है और णकार भक्ति के कहिवे बारो है । और देवे बारे को कहिवे बारो है। यासूं कृष्ण नाम कह्यो जाय है और भी प्रमाण हैं । वो पुरुष रसरूप है । जहाँ मन करिके सहित वाणी अप्राप्त होय के फिर आवे है । वो अक्षर सूं भी परे है जो परब्रह्म को आनन्द जाने है वो कोई सों भी भय नहीं पावे । और भी श्रुत प्रमाण हैं, रस कों प्राप्त करके मनुष्य आनन्द मग्न होय जाय, और जो परमानन्द को प्राप्त भयो है सोई ऐसो है दूर भये हैं, अनिष्ट जाके और दूर भये हैं, अविद्या तथा पाप जाके इत्यादि बचन अथर्वण उपनिषद् मैं है वौ परब्रह्म लौकिक प्राणवायु करके रहित और लौकिक मन करिके रहित स्वच्छवर्ण अक्षर ते पर पर सूं भी परहै वो पूर्ण है, पूर्ण सों भी पूर्ण है, पूर्ण की पूर्णता को लैके पूर्ण है शेष रहे है । श्रीकृष्ण ही परम देवता है, ऐसे यजुर्वेद में भी लिख्यो है और हू प्रमाण है श्रीकृष्णचन्द्र ही निरन्तर ब्रह्म है, तैसे ही श्रीगीताजी में भी लिख्यो है, वो परम पुरुष अनन्य भक्ति सों प्राप्त होय है, नाशवारो जो भाव है ताकूं अधिभूत कहें हैं और पुरुष कों अधिदैव कहें हैं । हे अर्जुन अभ्यास और योग सों युक्त जो अनन्य

गामी मन तासों परम पुरुष दिव्य स्वरूप को, चिन्तन करे वो ही सर्व की गति है। भर्ता है, प्रभु है, साक्षी है, निवास है शरण हैं, मित्र है। अब वेदव्यास जी के सूत्र को प्रमाण कहें हैं वो आनन्दमय है अभ्यास ते ही आनन्दमय धर्म को उपदेश है। तैसे ही श्रीमद्भागवत में वेदव्यास जी की समाधि भाषा में कह्यो है अन्य जो अवतार अशंकलात्मक है और श्रीकृष्ण तो स्वयं पूर्ण पुरुषोत्तम ही हैं, यशोदानन्दन ये कृष्णचन्द्रमहाराज जैसे भक्तन कों सुख देत हैं तैसोज्ञानीन को नहीं देत हैं तैसे ही नारद पंचरात्र में भी है आनन्दमात्र है कर पाद मुख उदरादि जिनके सब जगे भेद सो रहित आत्मा है।

अब पुष्टि सृष्टि कों कहत हैं —

'रसोवैस' इत्यादि वाक्यन सों प्रतिपादित नित शुद्धाद्वैत, सदानंद श्रीकृष्णा पूर्णब्रह्म नित्यानंद श्रीगोकुले मूलस्वरूप अकेले क्रीड़ा करिवे की इच्छा करत भये। तहं प्रमाण, वो, एकाकी रमण करें नहिं याते वो दूसरे की इच्छा करत भये, यही पुराण में कह्यो है, एक ही रसरू श्रीकृष्ण दो रूप करिके श्रीस्वामिनी जी और श्रीकृष्ण रूप सों रात्रि दिन क्रीड़ा करें हैं, तिन स्वामिनी जी श्रीकृष्णाजी के अर्थ नमस्कार है। वो तौ लक्ष्मी अमित

हैं, और भजनानन्द रूपा राधा है। सो पुरुषोत्तम ते अभिन्न है, और पुष्टि सृष्टि तो तिनके अङ्ग सों ही प्रगट भई है। "मैं एक हूँ और बहुत होंऊँ" तथा और भी पुराण में वाक्य हैं। सो मूल लीला की ब्रह्मा सो जुदी अर्थात् ब्रह्मा की नाँई नई बनाई अर्थात् पुष्टिसृष्टि कों काय आनंदमात्र कर पादादिकन सों उत्पन्न करी हैं। याते ही सृष्टि की नित्यता आनन्दमयता आप ही सिद्ध है ऐसे गुणन सों युक्त जो पुष्टि सृष्टि तिनके संग पुष्टिलीला के प्रवर्त्तक श्री पूर्ण पुरुषोत्तम श्रीकृष्ण मयूर के पाखन कों शिखा में धारण करत भये वो सुन्दर घूँघरबारे बारन सों युक्त है। श्री मुख जिनको भृकुटी रूप धनुष में धारण कियो है बाण जिनने कस्तूरी करके चित्रित है, अंग जिनको और कमल के सदृश हैं, नेत्र दोनों जिनके और मोतिन की मालान सों युक्त है कंठ उत्तम है, नासिका जिनकी सरस है। अधर ओष्ठ जिनको त्रिवलिन सों युक्त कंठाभरण सों युक्त है। कंठ जिनके फूले फूले हैं, दोनों गाल जिनके चिबुक को धारण करे सुवर्ण कौस्तुभमणि के धारण करे भये बनमाला सों शोभायमान हैं। भली भली सोने की मणिन की बड़ी बड़ी जो माला तिनसों अतीव ही शोभायमान है। सुवर्ण की बड़ी बड़ी

मालान सों शोभायमान है दोनों जङ्घा जिनकी अनेक रत्नन सों जड़े भये हैं, हाथ के कड़ा जिनके बाहून के मध्य में स्वर्ण के बने भये उत्तम बाजून सों शोभायमान बहुत से फूल और तुलसी सों बनी जो वनमाल तासों सुशोभित हैं नाना वर्ण के वस्त्रन को है पटका जिनके त्रिभंग ललितता में प्रथम कटि भाग के बतावन वारी जो कौंधनी ताके शब्दन सों शोभायमान है दोनों चरणारविन्द में स्वर्ण मणिन सों जटित हैं, नूपुर जिन के वो सुन्दर पीताम्बर को धारण कर रहे अपने नख रूपी चन्द्र सों जगत्रय को प्रकाश करिवे वारे, और कछुक चलायमान है। उपन्ना जिनको ता करिके शिर के भेद को दिखाय करिके चलित है, मकराकृति कुंडल जिनके जो अतिशय रस के दैवे बारे नृत्य करत नयनन कों आनन्द देत हैं जो रसानुभव में लोलुप गोपीजन के मध्य में स्थित है, जो रासलीला मे परायण विशेष करिके विहार करन बारे, जो त्रिभंग ललित भुजान सों वेणु को धारण करें हैं। वृन्दावन को एक ही फल के देवे बारे अपनी मुरली को बजावत भक्तन को मन मोहत है और जगत् को क्षण क्षण मे रोध करत जड़ता को प्राप्त करें हैं। जो पक्षी और पशुन को मौन के करवायवे वारे हैं। जो मधु धारान

सों वृक्षन के भीतर आनन्द देत हैं जो अपने चरणारविन्दन सो विचरिके ब्रज की पृथ्वी को ताप दूर करत हैं, जौ श्रीयमुनाजी में जलक्रीड़ा करिवे में अतिहि प्रसन्न हैं, रसात्मक, आप रसस्वरूप, जो भक्त अपने तिनके समूह सों युक्त हैं जो अपने अनुभव सौं जानो जाय ऐसो जो आनन्द ताको देत हैं। विरह में निरन्तर ही निजलीला को अनुभव करायवे वारे जो साकारानन्द स्वरूप सो भक्तन के हृदय में बास करें हैं सोई श्रीवल्लभाष्टक में लिख्यो है। श्रीमत्वृन्दावनचन्द्र करके करके प्रगट कियो जो रसिक आनन्द ताको जो समूहकी रूपता में स्फूर्ति जाकी रासादिलीलामृत ताको जो समुद्र ताको समूह तासों युक्त है सर्वस्व जिनको, यासूं आप श्रीकृष्णचन्द्र रासलीला सदैव ही करे हैं। रात दिन ये सिद्धही हैं। श्रीपूर्णपुरुषोत्तम के प्रादुर्भाव को कारण बृहद्वामन पुराण में है। ब्रह्मानन्दमय लोक व्यापिवैकुन्ठ है, नाम जाको निर्गुण प्राकृत गुण रहित जाको आदि और अन्त नहीं होय वैसे वेदन को मुख्य स्थान है, ना लोक में बास करिवे बारे वेदन के परे ते हूँ परे सो साक्षातपूर्ण पुरुषोत्तम चिरकाल पर्यन्त स्तुति कों सुनिकें प्रसन्न हायकें परोक्ष वाणी सों बोले मैं तुम से प्रसन्न भयो जो तुमकों मनोभिलाषित बर होय सो

माँगो, तब श्रुति कहे हैं । परमेश्वर श्रीकृष्ण अच्यु
तुम्हारे नारायण आदिरूप तो हमने जाने हैं परन्तु
अच्युत ! तिनमें हमारी वस्तु बुद्धि नाहीं है ब्रह्म स
सगुण है याते बुद्धि हमारी गुण में नाहीं है या
पुराविद् जो तुम्हारो आनन्द मात्र रूप को जाने
सो रूप हमकों दिखावो,जो तुमको हमारे अर्थ बर
देनो है या बात कों सुनिके प्रकृति ते पर जो के
अनुभव मात्र सों जानों जाय अक्षर के मध्य में प्र
ऐसो अपनों लोक दिखावत भये और दिखायके पी
आप बोले और कहो तुमकों जो इच्छा होय सो वौ
करें और तुमने मेरो ये लोक देख्यो जाते और उ
कोई भी लोक नाहीं है । औप परे हू नाहीं हैं ।
श्रुति कहे हैं करोरन कामदेवन सों कोटि गुण ला
है जिनमें ऐसे तुम्हें देखिकें हमारे मन क्षोभ कों
भये हैं और कामिनी भाव को प्राप्त भये, याते
तुम्हारे लोक की बास करिबे बारी गोपीजम तुम्हें
मानिके परम तत्व सों भजे हैं,तैसे ही हमारी हू इ
है । तब श्री कृष्णचन्द्र बोले के तुम्हारो मनोरथ दु
और दुर्लभ है, तो भी मैंने अनुमोदन भले प्रकार
कियो है, यासूं सत्य होयवे कूं योग्य है । अबके आ
बारो जो सारस्वत कल्प तामें ब्रह्माजी सृष्टि करिबे

उद्यत हौंय तब तुम ब्रज में गोपी हूजो भारत क्षेत्र भूमि में मेरे श्रीमथुरा मडल में, मैं तुम्हारो रासमंडल में प्रिय करिवे बारो होऊँगो भावसों मेरे में सुदृढ़ स्नेह करिके मोकूं प्राप्त होयके कृतकृत्य होय जाओगी, वाही पहिले प्रतिपादित श्री गोकुलेश पूर्ण पुरुषोत्ताम अपनो दीयो भयो जो वर ताके प्रतिपालन को श्रीमान जो आदि ब्रज-मंडल वृन्दावन श्रीगोकुल में नन्दराय के घर में पूर्व यशोदाजी कूं दीयो जो बरदान ताकी सत्यता दिखायवे कों सत्य संकल्प पूर्ण काम आप श्री यशोदाजी के विषे शुभ सम्वत् में, दक्षिणायन सूर्य में वर्षा ऋतु में महामंगल के देवे बारो जो भादों ता के कृष्णपक्ष में शुभ तिथि अष्टमी बुधवार रोहिणी नक्षत्र में अर्द्धरात्रि के समय श्रीपुरुषोत्तामजी भावात्मक स्वरूप सों योगमाया करिके सहित प्रगट भये, अब श्रीयशोदाजी में प्रागट्यको हेतु कहें हैं । अष्ट वसून में में उत्ताम द्रोण है, नाम जिनको अपनी धरा नाम की भार्या के संग तप करत भये, इत्यादि वचन मूल में है। तिनके भाग्य को विचार करे हैं, मनुष्य देह सों जो नन्दराय जी को ब्रज में जन्म सो प्राकृत ही है । सो श्रीसुबाधिनीजी में कह्यौ है नन्दोत्सव में प्राकृत हू नन्दराय जो महामना होत भये या करिके

आधिभौतिकता दिखाई, धर्म बारे हैं यासूं आध्य
त्मिकता दिखाई है तपश्चर्या करिकें परिपूर्ण दशा
पुत्रीभूत जनार्दन में अन्य कामना छोड़ करिके भगव
ही पुत्र होय या प्रार्थना कूं आधिदैविकता दिखाई ता
प्रमाण "द्रोणोवसूनां" प्रवर है अर्थात् आठ जो व
तिनमें द्रोण ही उत्तम है। काहे सूं लोक की कोही
कामना नाहि है । प्रवर यासूं जो प्रकर्ष करिकें
यहाँ परमेश्वर नें पुत्रपनो स्वीकार कियौ याही
प्रवरता है । याही ते श्रीसुबौधिनी जी में नामकर
प्रकरण में बसुदेव को और नन्दराय जी को समा
धिकरण सों आधिदैविक वसुदेव जो तुम सों तुम्ह
हीं भये हैं, ऐसो कहबो बने हैं अथवा बसून की
देवी सो लक्ष्मी वसुदेवी वो जाके होय सो वसुदेव ता
द्रोण वसून में उत्तम है तिनको जो अवतार नन्द
तिनकूं भी बसुदेध तो योग सूं प्राप्त है । तिनको
पुत्र सो वासुदेव सर्वातीत सबते जुदे । रस स्प
परब्रह्म पूर्णपुरुषोत्तम श्रीकृष्णजी तिनमें जो
वात्सल्यरस सोई इनको रोध मुख्य भक्ति ता
आनन्द को प्राप्त होय, सो नन्द अथवा बाललीला
आनन्द के अर्थ हैं । भूतल पें आगमन जिनको ऐ
श्रीब्रजरायजी कृत सर्वोत्तम विवृत्ति तामें है । तैसें

कृष्णोपनिषद् में श्रीनन्दराय जो कूं परमानन्द के स्फुरण सों नन्दराय बाललीला के मुख्य अधिकारी भक्त हैं । बालस्वरूप और बाललीला के अनुभव करिवे वारे जे नन्दादि भक्त तिनकों विकार सों रहितता और आनन्दमयता और नित्यता दिखाई है । धरा भार्या के संग यासों श्रीयशोदाजी कों हू अधिभौतिकता और आध्यात्मिकता और अधिदैविकता हू जाननी जो महावन में प्राकृत मनुष्य देह सों श्रीयशोदाजू की जन्म की प्रतीतता करके आधिभौतिकता दिखाई सो प्राकृतता दामोदरलीला में जो भगवान को बंधन करत भई सो तामस भाव सों तामस तातें प्राकृत ताहे ये श्रीसुबोधिनी जी में लिख्यो है धर्म विशिष्ट सों आध्यात्मिकता है जैसे द्रोणपसुन में उत्तम तैसे ही धराभार्या उत्तम है अन्यथा जो तिनको सोही स्वभाव न होय तो तप कैसे सिद्ध होय वरानार श्रेष्ठ है । लौकिक जे वासना तिनसों रहित प्रवरा यासूं जो भगवान नें याकों पुत्रपनों स्वीकार कीयो तासों ही आधिदैविकता दिखाई, देवी जो प्रकाशवारी होय ताय कहें हैं वसुदेवी सोही श्रीयशोदा नन्दराय की ब्रज में भार्या भई, तातें श्रीयशोदाजो और देवकी जी, ये दो नाम हैं सो चक्रवर्ति में लिख्यो है द्वै नाम्नी नन्द

भार्या या यशोदा देवकी तिन नन्द की भार्या के दो नाम हैं यशोदा और देवकी यातें ही देवकी को और श्री यशोदाजी को मित्रभाव है, यश के देवे बारी कूं यशोदा कहें हैं सो कृष्ण को जन्मसूं त्रिलोकी में यश प्राप्त भयो और याको जो रसात्मक परब्रह्म पूर्ण पुरुषोत्तम में पुत्र वात्सल्य सों निरोध अतिशय येही मुख्य भक्ति है, ये ही यश की देवी रूप भक्ति नित्य-लीला में है। सो भगवान के खिलायवे वात्सल्यता करवे कू प्रगट भई है। बाललीला रस के अर्थ है आगमन जिनका श्रीयशोदाजी यातेही बाललीला को अतिशय अधिकार बारी है, यातेही ताको विकार को अभाव और परमानन्द मयता और नित्यता हैं। तहां प्रमाण साक्षात् पुरुषोत्तम गोप वेष को धारण क हैं। ये श्रुति हैं, और भागवत में हूँ कह्यो है, नन्दराय जी को जब पुत्र उत्पन्न भयो तब प्राप्त भयो है, आनन्द जिनको बड़े मन वारे होत भये ये गोपिकानन्दन ज्ञानी कूं, तैसो मुख नहीं देत हैं। और हू वहाँ ही प्रमाण है। कात्यायनी ब्रत में कन्या ने बरदान माँग्यो है, न गोप के पुत्र कूं हमारे पति करो और गोपन को भी कथन है हे नन्द ! हे ब्रजनाथ ! तासों तुम्हारे पुत्र हमकूं शंका होय है, और गोपीन को वचन तेरो पुत्र

और चक्रवर्ति टीका में भी लिख्यो है। नन्दपुत्र को जो पद ताको प्राप्त होत भये, और हू वहां लिख्यौ है नन्दराय की स्त्री यशोदा के एक कन्या और एक पुत्र वे दो उत्पन्न भये जो पुत्र हतो सो तो गोबिन्द है नाम जाको और जो कन्या सो अम्बिका मथुराजी को गई और गोपालतापनीय नामके ग्रन्थ में भी लिख्यो है। यशोदानन्दन कूं वन्दना करूँ हूँ गोपाल को रूप है जिनको सम्पूर्ण लोक के मङ्गल रूप नन्दगोप के पुत्र देवतान करिके आदर करिवे योग्य सोई श्रीसुबोधिनी जी में लिख्यौ है। श्रीपूर्णपुरुषोत्तम तो माया के संग नन्दराय के ही घर प्रगटे, ऐसे स्पष्ट ही लिख्यौ है। अब कुमार अवस्था में प्राप्त ऐसे नन्दनन्दन जू को स्वरूप बर्णन करें हैं श्रीयशोदा जी की गोद में खेलत लाड़ लड़ावै को सुन्दर घूँघरवारे बारन की है बेणी जिनकी मोतिन की मालान सों है शोभायमान, मस्तक जिनको, चलायमान हैं कुंडल जिनके और अलकावलि जिनकी मोतिन की पंक्तिन सों मस्तक सो कर्ण पर्यन्त सुशोभित जिनके कस्तूरी के तिलक सुशोभित है मस्तक के आभूषण तिनसों अति सुन्दर है। केशर को चित्र-विचित्र कमलपत्र है। जिनके दोनों कपोलन कुंडल की चलन सों द्युतियुक्त है, कान जिनके चिबुक में हैं हीरा

जिनके काजल आँज्यौ है नेत्रन में जिनके नयनन के प्रान्त तक स्याही की बिंदुन सों सुशोभित है। वो सुन्दर लाल अधर सों स्रवै है ज्ञान और बोध के देवे वारो रस जिनके वात्सल्य भाव सों अति सुलभ है रस को जो बोधन तामें तत्पर है अपने मुखारविन्द में अपने चरण को जो अँगूठा के प्रवेश करिवे में तत्पर है। भक्तिवारेन की गति क्रिया शक्ति के प्रबोध करिवे वारे आप ही हैं। कटि सों लगी भई है मोतिन की माला तिनसों शोभित है। ताके ऊपर मणिन सों जटित है। स्वर्ण की माला तिनसों अतिहि प्रिय है, वक्ष:स्थल शोभायमान है। वाघनखा जिनके मोती और सुवर्ण की मालान सों व्याप्त है। प्रकाशित है उदर जिनको भुजान में सुशोभित जड़ाऊ सुन्दर बाजू जिनके हाथ में जो पटका तासों शोभा बारे हैं। कंठ में है माला जिनके हाथ की दशों आँगुरीन में जड़ाऊ छल्ला अँगूठी जिनके किंकणी और पटका को गुच्छान सौं सुशोभित है। कमर जिनकी वो सुन्दर पेंजिन सौं युक्त धीरे धीरे चलिबे सौं, गोपीजन के मोह करायवे बारे नहि धारण किये हैं, वस्त्र जिननने अपने नखन की कान्ति सों जीते हैं, चन्द्रमा को जिनने अपनो जो परछाँई ताकौं देख देख के हास्य सहित है। मुखारविन्द

जिनको बो ब्रजरज सों लिपट रह्यो है। श्रीअंग जिनको सदाही सर्व शिरोमणि है सम्पूर्ण लीलान में चतुर लीलान सों दूसरो कछू भी जाने नहीं कंदर्प सो करोड़न गुनी है, लावण्यता जिनकी माननीन-के मान को जो दर्प ताके दूर करिबे बारे गोपीजनन के यहाँ दुबक के माखन चुरायबे बारे गोपन कों संकेत-सों बुलाय लेंहै, परमानन्द समूह सदा दु:खन सों विवर्जित हैं। दु:खियान को दु:ख नाहिं देखत हैं और सुखियान को प्रपंच भी नाहिं देखे हैं। दयाके समुद्र अपने वाक्यनके करिबे में हैं, प्रपंच को नाश करिबे में अपने विषय निरोध करायबे में तत्पर हैं, क्षण-क्षण में अपने में बालभाव करिबे में चतुर है। क्षणभर में क्रोध करें, क्षणभर में हँसे, जब कोई गोपीजन कछुकवस्तू दे व आप बहुत ही प्रसन्न होय हैं। अपने भक्त जो तिनके ृदयकी वार्ता जानबेबारे ताते अतिरिक्त और कछू ही हीं है। शंका जो कहो वसुदेवजू के घरमें भगवान गट भये तो वहाँ कैसें स्वरूप सो और कौन प्रकार ों प्रगट भये याको समाधान करिबे कों कहत हैं तहाँ थम भगवत् धाम को वर्णन करत हैं। परमेश्वर को ो धाम है सो श्रीगीताजी में भगवान नें कह्यो है, ाको सूर्य प्रकाश न करत है न चन्द्रमा न अग्नि

जामें यायके फेर आवे नहिं सो मेरो धाम है। अक्षर बैकुन्ठ तेजोमय सनातन बैकुन्ठ है जहाँ ब्रह्मानन्दरूप लक्ष्मीजी हैं और पुरुषोत्तम श्रीहरि हैं जाते मे क्षर त दूर हूँ और अक्षर तें भी उत्तर हूँ याते लोक और वेद में मेरो पुरुषोत्तम नाम सों प्रसिद्ध है। सर्व कारणन को भी कारण, तेज:स्वरूप अक्षर पूर्ण पुरुषोत्तम महात्मा को परमधाम बैकुन्ठ है, नाम जाको उत्तम जरामृत्यु के दूर करिवे वारो, ब्रह्मांड ते ऊपर वायु करके धारण कियो है। तामें रत्नन के सिंहासन प स्थित नानारत्नके अलंकारन सों सुशोभित रत्नन के बाजूबन्द, जिनने रत्नन के पावटे धारण करे भये रत्नन के कुंडलन सों विराजित हैं दोनों कर्ण, जिनके वो सुन्दर पीताम्बरकों धारण करें बनमालासों सुशोभित है शान्तलक्ष्मी धारण किये है। चरणारविन्द जिनके सत्य हैं सनातन हैं। मंद मंद मुसकान सहित है मुखारविन्द, जिनके चार हैं भुजा, जिनके सुनन्द नन्द कुमुद पार्षदन सों सेवित हैं। चन्दनसों चर्चित हैं, सर्वांग जिनके भले भले रत्नन सों जटित है, उज्ज्वल है मुकुट जिनके सम्पूर्ण ब्रह्मादि देवता कलांश कलान सों है मनु मुनीन्द्र मनुष्य और चराचर जाके अंश कलान सों हैं जाको आद्य अवतार श्रीनारायण रूप है ताके ही अंशन सों पृथिवी पर मत्स्यादि

अवतार है ऐसो जाननो जब दैत्यन करिके व्याप्त सगरी पृथिवी भई तब बड़ी दुःखित होयके अपने दुःख के दूर करिबे कूं गौ को रूप धरिके मुखपै पड़े हैं, अश्रुसों के रुदन करत भई करुणा पूर्वक ब्रह्माजी की शरण जाय के अपनो दुःख कहत भई ब्रह्माजी ताके दुःख कों सुनि कें देवतान कों साथ लैके और पृथिवी कों साथ लेयके शिवजी को साथ लेय केक्षीरसागर के तीर पै जात भये तहाँ जायकें देवन के देव जगत् के स्वामी वृषाकपि पुरुष की सहस्त्रशीर्षा इत्यादि वाक्यन सों स्तुति करत भये तब ब्रह्माजी कों आकाशवाणी समाधि में भई ताकों सुनिकें ब्रह्माजी देवतान सों बोले ये सब बात श्रीभागवत में कही है सो जाननी जो समाधि में कह्यो सो कहत हैं। भगवान् पुरुषोत्तम वसुदेवजी के घर प्रगटेंगे सोई श्रीसुबोधिनी जी में स्पष्ट कियो है, वसुदेवजी के भी अंशावतार ही है, साक्षात् भगवान् चक्रादिरूप सों नाहिं प्रगटे हैं तासूँ सत्वके व्यवधान करिके अवतार है भगवान् नाम औरन को भी है यासू पर पुरुष ये कह्यो है सो तो अर्थात् पुरुषोत्तम नहीं ब्रह्मांड ते परे हैं या कहिवे सूं माया के प्रवर्त्तक हैं ये बात सिद्ध भई तासूं परे पुरुषोत्तम ही है सोई प्रगटेंगे और तिनकी सेवा करिवें को सुन्दरता युक्त जे सुर स्त्री अपसरा लक्ष्मी के संग

समुद्र ते उत्पन्न भई है तिनको भोग भगवान ने,
कियो है ते सबरी अपनो जन्म सफल करिबे
अपने अपने योग्य स्थानन में हों और यातें देवतान
स्त्री रूप करिके अवतार दूर कियो ता पीछे थोड़
कालान्तर में वसुदेव देवकी को विवाह भयो तब
ने दायजा दैके विदा करे ता समें आकाशवाणी
के याको अष्टम गर्भ तोकों मारेगो ये सुनिकें
देवकी कों खंग लैके मारिबे लग्यो तब वसुदेवजी
साम दाम दंड भेद करिके समझायो, तब तो कंस
छोड़ दीनी ये अपुने घर गये तब कोई कालान्तर
यथा क्रमते देवकी के छै बालक कंस ने मारे
पीछे, विष्णु को धामरूप अनन्त जो शेषजी हैं ।
सप्तम गर्भ में आये तब यदुन के निजनाथ विश्व
आत्मा भगवान् कंस को भय जानिकें योगमाया
आज्ञा देत भये गोप और गायन करिकें शोभित जो
श्रीगोकुल तामें नन्दग्रह में वसुदेवजी की स्त्री रो
जी रहे हैं तहाँ जायकें देवकी के गर्भ में मेरो धाम
शेष हैं नाम जाको, ताकों वहाँ ते निकासिकें रो
के उदर में धरदे याके अनन्तर मैं हूँ अंश भाग
देवकी के पुत्रता कों प्राप्त होऊँगो या प्रकार चतु
युक्त धर्म सहित सच्चिदानन्द प्रसिद्ध पुरुषोत्तम

के वहाँ होऊँगो, ऐसे कहे पीछे थोड़े से ही कालान्तर में मथुरा में चतुर्व्यूह युक्त भगवान देवकी में आविर्भाव होत भये, पाछे तें सो श्रीभागवत में कह्यो है । के जैसे पूर्व दिशा में पूर्ण चन्द्र उदय होय है, तैसेई प्रगटे हैं ता समें अद्भुत बालरूप धारण कियो कमलवत् नेत्र, चार भुजा तिनमें शंख चक्र गदा पद्म आयुध धारण करे हैं, श्रीवत्सन को चिन्ह कंठ ~~में कौस्तुभ~~ धरे हैं, पीताम्बर धारण करे किरीट कुन्डलन कों धारण कियो है । प्रकाशमान ऐसे स्वरूप कों वसुदेव जी देखि कें स्तुति करत भये । वाही समय में पुरुषोत्तम तो माया के संग श्रीगोकुल में अविर्भाव भये वासुदेव व्यूह भी यही प्रगट भये यह श्रीसुबोधिनीजी मेंश्रीआचार्य्यचरणन नें कह्यो है ताही को टिप्पणी में तथा श्रीपुरुषोत्तम प्रादुर्भाव ग्रंथ में स्पष्ट कियो है, जो नन्द के घर में रसरूप भावात्मक पूर्ण पुरुषोत्तम माया के संग प्रकट भये वे हो व्यापकत्व करिके माता पिता के देखत ही प्राकृत बालक की नाहीं होत भये, ताही समय में महात्म्य के ज्ञानबारी मातृचरण श्रीदेवकीजी कों भावात्मक स्वरूप के दर्शन करिके शुद्ध स्नेह की उत्पत्ति भई तातें माहात्म्यज्ञान को तिरोभाव भयो यह कहह्यो मैं तुम्हारे कारण सूं कंस ते डरपू हूँ, ताके

अनन्तर श्रीमथुराजी तें श्रीगोकुल आवत भये ।

या रीति सों आये सोतो श्रीमद्भागवत में प्रसिद्ध ही है तब वसुदेवजी नन्दरायजी के भवन में श्रीयशोदाजी की शय्या में बालक कों पधरायकें वहाँ सो कन्या कों लेयकें श्रीमथुराजी आवत भये ताही समय में चतुर्व्यूहन के अंशभाग करिके केशरूप करि के नारायण विभाग सहित धर्म युक्त भगवत्सच्चिदानंद प्रसिद्ध पुरुषोत्तम वासुदेव (वसुदेव पुत्र) रसघनीभूत गुणातीत भावात्मक पूर्ण पुरुषोत्तम नन्दराय सुत श्रीकृष्ण के विषें, जैसे मेघन में बिजली लीन होय है ताही रीति सों श्रीवसुदेवजी को लायो भयो स्वरूप अनिर्वचनीय अस्पर्शयोग में लीन होत भयो ताको प्रमाण चक्रवर्त्ती टीका में हू कह्यो है हरि के लीला के भेद मैं स्वरूप को भेद नियामक है जहाँ जहाँ जा अंश के कार्य की अपेक्षा है, तहाँ तहाँ वाही वाही रूप द्वारा कार्य करावें हैं आपतो भक्तन को इष्ट सम्पादन करें है इनसों अतिरिक्त कार्यन में व्यूहन को उपयोग है। दैत्य मारणादि जे अनिष्ट निवारण संकर्षण व्यूह द्वारा करावें हैं आपतो ब्रजभक्तनकों मनोरथान्त फल दान करें हैं ।

अब राधा स्वरूप को वर्णन करत हैं—

जैसे श्रीनन्दरायजी के घर में भावात्मक पूर्ण पुरुषोत्तम मनुष्य नाट्य करिके अविर्भाव भये ताही रीति सों नित्यलीला में विराजमान साक्षात् पूर्ण पुरुषोत्तम स्वरूप सों अभिन्न अपने यूथ की सखियन के के संग मुख्य स्वामिनी श्रीराधा रावल ग्राम में श्रीवृषभानु के घर में, श्रीकीर्तिमातृचरणन में प्रादुर्भाव होत भई ।

यथा क्रम सों बड़ी होयवे लगीं वे श्रीराधा जी भजनानन्द रूप हैं, पर हैं, परमेश्वरी हैं, परम कल्याण रूप हैं, सुन्दर हैं, सुखदायक सुमनोहर श्रीकृष्ण की प्यारी सुशील शोभायुक्त पूर्णकाम बारी और आप तो परिपूर्ण ही हैं। वृन्दावन की अधीश्वरी सनातनी सबन के आधार रूप सर्व की कारण रूप श्रीराधा मुख्य स्वामिनी हैं सो श्रीकृष्ण के अर्द्ध तेज सूं प्रगट भई वैसी मूर्त्तिमती हैं एक ही मूर्त्ति दो प्रकार की है सो वेद में निरूपण कियो है दोय रूप तेज सूं गुण सूं तुल्य है वैसे ही पराक्रम सूं बुद्धि सूं और सम्पत्ति सूं तुल्य है और 'राधा' शब्द की व्युत्पत्ति सामवेद में निरूपण करी है रकार है सो कोटिक जन्म के पाप कूं और शुभाशुभ कर्म कूं दूर करे है। और आकार जो

सौ गर्भ कूं, मृत्यु कूं और रोग कूं दूर करे है। और
धकार है सो आयुष की हानि कूं, और आकार है सो
भव के बन्धन को दूर करे हैं। और जन्म मरणादि
पीड़ा कों हरे हैं, श्रीराधा शब्द को श्रवण स्मरण और
उच्चारन सूं जीवन के सर्व पाप नाश कूं प्राप्त होत हैं
विनमें संशय नहीं है। रकार सो श्रीकृष्ण प्रभु के
चरणकमल में निश्चय भक्ति और दास भाव को देय
है और जो धकार है सो सबन कूं इच्छित ऐसो यह
ईश्वर सम्बन्धी अनन्त सुख देत है और सर्व सिद्धि के
इच्छित ऐसो सर्वोत्तम ऐश्वर्य कूं देत है। धकार है सो
वे ईश्वर के साथ सहवास कूं देत है और जो अकार
है सो पुष्टि सारूप्य आदि मुक्ति को देत है, और हरि
सरिखे तत्व ज्ञान कों देतु है और तेज के समूह और
हरि के विषैदान शक्ति देत है और यज्ञ करनो दान
करनो वेद पाठ करनो तीर्थ करनो पृथ्वी की प्रदक्षिणा
कर्नो सो सब ही राधा सेया की सोलमी कला कों
प्राप्त नहीं होत हैं श्रीराधाजी की चरणकमल की रज
सों पृथ्वी पवित्र होय हैं। तिनके दर्शनमात्र सूं तीनों
भुवन पवित्र होंय हैं। जिनकी प्रीति श्रीकृष्ण की कथा
के विषें होय है और वे सुनत ही जिनको आनन्दाश्रु
और रोमांच होय और जिनको मन श्रीप्रभु की सेवा

दिक में रहे है। विनकूं विद्वान लोग भक्त कहें हैं
विघ्न नहि होय है औंर विनको आयुष्य नाश कों
नहिं होय है। औंर जैसे गरुड़ के पास सर्प नहिं
सके है, तैसे विनके पास यमदूत नहिं आय सकें
र ताके समीप कूं हरि क्षण मात्र भी त्याग नहिं
हैं। और वाकूं पूर्ण अणिमादि सिद्धि प्राप्त
है, और तिनके पार्श्व के विषे रात्रि दिवस
न फिरे हैं। औंर श्रीकृष्ण की आज्ञा सूँ सुदर्शन
सदा विन भक्तन को रक्षा करे है। और कोई भी
कछू भी कर सकत नाँहि हैं, और वाके पास
भी नहिं जाय सके है। जैसे प्रज्ज्वलित अग्नि
खिके पतंग आदि जन्तु पास नहिं जात हैं, व्याधि
त विघ्न वाके पास नहिं आवें हैं। ऋषि मुनि
और सगरे देवता ताके ऊपर सन्तुष्ट होय हैं।
सो सबही ठिकाने निःशंक रहत है, और
धाजी की प्रसन्नता सूँ सुखी रहत हैं। जिनने
पीड़ा कों दूर करी है, ऐसी राधाजू जब हमारे
कृपायुक्त होय हैं तब पुष्टिमार्ग और मर्यादा मार्ग
षे हमारे कहाँ अवशेष रह्यो, मन्दहास्य से जिनके
की पंक्तिरूप मणि की प्रभा प्रकाशित होय रही
ऐसी श्रीराधाजू जब कोई प्रकार सूं हमारे सूं

बोले, जब मुक्ति रूप शुक्ति सों हमारे कहा प्रयोजन
जिनके मस्तक पर मोर पंख सोहत है, वैसे श्यामसु
जिनके मुख में मन्द हास्य सोहत है, ऐसे और मु
करिके मनोहर है, राधिकारसिक वे कृपानिधि मो
अपनी प्रियाजी के चरण की किंकरी करें । श्रीवृ
भानुनन्दिनी राधाजू के प्राणनाथ और वाके श्रीमु
रूप कमल के रसविषे चंचल भ्रमररूप और श्रीरा
जू के चरण तल के विषे जिनने स्थिति करी है,
रसिक शिरोमणि आपकूँ मैं भजत हूँ। ऐसी श्रीरा
जू के साथ श्रीपूर्णपुरुषोत्तम आप लीला सूँ र
करत हैं । और श्रुतियन की अधिष्ठात्री वेदमा
गायत्री सरस्वती जो है, सो परम लावण्यता ब
चन्द्रावली जी चन्द्रभानु के घर में वाकी स्त्री सुषुमा
विषे भगवान के साथ दान मान आदि लीला क
कूँ प्रगट भई ताको प्रकार सर्वोत्तम की स्वत
विवृत्ति में विस्तार सूं है उल्लास और कीर्तन के
हू निरूपण कियो है । यह चन्द्रावली जी की व
आगे कहेंगे, ऐसी श्रुतिरूप गोपिका सहचरी भई।

अब पुष्टिभक्त के निरूपण करें हैं-

यह ब्रजमंडल के विषे सो ही पूर्वोक्त श्रुति, हम
सगरीन की ऐसी करिबे की इच्छा भई है, इत्या

जे प्रथम प्रतिपादन कियो है। सो अपने मनके इच्छित मनोरथ कूं पूर्ण करिबे कूं श्रीमदानन्दकन्द श्रीब्रजचन्द्र के संग रमण करिबे के लिये गोपिका रूप भई तामें प्रमाण गोपी औरगाय ऋचा हैं। ऐसे कृष्णोपनिषद् में कहें हैं तासूं सो गोपीजन भगवान को रूप है जीव रूप नहिं है, लीला के लिये भगवान ने अपने शरीरते निकासी हैं । ऐसे बृहद्वामनपुराण में कह्यो है, बृह्मा कहे हैं, मैंने प्रथम नन्दरायजी के ब्रजकी स्त्री के पदरज की प्राप्ति के लिये साठहजार वर्ष पर्यन्त तप कियो हतो, तथापि मोकूँ तिन गोपीन की चरणरज प्राप्त न भई। भृगु कहे हैं, हे ब्रह्मन् लोक के विषे नारद आदि वैष्णव जो हैं, तिनकों छोड़िकै गोपीन की चरणरज ग्रहण करिबे कूं तुमने काहेकूं इच्छा करी । सो मोकूं महान् संशय है, वाकूं दूर करिबे के लिये आप मोकूं विनको कारण कहो ता पीछे बृह्मा भृगु से कहिबे लाग्यो । के हे पुत्र ! ब्रजसुन्दरी साधारण स्त्री नहीं हैं सो सब श्रुति हैं हे भृगु! मैं शिव और शेषभी और लक्ष्मी भी बिन स्त्रियनके तुल्य नाहिं हैं बाई ते मैं निरन्तर नन्दराय जी के ब्रज की स्त्रियन की चरणरज उनकूं वन्दन करत हूँ, कि इन स्त्रियन की हरिकथा को गायवो तीनों भुवन कूं पावन करे है। जो प्रसाद कूं

गोपी औरयशोदा प्राप्त भई हैं वा प्रसाद कूं ब्रह्मा
और श्री अंग को है संग जाकूं अथवा जिनके अङ्ग
जिनको आश्रय है वो श्रीलक्ष्मी भी प्राप्त नाँहिं भई है
अर्थात् मुक्तिदायक प्रभु को जो प्रसाद गोपी यशोदा
प्राप्त भयो है, सो ब्रह्मादिक देवताओं को भी दुर्लभ है
और सोलह हजार ऋषि कुमार ने अति उग्र तपश्च
करिके पीछे श्रीब्रज गोकुल में गोपीजन भये, ता
प्रमाण बाराहपुराण में है। श्रीकृष्ण के साथ रम
करिबे कूं वे सोलहहजार ऋषिकुमार गोपीन के
कूं ग्रहण करत भये, और तिनके साथ श्रीकृ
भगवान रमण करत भये। ऐसे वाक्य महाकूर्मपुरा
में है जो महात्मा ऐसे अग्नि के पुत्र तपसूं स्त्रीपने
प्राप्त भये, और जगत की उत्पत्ति रूप ऐसो वासु
श्रीकृष्ण जो अजन्मा और विभु है, विन पति कूं
भये यह ब्रज के विषे, कौन प्रकार सूं वा गोपीन
साधन कियो कि जासूं भगवान की पत्नी भईं
भागवत में हेमन्त के प्रथम मास में नन्दरायजी
ब्रज की कुमारिका इत्यादि।

हेमन्त प्रथमेमाभिनन्दब्रजकुमारिकाः।

व्रताचरण के आरम्भ में श्रीयमुनाजल में
नादि करिके, बालुका की मूर्ति करिके, सर्वोपचार

ताको पूजन करत भईं और यह मन्त्र कों जपन लगीं। सो मन्त्र—हे कात्यायनि महामाये हे, महायोगिनि हे, अधीश्वरी, हमको प्रत्येक कों तू नन्दरायजी के पुत्र श्रीकृष्ण कों पति कर हम सगरी तेरे कूं प्रणाम करत हैं। वा श्लोक के अर्थ को विस्तार श्रीसुबोधिनीजी में लिख्यो है। तासूं यहाँ विस्तार नहिं करत हैं, पीछे श्रीकृष्ण भगवान यह ब्रजकुमारिकान के व्रतसूं प्रसन्न होयकें मैं तुम सिगरीन कूं शरदऋतु के विषे रास-रमण करवाऊँगो ऐसे वरदान दिये। ता पीछें यह गोपिन के चीरहरण करिके सगरीन को लज्जा रूप, अन्तराय दूर कियो। ता पीछे रासक्रीड़ा के विषे तिन सगरी गोपीन को अङ्गीकार कीयो, और अपने सत्य वचन को प्रतिपालन कीयो। रासक्रीड़ा करिकें सो रसानन्द की पात्र श्रीयमुनाजी हैं। तासूं श्रीयमुनाजी के विषें जलक्रीड़ा करी, तासूं श्रीयमुनाजी में दोषको निवारण करिवे को सामर्थ्य है भगवत्प्राप्ति विषयक प्रतिबन्धक विघ्न को हरण करिवे को सामर्थ्य श्रीकृष्ण भगवान ने श्रीयमुनाजी कों दियो। और पुष्टिमर्गीय अष्ट-विधिऐश्वर्य और सकल सिद्धि के हेतुपनो तथा शुद्धि सम्पादकपने सूं भगवद्भाव की वृद्धि करिवेपने सूं, और भगवत्सम्बन्ध प्रतिबन्धक निराकरण करिके

भगवत्स्वरूप के अनुभव की योग्यता को कार
त्रिभुवन को पवित्र करिवेपनो और भगवत्समान ध
पनौ बिना यत्नको प्रभुसाथ सम्बन्ध को सम्पा
करिवे पनो और भगवान के प्रिय कलिके निवार
करिवे पनो भगवदीय के उत्कर्षता को करिवे प
भगवत्प्रियत्व सम्पादन करिवेपनो शरीर के नवीन
को साधकपनो प्राप्त होय है । और पुष्टिमार्गी
षड्विधऐश्वर्य सम्पन्न जैसें भगवान हैं । वैसें सर्व श्र
यमुनाजी में हैं, ऐसी सूचना करी है । शिव, ब्रह्मादि
देवन ने हूँ,आपको बाही रीत सों,पुष्टिमार्गीय छः प्रक
के जे ऐश्वर्य हैं । तिनसों युक्त श्रीयमुनाजी भी अन
गुणन सों, भूषित हैं । यह ऐश्वर्य को धर्म है, करिवे
और नहीं करिवे को अन्यथा करिवे को समर्थ है
शिव ब्रह्मादि करिके स्तुति करिवे योग्य हैं । ध्रुव अ
पराशर के मनवांछित फल दैवे बारी हैं । मेघ
समान है वर्ण जिनके निरन्तर प्रभुसान्निध्य करि
भक्ति के दैवे वारी हैं । सम्पूर्ण गोप तथा गोपीन
आवृत है इन विशेषणन सों, ऐश्वर्यादि लक्षण दिखा

अब धर्मी स्वरूप को वर्णन करत हैं-

कृपा के सागर जो श्रीकृष्ण तिनसों मिली
जैसें श्रीयमुनाजी को सेवा के उपयोगी देहादिक संपा

सों सेवकन को सृष्टि कर्तृत्व है, तैसे ही श्रीयमुनाजी के संग के पाछे श्रीगंगाजी को हू देहादि सम्पादन पूर्वक सेवा करायवे की सामर्थ्य है । यह उत्कर्ष श्रीयमुनाजी के संगहीसों भयो है । पहिलें पुराणादिकन में दर्शनमात्र सों ब्रह्महत्या के हरिवे बारी या रूप को महात्म्य हतो; पहिलें जो महात्म्य कह्यो है । सो महात्म्य नहीं हतो । हे यमुने तुमकों प्रणाम है तिहारे जो चरित्र हैं सो अति अद्भुत हैं । तुम्हारे केवल जलपान करिवे सौं कबहूँ यम की यातना नहीं होय है । तुम्हारे सेवन सों मनुष्य अति प्यारो होय जाय है, जैसें प्रभु को गोपी तृषा निवारण निमित्त भावना बिना भी जो जलपान करे तिनको हूँ, आप फल दैवे बारी हो। यही तुम्हारो अद्भुत चरित्र है, कदाचित् कोई शंका करे कि यम की यातना तो भगवन्नाम स्मरण सों ही दूर होय है, तो यामें कौन अद्भुत चरित्र भयो ताको समाधान यह है कि कदाचित् नामादिक स्मरण में अपराध होय जाय, तो मुख्य फलकी प्राप्ति नहीं होवे और यहाँ तो तृषा के निवारण के अर्थ ही जलपानमात्र सों नुख्य फल की प्राप्ति होय है । यह ही माहात्म्य विशेष है । और हे यमुने ! जो कोई मनुष्य तुम्हारो नमन स्मरण करें हैं तिनके सम्पूर्ण दुःख दूर होय

जाँय हैं । तथा निश्चय भगवान में प्रीति होय है तासों सकल सिद्धिन की प्राप्ति होय है । स्वभाव को विजय होय है, यह श्रीआचार्य्यन की आज्ञा है या री सों भगवान की चौथी प्रिया श्रीयमुनाजी जा योग्य हैं ।

ऐसे मुख्य स्वामिनी श्री राधाजू और चन्द्राव तथा सहचरी के साथ और जिनमें श्रीराधाजी मुख्य तथा श्रीयमुनाजी प्रभृत्ति स्वामिनीजी के साथ औ श्रुतिरूपा जो मुख्य गोपिका जे श्रुतिकुमारिका औ श्रीयमुनाजी की सम्बधि ऐसी सहचरी के सा रमण करत हैं सो स्वरूप के गुण कछू कहें हैं ।

अथ मूलरूप को वर्णन—

सद्धर्मके मूलस्वरूप और आनन्द के मूलरूप त मंगल के मूलरूप सर्व सौन्दर्य के मूलरूप श्रेष्ठ प्रे के मूलरूप अखंडित सर्व प्रकार के सामर्थ्य के मू रूप, आधार के आधार रूप और स्वाश्रय रूप, औ अलौकिक लावण्य के समूहरूप सर्व प्रकारके सद्गु के मूलरूप छः प्रकार के ऐश्वर्य करिके युक्त सुन् मनोहर और चातुर्य की मूलरूप और चतुर महा उ तथा तेजोमय है । कृपा को समूह रूप और साकार संग्रह रूप और श्रेष्ठ पुरुष रूप जिनको आकार है औ

आनन्दमय जिनको विग्रह है शुद्धाद्वैतरूप सदा शुद्धरूप स्वभक्त को आनन्द की वृद्धि करिबे बारे आनन्द मय है श्रीहस्त जिनको और आनन्दात्मक है चरण जिनको और आनन्दमय है श्रेष्ठ श्रीमुख जिनको तथा जिनको सुन्दर उदर भी आनन्दात्मक ही है । और शोभायमान है अप्राकृत है, अति सुन्दर है ललित है, दिव्यरूप है, भक्तन के भावानुसाररस के प्रगटायवे में तत्पर नित्यलीला के विनोदी सदा सर्वदा अखन्ड एकस्वरूप स्वच्छ रत्नन सों मंडित निर्दोष पूर्ण गुणरूप स्वेच्छा सों पूर्ण सुन्दर शोभा सों युक्त व्यक्तस्वरूप और अव्यक्तस्वरूप ईश्वर नियन्ता सर्व लोक के मनकों हरिवे बारे दिव्य रस के मन्दिर रूप अपने स्वरूप में प्रकाशवे बारे, अथवा स्वप्रकाशरूप तैसे ही सर्व को प्रकाश करिवे बारे साक्षात् परमानन्द स्वरूप श्रीयशोदाजी के उत्संग में लालन पालन है । जिनके तैसे ही नन्द कों आनन्द देवे बारे श्रीकृष्ण प्रभु पूर्वोक्त ब्रजभक्तन के संग श्रीगोकुल के विषे अपनी रसात्मक लीला कों करत हैं ।

अब यह श्रीगोकुल को वर्णन करें हैं—

गोपन को सुख देयबे बारो गऊन को प्रिय, पापन को नाश करिबे बारो साक्षात् श्रीकृष्णचन्द्र के चरणकमल की रेणु सों पवित्र साक्षात् पुष्टिपुरुषोत्तम को लीलाधाम है । संसार के दुःख को नाश करिवे बारो,

सुन्दर जे दैवीजीव तिनसों मनोहर सम्पूर्ण पीड़ान कों दूर करिवे वारो। गोपिन को मन रूपी जो कमल ताके प्रकाशक, सूर्य्य जो श्रीकृष्ण तिनके संचार सों सुन्दर नन्दनन्दन को जो संवास तासों अति प्रफुल्लित, भावात्मक जो भक्त तिनको अपने शरीरके आनन्द को देयवे बारो, पवित्र पृथ्वी को भूषण श्रीगोकुलेशजी को श्रेष्ठ प्रेम को स्थान, अपने करुणा पात्र पुष्टिमार्ग ही में एकनिष्ठा हैं। जिनकी ऐसे वैष्णव जामें बसे हैं जे गोकुल को सेवन, दर्शन स्पर्शन ते इष्ट को देयबे बारो, नित्य श्रीकृष्णजी की भक्ति रूपरत्न को देयवे बारो, जो जीव श्रीगोकुल में बास करें हैं, ते साक्षात् श्रीपूर्णपुरुषोत्तम की चरणकमल की सेवा में वसें हैं। ऐसो जो श्रीगोकुल तामें साक्षात् पूर्ण पुरुषोत्तम श्रीकृष्ण केवल रस रूप बारी लीलान कों करें हैं। यासों बाललीलान के विषय में जे महात्म्यरहित रस के प्रकाश करिवे वारी लीला हैं, वे ही पुष्टिलीला समझनी चाहियें। चौक में घुटआन सों चलनो, दही की मथनी को पकरिबो, माखन को चुरायबो, गऊन को चरायवो, गोपन के बालकन में नाचनों, दही को दा माँगिवो, महलन में हिंडोरा झूलनों याही रीतिसों अनेक प्रकार की पुष्टिलीला श्रीगोकुल में कीनी हैं

वाही रीति सों नाना प्रकारकी क्षण क्षण में बिलक्षण लीलान को विधान सब पर्वतन में श्रेष्ठ आछी आछी झरना बारी जो गुहा तिनसों युक्त रम्य हरि दासन में श्रेष्ठ जे श्री गिरिराज, तामें प्रथम कहि आये, ऐसे जे ब्रजभक्त तिनके संग श्रीनन्दकुमार दही को माँगिवो इत्यादि, तथा दीपमालिका में ब्रजभक्तन सों लेयवो देयवो बेचिवो तथा पुष्टियज्ञ को उत्सव भोजन, गोवर्द्धन को धारण करिवो, कुसुममंडप को रचनो इत्यादि लीला कीनी हैं, तिन लीलान को मनोहर स्थान रूप—

श्रीगिरिराज को वर्णन

श्रीगोवर्द्धन जो पर्वत है सो साक्षात् हरिदासन में श्रेष्ठ है, भक्तिमान है। श्रीकृष्णचन्द्र के चरणकमल के स्पर्श सूं रोमांचित है। तथा अपने जो कन्दमूल सरस मधुर जो फल चंचल जो नवीन पल्लव तथा सुगन्धि सों प्रिय कृष्ण के तुल्य, पृथ्वी में अति दुर्लभ श्रेष्ठन करिके पूजनीय मुक्ति फल को देयवे बारो ब्रह्महत्यादि पापन को नाश करिवे बारो, सम्पूर्ण कष्टन कों दूरकर्ता, धनधान्य भूमि सोभाग्य सर्वसम्पति को देयवे बारो, संसार को जो भय ताको नाशक ऐसे गिरिराज में भक्तिभाव सों युक्त जे बास करे हैं ते भगवान कों अति प्यारे हैं। श्री गोवर्द्धन भक्तन कों दान नियम

तप व्रतादिकन कों कहा कार्य है, जे जीव तहाँ वास करे
हैं ते अति पुण्यात्मा हैं तिनके दर्शन सों सम्पूर्ण पाप
नाश होय जाँय हैं। जो प्रेमपूर्वक श्रीगिरिराज को
दर्शन करें हैं वे ही सब धर्मन के कर्ता तथा सब पापन
के नाश करिवे बारे हैं। जो मनुष्यन में श्रेष्ठ श्रीगिरि-
राज में भक्ति तथा बिनकी शिला कों स्पर्श करें है
ते धन्य हैं! और जो नेत्र श्रीगोवर्द्धन के दर्शन करें
हैं, ते उत्तम हैं! और जो प्रातःकाल श्रीकृष्ण के अति
प्रिय श्रीगिरिराज को दर्शन करें हैं, तिनकों फिर या
लोक में जन्म नहीं होय है और जो आनन्द सूं नित्य
श्रीहरिदास वर्य्य श्री गोवर्द्धन की प्रदक्षिणा करें हैं ते
देवेन्द्र के वैभव कूं तुच्छ गिने हैं। वो भगवत् लोक
में वास करें हैं तथा उनकों हजार अश्वमेध यज्ञ को
फल प्राप्त होय है। पापन को नाश करिबे बारो अति
पावन दर्शन मात्र सो, ब्रह्महत्यादिक दोष हरन बारे
हैं। याही सूं इनकों नित्यता तथा आनन्दमयत्व निश्चय
सिद्ध है।। प्रकरणवश सों श्रीगोवर्द्धन को महात्म्य
और भी कहें हैं। या समय में पुष्टिभक्ति श्रीगिरिराज
ही हरिदासन में श्रेष्ठ हैं। तामें कारण और जे हरि
दास हैं, तिनके मर्यादा मार्ग मिश्रित पनो है। यह ता
शुद्ध पुष्टिभक्त हैं। श्रीकृष्ण के हू, श्रम के हरिवे बारे

स्वार्थ को लेश हू नहीं है उन्ही के सुखसूं सुख मानवे बारे हैं। और साधन रहित नीच जे पुलिन्दिनी तिन को अपने सम्बन्ध सों भगवान के चरण कमल कों प्राप्त करिवे योग्य कीनी, याही सूं इनकी उत्कर्षता है। जो साक्षात् पूर्णपुरुषोत्तम के स्वरूप ज्ञान को अनुभव करावत हैं। उद्वेग प्रभृति जे प्रतिबन्ध तिनकों दूर करें हैं, साक्षात् भगवान ने आप ही पूजन तथा, पुष्टि यज्ञ करिके वृष्टि के सात दिन पर्य्यन्त गोवर्द्धन कों, धारणकर अपने योग सों व्रजवासिन की क्षुधा पिपासा निवृत्ति पूर्वक अनिवर्चनीय सप्त देवऋषि पितृरूपादि जे रक्षा सों तिनकों पृथक् करिके स्वयं आपही ने रक्षा करी है।

श्रीगोवर्द्धन कूं धारण करि रहे हैं—ऐसो श्री-गिरिराज हैं, अब औरहू, श्रीगोवर्द्धन के महिमा को वर्णन करे हैं। हे मुनिसत्तम! भगवत् सम्बन्धी गोवर्द्धन के आराधन को, जो पुण्य है, ताकों मैं कहूँ हूँ। जिनके अन्वेषण मात्र सों, मनुष्य सगरे पापन सों छूट जाय है। यासों परे तीन हूँ लोकन में पुण्य नाहीं विद्यमान है। सम्पूर्ण कामनान कों देयवे बारो जासूं परे कछु और कल्याण नाहीं है। सो मैं सत्य कहूँ हूँ—

पापीनहूँ को एक बारहू गिरि को पूजन मुक्ति

देयबे बारो है । भक्ति को देयबे बारो है । जा वैष्णव के गृह में एकहू बार जो गोवर्द्धन को पूजन होय ताके पितृ कोटि कल्प पर्यन्त परितृप्त होंय जाँय हैं । जा प्रकार सूं भगवान पुरुषोत्तम श्रीगोवर्द्धन के पूजन सों सन्तुष्ट होंय हैं । तैसे और बात सूं प्रसन्न नाहीं होंय हैं। यामें सन्देह नाहीं, तथा जो मनुष्य श्रीगिरिराज को पूजन करें हैं । तिनकों तप दान तीर्थ विधि पूर्वक योगादिकन सों कहाकाम? विनकों हरिदास के श्रीगोवर्द्धन के पूजनमात्र सों ही सर्व पुन्य प्राप्त होंय जाँय हैं

वस्त्र आभूषण सुगंध भोजन सामिग्री नाना प्रकार सों श्रीगिरिवर कों गन्ध पुष्प धूप दीप ताम्बूल फलादिकन सों यथा शक्ति पूजन आराधन करें हैं तथा ब्राह्मणन कूं भोजन करावे हैं, भेट करें हैं, परिक्रमा देय हैं, दक्षिणा देय हैं, ताको फल माहात्म्य में वर्णन नाहीं कर सकूं हूँ या समय में तो यह सम्पूर्ण लक्षण केवल हरिदासवर्य्य में ही हैं । या काल के भगवदीय के सम्पूर्ण लक्षणन को अभाव है साक्षात् पूर्ण पुरुषोत्तम ने स्वतः इनकों महात्म्य प्रकाशित कियो है तथा अब गणना करिवे बारे मनुष्यन कूं, और बनावासियन की इच्छा प्रमाण रूप को ग्रहण करिवे बारो यह श्रीगिरिराज है । अवज्ञा करे ताकूं हनन करत हैं।

अर्थात् अवज्ञा करिवे वारे हैं । काम रूपी स्वेच्छाचारी रूप मनुष्यन को और बनवासिन कूं हनें हैं । तासूं अपनेन जनन कूं गायन कूं सुखरूप ऐसे यह श्री गिरिराज हैं । ताकूं हमतो अपने तथा गौपन के कल्याण के लिये नमन करें हैं । यह सदा ही स्मरण पूजन करिवे योग्य हैं । और जो कोई अपनो कल्याण चाहे तो इनकूं नमन करे, ऐसे श्रीकृष्ण गोवर्द्धनधर ने श्री भागवत में आज्ञा करी है । ऐसे हरिदासवर्य को वर्णन करिके, अब श्रीवृन्दावन जो क्रीड़ास्थल है, ताको वर्णन करें हैं ।

अथ वृन्दावन वर्णन—

अति पवित्र और दव्य नाना प्रकार के ताल तमाल लवङ्ग शाल कदम्ब आम्र कपित्थ पीपल वट जामुन पनस पलाश के जे वृक्ष तिनके समूह सों युक्त मनोहर जे पुष्पन के गुच्छा तथा झरना तासों शोभित, पर्वतन के शिखरन सों शोभित है । पक्षी तथा झरना ताके शब्दन सों सन्तुष्ट जे सारस हंस कोकिला जिनके शब्दन सों शब्दित है, हरिणी गन्ध मृग बानर आकाश मार्ग में उड़न बारे जे और पक्षी तिनसों मन कों हरिवे बारो, मुनि जनन के माननीय श्यामसुन्दर के यश को गान करिवे बारे भौंरान सों शोभायमान सुगन्धयुक्त जे वृक्ष तिनसों मन हरिवे बारो साक्षात् श्रीकृष्ण जामें

विराजमान रहे हैं। सर्व तीर्थन में तथा सम्पूर्ण बनन
सों श्रेष्ठ दर्शन सों मतोभिलाषित फल देयवे बारो, तथा
भक्तिपूर्वक वास करिवे बारेन को शीघ्र ही मनोबांछित
सिद्धि करिवे बारो है।

वृक्ष वृक्ष में मुरली धारण करिवे बारे विराजे
हैं। और पत्र पत्र में चतुर्भुज रूप निवास करें हैं।
ऐसो वृन्दावन जामें स्नान बिना स्नान की कथा ह
नहीं है। सदा पवन के रज ते परसन ते वृक्षन के परम
पवित्र होय जांय हैं। श्रीकृष्ण की लीला को अनुभव
देयवे बारो पुष्टि सृष्टिसों सुशोभित, भावात्मक जे साज्ञात
पुष्टि पुरुषोत्तम तिनकों जो कृपादान को रस ताको
धारण करिवे बारो नाना प्रकार के जे कुञ्ज तिन सों
युक्त प्रेम को स्थान, गोपी जनन को आनन्द देयवे बारे
ऐसो श्रीवृन्दावन परम रमणीय रासस्थल में, पूर्व में
कहे जो बजभक्त तिनकों जो आज्ञा कीनी हती। ताको
सत्य करिवे कूं साक्षात् श्रीकृष्णचन्द्र हू शरद् काल की
सुभग मनोहर जो रात्रि ताकूं देख प्रभु भक्ति योग
करायवे वारी अन्तरंग रूपा योगमाया के आश्रित
रमण करिवे कूं मन करत भये। यह सर्व विस्तार
श्रीभागवत में प्रसिद्ध है। वे जो वृन्दावनचन्द्र हैं, तिन
ने वेणुनाद करिके, श्रुति रूपा जे गोपिका कुमारिक

तिनको बुलाये तथा बिनके भाव की परीक्षा कर, लघु
रास करिके अन्तर्धान होयकें, विरह को अनुभव कराय
कें पाछे सों साक्षात् मन्मथ के मन्मथ रूपता रूपसों
प्रकट होयकें, महारासोत्सव में उनहीं के संग विहार
करत भये।

अब योगमाया को विशेष विवेचन करें हैं। उत्तर
श्रृङ्गार रस रूप को और निरन्तर स्थायी भाव संज्ञक
ऐसो श्रीकृष्ण के भावरूप अग्नि धारण करिवे बारी
श्रीमत्स्वामिनीजी की सखी शक्ति श्रीअङ्ग सों प्रगटी
तिनके सामर्थ्य के अधिकरणभूत योगमाया है। यासूं
श्रीसुबोधिनी के विषै अन्तरंग भक्तत्व और सर्वरूप
होयवे की सामर्थ्य ताको सम्पादन कीनो है। या कारण
सूं योगमाया के संगही भगवान को आत्म योग है।
जासूं शुद्ध ब्रह्म पुरुषोत्तम आपही साक्षात् जो कछु श्री-
स्वामिनी जी करें हैं तैसे ही वा योगमाया के अभिप्राय
को देखकें, आपकी इच्छा सों सर्वकार्य करें हैं। सो
योगमाया भगवत् संग सुख सेवा परम अन्तरंग भक्त
है। तासूं करिहे ताके अनन्तर जितनी गोपिका हीं
तितने ही रूप धारण करिके भगवान् अपनी लीला
सों रमण करत भये। या रीति सूं भगवत् संग सों
प्त है रसानन्द जिनको, ऐसी जो गोपिका ते भगवत्

की महाउदार लीलान कों प्रेम करिके गावत भ
रासलीला के अनुभव कूं प्राप्त होत भईं, सोई वि
एडनान्तर्गत नित्य लीलावाद में बाल स्वरूप सों ले
जो जो लीला करी हैं। जैसे जैसे स्वरूप सूं तिन स
कों सर्वदा नित्यत्व श्रीप्रभुचरण ने प्रतिपादन कियो
या रीति सूं, नाना प्रकार के जो बाल पौगण्ड कि
चरित्रन में उनके गुण कर्म के अनुरूप लीलान को
स्वरूपन को सम्पादन कियो है। ताको कहें हैं।

श्रीबालकृष्ण, श्रीनवनीतप्रिय, श्रीनटवर, श्री
श्रीगोवर्द्धनधरण;श्रीमथुरेश,श्रीगोकुलचंद्रमा,श्रीद्वा
श्रीमदनमोहन, श्रीवृन्दावनचन्द्र, श्रीकृष्ण, श्रीगो
श्रीगोपाल प्रभृति भगवत् नाम तथा स्वरूप सब
विलास करें हैं। तथा बाल लीला सों लैकें, रास
पर्य्यन्त जे लीला तथा तिनके जे भक्त तिनकों हू
न्द मयत्व नित्यत्व है। और याही रीति सूं श्रीगो
गोवर्द्धन वृन्दावन में श्रीकृष्ण परत्माने बहुत
करी हीं, तथा अनिष्ट निवारक जो लीला ब्रज में
सोतो अंश कला व्यूहन द्वारा करवाईं, सो ना
विवृति में कह्यो है। पुष्टिपुरुषोत्तम भगवान
निवारण तो संकर्षण द्वारा करावें हैं आप तो
के मनोरथ कों सम्पादन करे हैं। शिक्षापत्र में हू

है। अंशन के जे कार्य्यन कों मूल रूप में जे लगावें हैं, ते मूढ़ता को प्राप्त होय हैं। पृथ्वी को भार हरण तो कला रूप ने ही कियो, और भगवत् पीठिका में ही कह्यो है। पूतना वधादिक जे लीला हैं,ते संकर्षण ने ही कीन्हीं हैं। और कौन बिना उनके स्पर्श मात्र सों पापन को नाश करता है। लीला भेद में स्वरूप भेद नियामक है। यह श्रीसुबोधिनीजी में कह्यो हैं। तथा यमुलार्जुन के भंग में हू संकर्षण तथा धर्म प्रतिपालन में मर्यादा में अनिरुद्ध बिन दोनोंन के देवता प्रमाण में प्रद्युम्न मोक्ष देयवे में वासुदेव या प्रकार सूं जो जो चरित्र अनिष्ठ निवारक तथा माहात्म्य सम्पादक है। वे सब चारों व्यूहन को कार्य जाननों।

मर्यादा रहित परम आनन्द रूप बाललीलादि भेद, सो केवल आपही ने ब्रज में कीनी हैं। तथा ब्रज में स्थित होयकें नित्य रासलीलान को करें हैं। तथा रासलीला क अनन्तर ग्यारहवें वर्ष पीछे मथुरा सूं अक्रूर जी आये विनके संग पूर्ण पुरुषोत्तम श्रीकृष्ण बलदेवजी के सहित मथुरा जी पधारे, तथा शिक्षापत्र मेंहूँ कह्यो है, सम्पूर्ण धर्म विशिष्ठ मर्यादा सहित पुर में विराजिकें वहाँ हूँ रूपभेद करिके क्रीड़ा करे हैं। द्वारिका में हूँ मर्यादा विशिष्ट राजलीला कीनी है।

सो भागवत उत्तरार्द्ध में प्रसिद्ध सो तिन लोलान
तथा तिन स्वरूपन कों नित्यत्व विद्वन्मंडन में निरू
कियो है। चक्रवर्त्ती टीका में हूँ, कह्यो है। गोपेन्द्र
नन्दरायजी तिनके पुत्र वृन्दावन कों परित्याग क
हैं तासूं सब पदार्थन को नित्यत्व अन्यत्र नहीं प
अखँडत्व निश्चय है—

पुष्टिमार्गीय आचार्य गुरु के बिना पूर्व प्रतिप
कियो जो स्वरूप ताको ज्ञान कैसे होय सकै है। त
प्रमाण आचार्य्यवान् जो पुरुष है सोही साक्षात्
पुष्टि पुरुषोत्तम कों जान सके हैं,ताके निमित्त श्रीआ
र्यचरणन को स्वरूप निरूपण करें हैं।

अथ आचार्य स्वरूप को वर्णन–

प्रथम सारस्वत कल्प में शुद्ध पुष्टिभक्ति मार्ग
कमल ब्रज सरोवर में प्रादुर्भाव भयो, परन्तु व
प्रकाशक जो आचार्यरूपी, सूर्य है तिनकी प्राप्ति
मार्गरूपी, कमल खिल्यो नहीं अतएव याही ते पुष्टि
के प्रफुल्लित करिवे कूँ, भ्रमररूपी जे निस्साधन
हैं। तिनकूं पराग रसदान देवेकूं श्रीकृष्ण ने स्वमु
रबिन्दाग्नि स्वरूप भक्तिमार्ग रूपी कमल के प्रका
सूर्य श्रीबल्लभाचार्यजी कूं अपनी आज्ञा देयके
करत भये क्यों जों या संसार में मनुष्यन कों धर्म

काम मोक्ष यह चार अर्थ हैं। तामें मोक्ष चौथो अर्थ है, सो अनेक जन्मन की सिद्धि करिकें प्राप्त होय है। ताहू में अक्षर ब्रह्म की प्राप्ति रूपा मुक्ति तो हजारन में कोई बिरले जन की होय है। तो निस्साधन जीवन को जन्म तो वृथा ही भयो, तिनके उधार करिवे के लिये, श्रीकृष्णजी अपने मुखकूं अपनी वाणी करिकें प्रगट होयवे की आज्ञा देत भये, सो प्रकार वल्लभाष्टक में कह्यो है। रासलीला रूपी अमृत समुद्र तिनको भार ताके आनन्द को समूह ताके मध्य में निरन्तर बिराजिवे बारे, ऐसे जो श्रीवृन्दावनचन्द्र तिनके स्वरूप को जो प्रभाव असाधारण लीला करिवे में है। मन जिनको तिनकी आज्ञा करिके, अति करुणावान् अग्नि स्वरूप श्रीआचार्यजी या भूतलपै श्रेष्ठ मनुष्य की आकृति करिकें प्रगट भये हैं।

जो श्रीवल्लभाचार्यजी या पृथ्वी पै प्रगट न होते तो भूतनाथ जो महादेवजी हैं। तिनने कही जो अंधकार रूप असत् मार्ग ताके मोह करिके, दैवी जीव भी वेदमार्ग में चलिवे में अन्ध तुल्य होय जाते, और मनुष्यन कूं ब्रजपति जो श्रीकृष्णचन्द्र हैं। तिनकी हू साक्षात् प्राप्ति न होती। तब ये निःसाधन देवी जीवन को, जन्म निज फल करिकें रहित वृथाही होय जातो,

और अज्ञान है,आदि में जिनके ऐसे जे काम क्रोध लोभ
मोह मद मात्सर्य्यादिक भगवन्मार्ग के जायवे में यह
अंधकाररूपी प्रतिबन्ध हैं, तिनके नाश करिवे में चतुर
याते अग्नि स्वरूप वर्णन किये हैं । परन्तु यथार्थ जो
स्वरूप बिचारिकें देखें हैं, तो साक्षात् भावात्मक श्री-
कृष्णाही श्रीआचार्यजी स्वरूप करिकें प्रगट भये, याही
सों संपूर्ण बुद्धिवान जन श्रीआचार्यजी कूं साक्षात् श्री-
गोकुलेश जानिकें ही भजन करे हैं। और सप्तश्लोकी में
भी कह्यो है श्रीमद्वल्लभाचार्यजी के नाम के समान को
दूसरो न तो भयो , और न कोई आगें होयवे वारो है
और प्रथम तो या जगत में पंडिताई थोड़ी है । और
जो थोड़ी सी है भी तो वेद में गति नहीं, कदाचित् वामें
गतिहू भई तो क्रिया शुद्ध नहीं, कदाचित् कोई में क्रिया
शुद्धि भी भई तो हरिके मार्गमें परिचय नहीं, कदाचित
कोऊ को परिचय भी भयो तो साक्षात् ब्रजपति जो श्री-
कृष्ण हैं तिनमें प्रीति नहीं, ये सबरे गुणन करि
शोभित तो श्रीमहाप्रभुजी ही हैं ।

यह श्रुति में हू कह्यो है सो अलौकिक अग्नि
वैश्वानर श्रीआचार्य्यजी पुरुषाकार हैं । और पुरुषोत्त
के मुख में स्थिति हैं, और श्रुति रहस्य में हू कह्यो है
परब्रह्म ने ब्राह्मण रूप धारण कियो है, तहाँ शं

होय है कि यहां श्रीवल्लभाचार्यजी को नाम तो स्पष्ट कह्यो नही है, यह श्रुति विनपै कैसें जानी जाय ताको समाधान या श्रुति में सबही धर्म श्रीवल्लभाचार्यजी के ही कहे हैं । ताते धर्म स्वरूप श्रीचार्य्यजी में ही अर्थ निश्चय होंय हैं, क्यों जो औरहू धर्म वर्णन करें हैं । कि पृथ्वी के बिषे दैवी जीवन के भवरोग निवारण के लिये, औषधी रूप धारण कियो है । सौहू बचन द्वारा उद्धार कियो बाणी के पति हैं तातें बड़े विष्णु साक्षात् पुरुषोत्तम स्वरूप हैं,या रीति सों निस्साधन दैवी जीवन को उद्धार श्रीमहाप्रभुजी ने कियो । और तिनमें सूं भी रहे, जो निःसाधन दैवी जीव तिनके उद्धारार्थ श्रीआचार्यजी ने श्री गुसाँईजी, श्री विट्ठलनाथजी को, प्राकट्य कीयो । सो केवल पृथ्वी पै शुद्ध पुष्टिभक्ति के प्रचार के अर्थ अन्वय पुत्र प्रगट किये । ता स्वरूप में अपुनों सम्पूर्ण माहात्म्य लीलात्मक स्वरूपात्मक अनंत अनिवर्चनीय स्थापन कीयो, ये सर्वोत्तमजी की विवृति में कहयो है । और शिक्षापत्र में हू,कह्यो है । श्रीमदाचार्यजी तथा श्रीविठ्लेश्वर तथा इनकी निजलीला सामग्री ताके समान और कोई भी पदार्थ नहीं है । याही तें अपने निज श्रीआचार्यजी में तथा इनके प्रिय पुत्र श्रीगुसांईजी में मन निरन्तर स्थापन करनो योग्य

है। इन दोनोन के समानता की बुद्धि अन्यनन में सर्वथा कवहु नहीं करनी, और नामरत्न में हू कह्यो है । सुख-सेव्य साक्षात् ब्रजेश्वर श्रीकृष्ण स्वरूप हैं । और ब्रह्मांड पुराण में हू कहयो है । कृष्णअवतार पूर्ण होयगो, बुद्धावतार अंश होयगो । और श्रीविठ्ठल परमानन्दावतार होयगो, सर्व धर्म करिके, रहित जब घोर कलियुग प्राप्त होयगो तब द्विजन के आचार में रत और निर्मल ऐसो जो श्रीवल्लभाचार्यजी को गृह तामें मैं जो हूं सो जो पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् परमानन्द स्वरूप अवतार लैके सर्व सूं परे जो मनोहर रूप है । ताकों भक्त जनन कूं दिखाऊँगो । इत्यादिक भगवान के बाक्यन ते श्रीविठ्ठलनाथजी कूं सम्पूर्ण पुष्टिमार्गीय साक्षात् श्रीगोकुलेशजी जानिकें ताको भजन करे हैं । और यह पुष्टिमार्ग के उपदेश कर्ता मुख्य गुरु आचार्य हैं । याते भगवत् स्वरूप ही जानने, तामें श्रीभागवत को प्रमाण एकादशस्कंध में है, आचार्य कूं मेरोई स्वरूप जानो, कोई कालान्तर में भी अपमान नहीं करनों । क्योंकि सर्व देवमय गुरु हैं । और जाकी श्रीकृष्ण में पराभक्ति है, तैसीही परा अनन्यभक्ति पुष्टिभक्ति मार्गीय ज्ञान के दाता श्रीविठ्ठलेश गुरून में हैं । ताकूँ ही यथार्थ अर्थ प्रकाश करें हैं । अब अगाड़ी हू सात पुत्र प्रगट करिके

गुरु परम्परा करिके भूमि में पुष्टिभक्ति के प्रचार करिवे के लिये संतति को विस्तार कियो । सो प्रकार कहें हैं। ताको प्रमाण बृह्मांडपुराण में कह्यो है ! मेरे ही तनुज निश्चय होंयगे, ते सब मेरे ई धर्मन के कर्ता वक्ता होंयगे, कोई कोई विशेष ज्ञाता होंयगे, मेरी सामर्थ्य करिकें युक्त होंयगे, याते श्रीगुसाँईजी के पुत्र सर्व धर्म के उपदेशक गुरु हैं ।

याही ते सन्मार्ग के रक्षक कलि के धर्मन के नाशकर्ता सत्संग ज्ञान के हेतु शांतस्वरूप भक्त के उत्कर्ष के बोधक, संसार के दुःख मोचक स्वमार्गीय ग्रन्थन के बोधक सदाचारवत बुद्धि व्यामोह हर्ता, ज्ञान प्रदीप अज्ञानादिक अन्धकार के नाशक स्वपितृ पितामह के विषय भाव वर्द्धक स्वमार्गीय सेव्य स्वरूप सेवाग्रह में तत्पर हैं, तिनमें प्रथम सुत श्रीगिरधरजी हैं, ते नरभूषण हैं मायावाद निराकर्ता हैं । महापंडित वेदशास्त्र के वक्तान के शिरोमणि धुरन्धर हैं । द्वितीय सुत श्रीगोविन्दराय ते सदा आनन्दमय हैं, सर्व धर्मन के धाम हैं । अपने भक्तन के विश्राम को स्थान हैं, व्याकरण में निपुण हैं । और तीसरे सुत श्रीबालकृष्णजी शास्त्र के तत्व के ज्ञाता हैं । वात्सल्य रस में निमग्न हैं, छबियुक्त हैं, भागवत कथा में प्रवीण हैं । अब चतुर्थ

सुत श्रीगोकुल के अनन्यस्वामि तिनको प्राकट्य ता
प्रमाण प्रथम लिख्यो है ।

अथ श्रीगोकुल के अनन्य स्वामी को प्राग

ब्रह्मांड पुराण को भगवद् वाक्य है । मेरेई त
निश्चय होंयगे कोई कोई विशेषज्ञ मेरी सामर्थ्य गु
होयंगे किंचित् या शब्द करिके विशेषज्ञत्व स्वपूर्ण सा
र्थ्यवत्व इनमें ही कह्यो है और पद्मपुराण के उत
खंड के श्लोक कल्लोल ग्रन्थ में है । उनको हू ये
अभिप्राय है, सो लिखें हैं । लक्ष्मणजी सूं श्रीद
होंयगे और वल्लभ सूं श्रीविट्ठल होंयगे सो साक्षत्
दीश्वर होंयगे और तिनसूं श्रीगोकुलेश परपुरुषो
होंयगे और अवतारन तें हूं अधिक कृपा के स
भक्तवत्सल सकल गुणसागर सम्पूर्ण धरणी कूं, प
करेंगे व्रजबन में विलास करेंगे । निवेदन के
करिके अपने अनन्य भक्तन को उद्धार करेंगे ।
कल्पवृक्ष के मूल मध्य फल तैसे ही ये व्रजनाथ क
युग में होंयगे इन वचनन कोही पोषक भाव श्रीवल्ल
रव्यान मैं कह्यो है "ताततणो प्रतिबिंब" तात
करिकैं श्रीविठ्ठल तिनकों प्रतिबिंब सो साक्षात् अ
ही स्वरूप है । अति गुणनिधि हैं अति शब्द अभेद
असाधारण अदेयदान दातृत्व महोदारता चातुर्य स

परम कृपालुतादिक अनन्तगुण तिनको निधि सो समुद्र
है । जैसे समुद्र में जल की गम्भीरता को प्रमाण नहीं,
तैसेई पहले कहे जे गुण तिनकी हू या स्वरूप में थाह
नहीं है । अथवा गुणन की निधि, सो स्थान उत्पत्ति के
मूलस्थान या विशेषण सूं भी, साक्षात् पुरुषोत्तमत्व
सूचन कियो । और प्रेम सूं सो प्रेमलक्षणा भक्ति के
उत्पन्नकर्ता सकल कुटुम्ब के शोभारूप हैं । और श्री-
गुसांईजी के दोहिता श्रीकृष्णरामलाला तिनने रुचिरा-
क में वर्णन कियो है । भूमि के विषे छः धर्मन कूं
जुदे जुदे प्रगट करत भये । श्रीविट्ठलजी ही हैं, सो
तुर्थ सुत गोकुल के स्वरूप करिके स्वयं आप ही होत
ये, सर्व गुणन करिके परिपूर्ण रूप जे श्रीवल्लभ प्रभु
तुर्थ सुत तिनकों मैं निरन्तर भजन करूं हूँ । और
ममाला में हू, कृष्णरायलाला भानेज ने कहयो है ।
वल्लभाचार्यजी को स्वरूप श्रीविट्ठलीनन्दन हैं ।
दानन्द रूप हैं । अपने पितामह जो श्रीआचार्यजी
नके स्वरूप को ही जतायवे बारो धारण कियो है ।
म जिनने और स्वपिता को ही ये स्वरूप है । ये
तायवे कूं प्रसिद्ध कियो है । छः गुण—१. ऐश्वर्य
वीर्य ३. यश ४. श्री ५. ज्ञान ६. वैराग्य, जिनने जो
गुण कार्य नहीं कर सके ऐसी है कृति जिनकी और

श्रीकृष्ण ही वल्लभरूप धरिकें प्रगटे हैं । और ह
जीने हू अष्टक में कह्यो है । कृपा के परवश होयके
स्वकीय जनन को अपुने ही स्वतन्त्र बल करिके
करिवे कूं या भूतल पै श्रीविठ्ठलेश के गृह में
र्भाव भये हैं ।

प्रगट होयकें श्रीभागवत के अर्थ जामें परम
रूप है । ऐसो श्रीसुबोधिनीजी की कथा रूपी जो
बचन तिनकी वृष्टि करिके सींचे हैं । भक्त अनन्य
और आपके तात जो गुसाँईजी तिनकी ही एक
में परायण ताके आशय के जानिवे बारेन में हू
हैं । उत्तम हैं, और परम आनन्द के दैवे बारे है
सन्तन के कंठ में अपने और निजफल के प्राप्ति
इच्छा जिनके ऐसे जो सन्त तिनकूं सदा सेवनी
महायत्न करिके रक्षाकर धारण कराई है, तुलसी
माला जिनने और श्रीगुसाँईजी ने प्रयट की
आचार ताको ही सदा प्रचार करिके विशेष ऐसे
है । पुष्टिमार्गीय अनन्यधर्म जिनने सो श्रीगोकुल
हैं,याते ही सर्व साधनकूं,निश्चयसूं ही निष्फल
जन अन्य को आश्रय त्यागिके प्यारे प्रभु को
भजन करो, तिनके नामन को जप करो, स्व
सुन्दरताको मनमें चितवन करो, तिनके चरण

की अभिलाष राखे तें सर्व पुष्टिमार्ग को सिद्धान्त स्वतः आभास बिना निश्चय ही प्राप्त होयगो, ऐसे लक्षण युक्त चतुर्थ सुत श्रीगोकुल के अनन्य स्वामी रक्षक हैं ।

अब श्रीविट्ठलनाथजी के पञ्चम पुत्र श्रीरघुनाथजी श्रीगोकुलचन्द्रमाजी की सेवा शृङ्गार में निपुण पितृचरण की भक्ति के प्रचारक पुराण उपपुराण क वक्ता ईश्वर स्वरूप हैं । और छठ्ठे पुत्र श्रीरघुनाथजी ज्ञानस्वरूप हैं । भवरोग के निवारक वैद्य विद्या में धन्वतरिते हू अधिक निपुण हैं । भक्ति के उपदेशक हैं । और सातमे सुत श्रीघनश्यामजी पुष्टिलीला में मग्न हैं, स्वभक्तन के पोषक हैं, श्रीसदनमोहनजी के विरह में है, विक्षिप्त मन जिनके अब इनके पुत्र जो श्रीगोपाललालजी, श्रीविठ्ठलरायजी, श्रीकल्याणरायजी, श्रीदेवकीनन्दनजी, श्रीजयदेवजी. श्रीलक्ष्मीनृसिंहजी, श्रीब्रजनाथजी, श्रीगोपेश्वरजी प्रभृति, और पौत्र जे श्रीगोवर्द्धनेशजी, श्रीहरिरायजी, श्रीपुरुषोत्तमजी, श्रीद्वारिकेशादिक वंशज बालक बहुधा करिकें तो सर्व विद्वान है । और निजाचार्यजी के ही, चरणन में परायण अनन्य भजन करिकें ही सन्तुष्ट और काम क्रोध लोभ मोह मद मात्सर्यादिक करिके विशेष वर्जित, लौकिकतें निरपेक्ष सर्व प्राणीमात्र के हितकर्ता, श्री-

कृष्ण की सेवा कथा में परमादरयुक्त श्रीभागवत के तत्त्व के, जानिवे बारे होत भये जो विशेष ऐसे प्रसिद्ध न होंय तो जगत में भक्ति को प्रचार कैसे होय। ता भक्ति के प्रचार के लिये और आसुरभाव में मिश्रित भये जे साधारण दैवीजीव तिनके चित्त विशुद्ध करिवे कूं पुत्र पौत्र प्रपौत्रादिक वंश में भये जे सत्पुरुष है तिनकूं नाम दैवे को तथा निवेदन करायवे को अधिकार श्रीमहाप्रभुजी श्रीगुसाँईजी ने अपुने वंशमें आरोपण कीयो है ताहीते सर्व जीवन को उद्धार कल्याण निश्चय ही होय है। अब ऐसे या प्रकार सूं समझ के दैवीजीवन कूं कहा कर्तव्य है ? सो कहें हैं प्रथम भक्तिमार्ग के द्वारभूत वल्लभकुल में जे सत्पुरुष तिनकूं आगे राखिके भगवान श्री गोपीजन वल्लभ के सन्निधान में स्थित होयके तुलसीदल हाथ में लैके सत्पुरुषन के मुख सूं पुष्टि महामंत्र कूँ श्रवण करिके श्रीमदाचार्यचरण द्वारा व्यूहरहित् साक्षात् श्रीकृष्ण-गोवर्द्धनधरण गोपीजनवल्लभ में देहादिक आत्मा समर्पण करे याही को नाम आत्मनिवेदन है । या रीतसूं निवेदन करे पोछे या जीव कूं भगवदीयपनो भयो ताकी रक्षा करिवे कूं तथा भवरोग दूर करिवे कूं सदा सत्सङ्ग रूपी औषध अवश्य करनो सो कैसे संत

को संग करनो सो कहें हैं। जिनकी श्रीकृष्ण में तो प्रीति होय नित्य और अन्य जीवन की प्रीति श्रीकृष्ण में करायवे अन्य प्रयोजन धनादिक में निरपेक्ष सात्विकी वृत्ति ऐसे साधु पुरुषनको जो संग है सोई सत्संग है । और जो जन श्रीआचार्यजी के वचनन ते विरुद्ध कहें वाकूं संसार को प्रेरक जानिकें वाके दुःसंग को त्यागि करनो, ऐसो निश्चय करिके ही सङ्ग करे, चाहे अपने होंय चाहें पराये होंय चाहे महत्कुल होंय, निश्चय ताको सङ्ग सर्वथा न करे। जो बाधक होय, श्रीआचार्यजी ते विमुख होय उनके समान और कूं जाने है, ऐसे विरुद्ध जन हैं। उनकूं अवैष्णव जाननों और अज्ञानादिक जे काम क्रोध लोभ मोह मद मात्सर्यादिक की निवृत्ति के लीये, और पुष्टिमार्गीय ज्ञान की प्राप्ति के लीये, गुरुन को वचन सन्निधान में स्थित होयकें, शुद्ध अन्तःकरण ते सुनेगो वचन गुरुन के कैसे हों, सो शिक्षापत्र में कह्यो है। गुरुननें कहे जो वाक्य हैं, ते स्वतः अपने आप नवीन कल्पना करिके न कहें किन्तु प्रसिद्ध होय और कदाचित दो चार ठिकाने प्रसिद्ध हू होंय तो हू कहा भयो, परन्तु मूलक्रम परंपरा ग्रन्थन सूं मिलते होंय। ऐसे वचन कूं निश्चय हृदय में धरे, ऐसे सत्पूरुष गुरुन तें पुष्टिमार्ग को सिद्धान्त

समझे। और असत् पुरुषन कों संग तो मन करिकें हू न करे, महाबलवान बाधक दुःसङ्ग है स्वमार्ग में ही एक जिनकी लगन है तिनको सङ्ग करे, तिनके लक्षण ये हैं, जो काया मन वाणी करिके एक श्रीआचार्यजी में ही परायण होय ऐसे संग के प्रभाव सूँ निवेदन कर स्वरूप समझे, सेवा में प्रतिबन्धक सर्व दोषन की निवृत्ति याही सूं होय है। ऐसे ज्ञान भये पीछे पूर्वोक्त पुरुषोत्तम की सेवा करनी अवश्य है तहाँ स्वरूप ज्ञान बिना मुख्य फल नहीं मिले है। अन्यथा भाव करिवे में याके सर्व अर्थ व्यभिचार कूं प्राप्त होंय हैं। यातें या ग्रन्थ में कह्यो जो श्री कृष्ण सेव्यस्वरूप ऐसो स्वरूप अपने वर में जानिके श्रीकृष्ण सेवा सदा करे कृष्ण सू परे और कोई भी निर्दोष पदार्थ नही है। ऐसी आज्ञा श्रीआचार्यजी ने करी है। तथा तैसोई आचरण करि के श्रीगोवर्द्धननाथादिक सेव्यरूपन की सेवा करी है तहं पहले श्रीगोवर्द्धननाथजी स्वइच्छा तें प्रगट भये सो प्रकार कहें हैं। श्रीमदाचार्यजी सूं अपुनी सेवा करा यवें कूं श्रीगिरिराज की कन्दरा में सूं रसरूप कोटि कंदर्पलावण्य युक्त श्री गोवर्द्धननाथ स्वयं आपही स्व इच्छा तें अकट होत भये सो साक्षात् नंदनंदन वृन्दावन चन्द्र जगत् उद्धारकर्त्ता वल्लभकुल के अधिपति परम

इष्टदेव मूलस्वरूप नित्य अखंड हैं। सारस्वतकल्प में साक्षात् पूर्ण पुरुषोत्तम हू दूसरो स्वरूप शैलमय धारण कर श्रीगिरिराज में प्रकट होय अन्नकूट यज्ञ सम्बन्धी र्व सामिग्री अरोगत भये ताको प्रमाण श्रीभागवत ं गोपन कूं विश्वास के लीये श्रीकृष्ण अन्य रूप बड़ो ारण कर बोले के शैल में हूँ ऐसे कहते सर्व सामिग्री रोगत भये इन वाक्यन ते शैलरूप पुष्टि पूर्णपुरुषोत्तम ो भावात्मकपनो दिखायो है।

श्रीगोवर्द्धनधरण तथा वे लीला तथा या लीला के म्बन्धी भक्तन कूं नित्यत्व विद्वन्मंडन में कह्यो है। ौर श्रीमदाचार्य तथा श्रीप्रभुचरण के, घर में विराजे सेव्य स्वरूप तथा तिनके सेवक चौराशी दौसो बावन ष्णवन आदि दैके जे भक्त तिनके घर में विराजे— ापके सेव्य स्वरूप तिनको प्रकार कहें हैं।

सेव्य स्वरूप तथा सेवा भावना

श्रीगोकुल ग्राम में स्थित श्रीनवनीतप्रिय,श्रीगोकु- श,श्रीमथुरेश,श्रीविट्ठलेश,श्रीद्वारिकेश,श्रीगोकुलचन्द्रमा बालकृष्ण श्रीमदनमोहन ते अष्टस्वरूप साक्षात् नंद- न्दन यशोदोत्संगलालित परमतत्व हैं। मूल में तो र्ण पुरुषोत्त एक ही हैं। भक्तन के,अनुग्रह करिवे कूं, रूप धारण करें हैं। याको प्रमाण श्रीसुबोधिनीजी

में है, षोडश गोपिकान के मध्य में श्रीकृष्ण अष्टस्
धारण करें हैं, या भाव करिके ही भावना करिके
स्मरणादिक करे हैं। तथा आपने अपने अनेक से
कूँ श्रीनवनीत प्रिय, श्रीबालकृष्ण, श्रीमदनमोहन,
ललितत्रिभंगीलाल, श्रीमुकुन्दराय, श्रीवृन्दावन
श्रीकृष्ण, श्रीश्याममनोहर, श्रीमोहन, श्रीनागर,
दामोदर, श्रीद्वारिकेश, श्रीमथुरेश, श्रीब्रजेश्वरादि
बाल पौगंड किशोर, अवस्थादि विविध आकृति भ
सेव्य स्वरूप अपने अनेक सेवकन कूं सेवा के ली
भये। ते सर्व स्वरूप साक्षात् पूर्ण पुरुषोत्तम नन्द
यशोदोत्संगलालित परम तत्व हैं, अब यहां एक स
में सूं अनेक स्वरूप प्रगटे ताको प्रमाण भागवत
जितनी गोपिका रासमंडल में हीं तितने हीं स
भगवान ने धारण करे, ते सर्व एकएक भक्त
भावात्मक रूप हैं। ऐसे भी स्वरूप स्थित करिके ति
सेवा प्रथम श्रीआचार्यजी, श्रीगुसाँईजी, आप क
अपुने सेवकन कूं देत भये। पहलें तो ऐसे अनेक स
रहे परन्तु अब या काल में दोनों स्वरूपन के
स्वरूप १५० डेड़सौ के अनुमान या भूतल पें वि
हैं जिनके घर में ये सेव्य स्वरूप विराजे हैं।
के महाभाग्य हैं। परन्तु अब ये सेव्य स्वरूप सब ज

प्राप्त नहीं है। और सेवामार्ग में सेवा करनी अवश्य
सेवा बिना मनुष्यन के जन्म व्यर्थ हैं। ताके लिये
गुसाँईजी कृत पुरुषोत्तम प्रतिष्ठा प्रकार ग्रन्थ संग्रह
और ताही के अनुसार श्रीहरिरायजी ने श्लोक
ना करिके ग्रन्थ प्रसिद्ध कीयो है। ताही प्रकार
रिके बाल पौगंड किशोराकृति श्रीकृष्ण मूर्ति कूं
भृत स्नान भये पीछे भावना करिके सो स्वरूप
क्तिमार्गीय जीवन कूं सेवा करिवे योग्य है। श्रीपुरु-
त्तम प्रतिष्ठा भये पीछे विन मूर्तिन कूं पुरुषोत्तमा-
कता है। तिनकी जो जो प्रकार सों सेवा करें सो
साक्षात् भगवान कों ही कियों सिद्ध होय है। परंतु
विर्भाव अनुभव सेवा के करिवे वारेन के भाव के
नुसार ही होंय है। तासूं भाव ही मुख्य कारण है,
जैसे भाव करिके सेवा करे ताकूं तैसी ही रीत को
नुभव होय है। तासूं सातघरन की सृष्टि के वैष्णवन
जा जा घर के जे मुख्य सेव्य स्वरूप १. श्रीमथुरेश-
२. श्रीदिट्ठलेशजी ३. श्रीद्वारिकेशजी ४. श्रीगोकु-
श जी, ५. श्रीगोकुलचन्द्रमाजी, ६. श्रीबालकृष्णजी
श्रीमदनमोहनजी। ये सात स्वरूपन में सूं जा जा
के जो जो वैष्णव हैं। तिनकूं अपुने अपुने घरके
य स्वपन में, सातस्वरूपन की भावना करनी योग्य है।

ताही सूं सेवाफल ग्रन्थ में कह्यो जो मुख्यफल
सों प्राप्त होय, नहीं तो,जो जैसे भगवान कूं भजे ता
तैसी ही रोत सूं ही भगवान् माने हैं। जैसी जा
भावना है, ताकूं तैसो ही फल सिद्ध होय है। म
रूपान्तर आकृति में साक्षात् पूर्णपुरुषोत्तम जो
स्वरूप तिनकी भावना करिकें मर्यादारूप की
करनी सो पुष्टिमार्ग रीति सों विरुद्ध है। साक्षात्
फल की प्राप्ति नहीं सो यमुनाष्टक की टिप्पणी में
है असाधारण धर्म तो धर्मिस्वरूप में ही है। सो
धर्मिस्वरूप के जो उपासक हैं। तिनकूं मर्यादारूपा
में असाधारण धर्मन की भावना नहीं करनी
अन्यथा भावना करिवे में दोष है। जो स्वरूप त
मर्यादापुरुषोत्तम और उनमें पुष्टिपुरुषोत्तम के स्व
लीला की भावना करनी रसाभास को हेतु है।
अनुचित भी है, क्यों जो स्वरूप तो है, और रीति
और वाको समझै और रीति सों, वाके अर्थ व्यभि
कूं प्राप्त होंय हैं। मुख्यफल प्राप्तिनहीं यद्यपि सीता
श्रीरामचन्द्रजी मर्यादा पुरुषोत्तम हूँ हैं। तोहू रसा
जो श्रीगोपीजनवल्लभत्व करिकें अनन्य उपासक जे
ते भावना नही करें हैं। अन्य धर्मवान में अन्य रू
भावना करिबे में जो जैसी रीति की उपासना

ताको तैसो ही फलित होय है। अपनो चाहतो भयो जो साक्षात् पुष्टिमार्गीय फल ताकी प्राप्ति नहीं होय। तासों ऐसी रीति सों भावना करनी पुष्टिमार्गीय अर्थ साधक नहीं तातें सर्वदा सर्व भाव करिकें ब्रजाधिप जो श्रीकृष्ण हैं। सोही भजन करिवे योग्य हैं। पुष्टिमार्गीयन को मुख्य धर्म यही है। और श्रीआचार्यन नें जो आज्ञा करी है कि यह करनो ता बिना जो कछु और है। सो सबही अन्य है, सो अपने देश में तथा कुल में हूँ जो अन्य प्रकार होंतो होय, तोहू पुष्टिमार्गीय धर्म सूं अतिरिक्त आचरण न करे सोही गीता में कह्यो है स्वधर्म पै चलिवे में जो मृत्यु भी होजाय तो हू श्रेष्ठ है। और परधर्म में चलिवे सूं जन्म जन्मान्तर में हूँ अत्यन्त भय और दुःख प्राप्त होय है। तासूं पूर्वोक्त जे श्रीगोकुलेश्वर के चरण कमल के भजन स्मरण को सर्वथा त्याग नहीं करनो कैसे कि जैसे कोई महारोगी उत्तम औषधी के सेवन करे ते कछु रोग की निवृत्ति होय तो वा औषधी को सर्वथा त्याग नहीं करे है। तैसेई, स्वमार्गीयन कूं, भवरोग निवारणार्थ औषधीवत् सर्वथा त्याग नहीं करनो, पहले कहे जो श्रीकृष्ण तिनको सेवन हू पुष्टिमार्गीय सिद्धान्त जानिके ताही रीति प्रमाण करनो अपने मन की कल्पना करिकें सर्वथा न करनो

तहां पहलें, पुष्टिमार्ग को स्वरूप जाननों अपेक्षित है ।

ये मार्ग कैसे प्रगट भयो है सो प्रकार कहें हैं

जब श्रीगोकुल के अनन्य स्वामी ने अपने मन की अभिलाषा को प्रकार जामें ऐसो शुद्ध पुष्टिमार्ग प्रगट करिवे कूं मन कीयो तब श्रीजी ने जानी कि या मार्ग के के प्रगट करिवे की सामर्थ्य तो मेरे श्रीमुखारविन्द की अग्नि को ही है । ऐसे जानिके मुखाग्नि रूप जो श्रीआचार्यजी तिनकूं ही पुष्टिमार्ग प्रगट करिवे की आज्ञा देत भये । तब श्रीआचार्यजी हू भगवान को अभिप्राय जानिके, श्रीजी ने दीनी जो आज्ञा ताही प्रकार करिके अपनों प्रागट्य भूतल पै करिके पुष्टि भक्तिमार्ग प्रगट करत भये । ता मार्ग में स्वमार्गीयभक्ति को स्वरूप स्वमार्गीय सेव्यस्वरूप स्वमार्गीय सेवा प्रकार ये तीनोंन में अन्यमार्ग को संसर्ग न मिल जाय ऐसो विलक्षण प्रकार प्रमाण पूर्वक निरूपण करत भये और हू स्वमार्गीय विवेक, धैर्य, आश्रय, त्याग, धर्म, अर्थ,काम, मोक्ष भिन्नता करिके दिखावत भये । श्रीआचार्यन ने प्रगट होयकँ श्रीब्रजपति के चरण कमल की सेवा जहां प्रसिद्ध ऐसो मार्ग प्रगट कियो सो स्वसंतोष के लीये, या लोक में पूजादिमार्ग तो पहले हतो,तोहू भक्तिमार्ग प्रगट कीयो,सो आत्मा के संतोष के अर्थ कीयो है । पूजादिक

मार्ग में श्रीजी कूं तथा भक्तन कूं सन्तोष नहीं है । क्योंकि सेवा में तो साक्षात् पुरुषोत्तम ही सेवनीय हैं । पूजा में विभूति रूप सेवनीय है । सेवा में भक्ति ही नियामक है । पूजा में विधि ही नियामक है, पूजा में तो काल को ही नियामकता है । सेवा में काल नियम नहीं है । भक्त मनोरथ के आधीन हैं। पूजा में तो नैवेद्यादिक को अदृष्ट जनकत्व है । और सेवा में तो भोग धरी जो सामग्रीन को साक्षात् अङ्गीकार है। पूजा सेवा में तो अत्यन्त वैलक्षण्यता है, महान् भेद है । ऐसे भेद दिखायके स्वमार्गीय भक्ति बढ़वे को प्रकार भक्तिवर्द्धिनी में कह्यो है । कि जा दान व्रत तप होम जपादि करिके जो भक्ति उत्पन्न होय सो मर्यादा भक्ति है । याको फल हू मुक्ति है, और श्रीआचार्यजी ने तो सोई शुद्ध पुष्टिभक्ति निरूपण करी है ।

भक्ति जैसें बढ़े सो प्रकार कहें हैं

प्रथम भावरूपी बीज दृढ़ होय शुद्ध पुष्टिमार्गीय आचार्य अनुग्रह पूर्वक स्वमार्ग प्रकार ते भगवन्निवेदन करे पीछे ताही में एक तत्परता याही मार्ग में स्थिति सोई बीजभाव दृढ़ होय अन्यमार्गीय साधन करिके रहित होय तब ही भक्ति बढ़े तामें स्वमार्गीय साधन कहे हैं । या मार्ग ते अतिरिक्त साधन को त्याग करे

स्वमार्गीय भगवत् धर्म को श्रवण करे कीर्तन करे भगवत् भजन के अनुकूल गृह में स्थिर रहे स्वधर्म में स्थित रहिके श्रीकृष्ण को भजन करे यहां स्वधर्म कह्यो है । सो वर्णाश्रम धर्म नहीं समझनों क्योंकि वर्णाश्रम धर्म तों नित्य कीये होजांय हैं । यहाँ तो स्वधर्म करिके भगवत्धर्म ही कहे हैं वर्णाश्रमधर्मन कूं स्वधर्मपने को अभाव है । क्योंकि सन्ध्यावन्दन कूं आरम्भ तें लैके यज्ञपर्यन्त धर्मन कूं शरीर के सुख को हेतु स्वर्गादि लोक के भोग के प्राप्त करायवे बारे हैं । जब पुण्य क्षीण होय जाय तव फेर मृत्युलोक में आय पड़े हैं,तासूं वर्णाश्रमधर्म में शरीरसुख के हेतु है।आत्मा के सुख परलोक साधक नहीं है और भगवत्धर्म है।सो आत्मा के सुख के हेतु है सो श्रीभागवत में सप्तम में कह्यो है। जो जो पुरुष भगवानको सेवन करे हैं,सो सो अपने आत्मा के कल्याण के ही अर्थ करें हैं, यातें निर्विकार भगवद्धर्म ही है। याते भजन तें अतिरिक्त और कोई भी पदार्थ उत्तम नहीं है । सर्व ते उत्तम साधन और सर्व ते उत्तम फल कह्यो है, तासूं या शास्त्र में आपके अङ्गीकृत भक्तन को ही अधिकार है और कोई को अधिकार नहीं है । क्योंकि श्रीआचार्यजी के अनुग्रह सों ही शुद्ध पुष्टिमार्गीयपनो होय है आपकी दिखाई भई जो सेवा स्नेह सहित करे अथवा स्नेह रहित भी करे तोहू पूर्णपुरुषोत्तम की ही प्राप्ति कारक है । भक्ति पर है पूजामार्ग पर नहीं समझनी और शुद्ध पुष्टिमार्गीय रीति सों देखिके होड़ाहोड़ी करिके यहां के समान वैसे ही वस्त्र आभूषणादि पात्र सिहासन रथ हिंडोरा पलनां डोल पुष्प मंडली प्रभृति वर्षोत्सव तथा अनेक प्रकार समर्पणरूपी अन्य मार्ग में पूजामार्ग में मर्यादामार्ग प्रभृति में हू देखिवे में आवें हैं। तोहू तिनको कियो विभूति रूपमें ही मर्यादापुरुषोत्तम में ही पहोंचे हैं । तिनकूं पूजामार्गीयपनों ही रहे है, कछू समानता करे सों शुद्ध पुष्टिभक्तिमार्गीयपनो नहीं होय है । मार्गभेद नियामक है ।

जो जा मार्ग को है, ताको कियो जो भगवत्धर्मादिक सो सब मर्यादा पूजा मार्ग पर ही होय है । मर्यादापुरुषोत्तम तथा विभूति रूप में ही परिणाम में प्राप्त होय है। तासूं स्वमार्ग रीति सूं ही सेवन करनो उचित है, याते कोइ तरह को विरोध बाधा शङ्का नहीं है । परन्तु भगवत्स्वरूप कों अनुभवादि साक्षात्कार होनो सो श्रीआचार्यजी के, श्रीगुसांईजी के अनुग्रह बिना सर्वथा नहीं होय है । ताते तिनके स्वरूपन को ज्ञान तथा तिनकी सेवा, स्मरण, नामोच्चारण, गुणगान, अनन्यता दृढ़ाश्रय बिना यथार्थ मार्ग को फल नहीं होय

है। ताते तिनकी सेवा अनन्य चित्त राखिके काया म
वाणी करिके एक तत्परता करिके अनन्याश्रय
राखनो या ठिकाने श्रीआचार्यजी तथा श्रीगुसाँई
श्रीगोकुल के अनन्यस्वामि की सेवादिक करिवे
आवश्यकता कही सो ठीक है, परन्तु कौन स्वरूप
कैसी रीति सूं सेवा करनी ऐसी जाकूं चाहना है
तहाँ कहें हैं।

प्रथम तो तिनके सेव्यस्वरूपन में ही वे सदा स्थि
हैं भगवत् मुखारविंद स्वरूप हैं। याते अभेद हैं
तिनके सेव्यस्वरूप जे भगवत्मूर्ति तिनकी सेवादिक
ही श्रीआचार्यादि की सेवादिक सिद्ध होय है, तथ
जो सेवककूं जुदे भाव करिके सेवादि करनी होय
सेव्यस्वरूप के दक्षिण ओर श्रीआचार्यचरणादिकन
श्रीपादुकादिक जी विराजे हैं। तिनकी सेवादिक
करते आये हैं। ताही प्रमाण करनी उचित है। ता
प्रमाण नारदपंचरात्रि में है, प्रभु के दक्षिण भाग
श्रीगुरुन की पादुका को सेवन करे और श्रुति रहस्य
में हू कह्यो है, नमः औषधीम्य; औषधीमय पादुका
श्रीवल्लभाचार्य श्रीप्रभुचरण श्रीगोकुल के अनन्यस्वा
ने धारण कियो है। तिनकूं नमन करें हैं लौकि
दृष्टि करिके काष्टवत् प्रतीति होय है। वस्तु विचा

देखे तो श्रीपांदुकाजी कूं, आपके चरणारविन्द को
साक्षात् नित्य सम्बन्ध है। यातें आनन्दमय ही है।
योंकि श्रीआचार्यन के आनन्दरूप कर चरण श्रीमुख
उदर आदि हैं, सर्वाङ्ग जिनको बाहर भीतर सूं सदा
आनन्दरूप हैं। "नमः पृथिव्यै" उपवेशनस्थान जो
श्रीबैठककजी "रजोरूप धारिणे नमः" रजरूप धारण
करिवे बारेन कूं नमन करत हैं। जहाँ श्रीबैठकजी हैं,
श्रीअडेल में श्रीगोकुल में श्री गोवर्द्धन में, केशोघाट पै
श्रीवृन्दाबन में परासोली प्रभृति चौरासी तथा बत्तीस
था नव श्रीबैठकजी हैं, तहाँ तहां आपको नित्य सम्बन्ध
है। यातें ये सबरे स्थल आनन्दमय हैं, आपको
साक्षात् रजोमय पृथ्वी रूप हैं। याते ही सर्व सेवनीय,
भजनीय, नमनीय हैं, "नमोवाचे वाणी रूप धारिणे
नमः" अपने श्रीहस्तन ते लिखे जो पत्र हैं, तिनमें श्रीहस्त
तथा वाणी को नित्य सम्बन्ध है। वाणी रूप
करिके पत्रन में आप स्थित हैं। याही ते आनन्दमय
। ये सर्व सेवनीय भजनीय नमनीय हैं। और हू
तिनकी परशी वस्तु मात्र कूं नित्य सम्बन्ध है, ताकूं
आनन्दमय स्वरूपात्मक जानिकें सेवादिक करें तो
शीघ्र ही मुख्यफल की प्राप्ति होय तहां प्रथम शुद्ध पुष्टिमार्ग
ते अविरुद्ध जे वर्णाश्रम धर्म तिनमें प्रथम

दशा में स्थित होय करिके ही भगवत् सेवा स्मरणादि
सदाचरण करनो, उचित है।

तातें वर्णाश्रम धर्मन कों निरूपण करें है

या रीति सों सेवा के करिवे बारे आत्मनिवे
पुष्टिमार्गीय अपने मार्ग में प्रवृत्त भगवद्भक्त जे दैवीजी
हैं,ते जन्म सूं आदि लेय मरण पर्यन्त दोषन के अभा
निमित्त अपने मार्ग के फल की प्राप्ति के अर्थ पुष्टिमा
सों अविरुद्ध जे सदाचार धर्म तामें स्थित होयके, श्री
कृष्ण को भजन करें ताके निमित्त सदाचार कहें है
प्रथम तो अपने आचार्यन की आज्ञानुसार वर्णाश्र
धर्मन में प्रवृत्त होनो चहिये, पहिलें चारहू वर्णन
सामान्य लक्षण निरूपण करें हैं। तामें ब्राह्मण
लक्षण श्रीभागवत में कह्यो है, ब्रह्मवृत्ति करके ब्राह
वर्तें, तथा पृथ्वी की रक्षा तें क्षत्रिय जीविका चल
व्यापार सों वैश्य, और द्विज की सेवा करिकें शूद्र
शान्ति और इन्द्रियन का दमन, तप, पवित्रता,सन्त
क्षमा, मृदुलता, श्रीकृष्ण में भक्ति, दया, सत्य बोल
यह ब्राह्मण की प्रकृति है। १. तेज बल धैर्य
शूरता सहन उदारता उद्यम स्थिरता वैष्णव ब्राह
में निष्ठा ऐश्वर्य यह क्षत्रिय की प्रकृति है। २. आ
क्यता दान में निष्ठा छल रहित वैष्णव ब्राह्मण

सेवन यह वैश्य की प्रकृति है। ३. वैष्णव ब्राह्मण गौ देवतान की छल रहित सुश्रूषा तासूं लब्ध जो धन तातें अस्तेय काम क्रोध लोभ मोह सों रहित प्राणी मात्रन को प्रिय और हित में इच्छा यह सर्व वर्णन को धर्म है, सत्य दया पवित्रता शांति त्याग सन्तोष सत्पुरुषन की सेवा सन्तोष यह शूद्र की प्रकृति है, ४. अहिंसा सत्य कामनान की निवृति हरिकथा को श्रवण श्रीकृष्ण को कीर्तन भगवत् की सेवा नम्रता स्वमार्गीयन सों मित्रता भगवत् में आत्म समर्पण यह सम्पूर्ण मनुष्यन को परम धर्म कह्यो।

वेदोक्त कर्मन के अधिकारी जे ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्यन कों यज्ञोपवीत के अनन्तर जा क्रम सूं जो विधान कह्यो है,सो करनो योग्य है, तामें पहिले ब्रह्मचर्य को लक्षण कहें हैं, मेखला मृग चर्म यज्ञोपवीतादिकन कों धारण करे और स्नान भोजन होम जप में मौन रहे क्षौरादिक न करवावे ब्रह्मचर्य व्रत को धारण कियो करे यासों वीर्य को पात कबहू न होय, तीनों हू काल में सन्ध्यादिक करे सेवनीय जे आचार्य तिनके समीप में अनुचर के समान रहे, शैया आसन स्थान सों थोड़ी दूर में हाथ जोड़े रहे यह ब्रह्मचर्य के लक्षण हैं। ब्रह्मचर्य सों आदि लेय जे कर्म हैं तिनकों कहत

भक्तिमार्ग की रीति सौं नित्य करिवे योग्य संध्या वन्दनादिक अवश्य करने चहियें । गायत्र्यर्थ प्रकाश में जो स्वरूप कह्यो है । ताही स्वरूप कों जानिकें गायत्री को जप करे याही रीति सो ब्रह्मयज्ञ तर्पण अग्निहोत्र,वलिवैश्वदेव और जे वेदोक्त कर्म हैं, तिनकूं हू करे ता पाछें मध्यान्ह सन्ध्या कौ विधान करे, सायंकाल की सन्ध्या तो सूर्यास्त समय में करे, ताको प्रमाण निबन्ध में कह्यो है । पाखण्ड मत को बिना स्वीकार किये भगवत् मार्ग के अनुसार सों यथाशक्ति अग्निहोत्रादिक करतो भयो सदा श्रीकृष्ण को भजन करे: मुख्य धर्म के अभाव सो मुख्यफल की प्राप्ति नहीं होय है । भगवत् नाम सों नीचे गिरे तो नहीं कोई रीति सों कलि में तो तर ही जाँय कलि के दोषन सो भय न होयगो भगवत्मार्ग में स्थित होयकें जो वेदन को अप्रमाण कहे तो भगवन्नाम सों नरक में न जाय, परन्तु नीच योनि में जाय याही सों नीच योनि जो शूद्रादिक हैं, तिनमें हू भगवद्भक्तन को जन्म दीखे है । तासों अग्निहोत्रादिकन को त्याग और वेदन की निन्दा इन दोउन को बिना करे भगवान को सेबन करे यह ब्रह्मचर्य के लक्षण कहे, याके अनन्तर ग्रहस्थाश्रम में प्रवेश करनो चहिये ताके लक्षण कहें हैं ! कुटुम्ब में आशक्त न होय ग्रहस्थ होयकें

भगवत्सेवा स्मरणादिकन में प्रमाद आलस्य न करे ।

१. ज्ञानवान् या लोक के जैसे स्वर्गादिकन कों हूँ नाशवान् देखे , पुत्र स्त्री धन और जो बन्धुवर्ग हैं, तिनको संगम कैसो है, कि मार्ग मे जैसे कोई को सङ्ग थोड़ी बिरियाँ के ताँई होयकें फेर बिछुर जाय है वा रीति को है । जैसें निद्रा के अधीन स्वप्न होय, जैसें निद्रा खुले पीछे स्वप्न जैसे नाश कों प्राप्त होय जाय है, तैसे ही स्त्री पुत्र धनादिक, मृत्यु भये पीछे सब छूट जाय हैं याही रीति सूं विचार पूर्वक ग्रहस्थाश्रम में परदेशी की जैसे प्रीति रहे, कुटुम्ब बारेन करिके बंधे नही, मोह तथा अहङ्कार कों छोड़िकें रहे ।

अब पुष्टिमार्गीय वानप्रस्थ कहें---

प्रथम तो भगवान् में प्रेम होयवो अपेक्षित प्रेम सूं आसक्ति होय, आसक्ति सो व्यसन होय, तब वाके भाव को बीजदृढ़ भयो फेरि नहीं नष्ट होय है । जब श्रीकृष्ण में प्रेम होयगो तब अन्य में राग जो प्रीति ताको बिनाश होय, जब उनमें आशक्ति होय तब गृह वारेन में अरुचि होय तब गृहस्थन को यह अनात्मात्व अर्थात् अपनौपनो नहीं दीखे हैं । जा समय में श्रीकृष्ण में व्यसन भयो ताही समय में कृतार्थ भयो । तैसो होयके भी गृहस्थन को त्याग कर एक उनही में मन

लगाय के स्मरण में यत्न करे तासूं सबसे अधिक पर तथा सुदृढ़ भक्ति को प्राप्त होय याही कारण सूं सर्व कुटुम्ब बारेन सों चित्त खेंचिकें केवल गोकुल गोवर्द्धन महावन हरिस्थानन में शुद्धान्तःकरण सो सेवा भजन करे ।

अथ पुष्टिमार्गीय सन्यास कहें हैं

कर्म मार्ग में तो कदापि कलियुग के दोष सों संन्यास नहीं करिवो उचित है । प्रथम यदि कर्तव्य है तो भक्तिमार्ग में विचार पूर्वक करे यदि विरह के अनुभव के अर्थ यदि परित्याग होय तो ठीक है अपने बन्धन के निवृति के अर्थ सन्यास को वेष (भेष) है, अन्यथा लोक में भगाये वस्त्र दिखाये सों बन्धन की निबृत्ति नहीं है । केवल भावना मात्र हीसों भाव की सिद्धि है । द्वितीय और साधन नहीं दीखे हैं । इन्द्रियन को समूह बलवान है, यासूं सर्वथा होय सके नहीं या मार्ग में तो फलस्वरूप स्वतः साक्षात् परब्रह्मश्रीकृष्ण ही हैं,यासूं माफक नहीं होय है।परम दयालु जो भगवान् हैं सो स्वस्थ वाक्य नहीं करें हैं । यह जो त्याग है, सो परम दुर्लभ है । केवल शुद्धप्रेम सूं ही सिद्धि होय है और द्वितीय उपाय नहीं ताही सूं पूर्वोक्त प्रकार सों परित्याग (संन्यास) करिबो उचित है । अन्यथा यदि

ऐसें न करे तो स्वार्थ माँय भृष्टता को प्राप्त होय है । निश्चित मेरी मति यह है, श्रीकृष्ण के प्रसाद सूं श्रीवल्लभाचार्य्य ने निश्चित कियो संन्यास वर्ण भक्ति करिकें सिद्ध होय अन्यथा पतित होय जाय । इति संन्यास लक्षण ।

सम्पूर्ण आश्रमन को यही धर्म सम्पूर्ण प्राणी मात्र में मन शरीर वाणी को संयम अर्थात् निग्रह या रीतसूं गर्भाधानादि संस्कार सूं देहपात पर्यन्त वेदोक्त कर्म भगवान् की आज्ञा के अङ्गभूत निष्काम होयकें तथा क्रमसूं करे भगवत् धर्म तो बाल्यावस्था सूं ही करे या रीति सों स्वमार्ग के अविरुद्ध वर्णाश्रम धर्म कहिके सदाचार को लक्षण कहें ।

ऊर्द्ध्वपुण्ड्र तिलक करिवे को प्रकार

वेद की कठवल्ली शाखा में कह्यो है कि जो पुरुष ऊर्द्ध्वपुण्ड्र धारण करिके भगवान को ध्यान करे बोई महात्मा है । तथा शतपथ ब्राह्मण श्रुति में कह्यो है । ऊर्द्ध्वपुंड्र तिलक दो रेखा को सुन्दर दीसे ऐसो धारण करे तो भगवत धाम में स्थित होयकें प्रभु के संयोग सुख कूं प्राप्त होय है । और अथर्वणवेद में कह्यो है, यजुर्वेद की हिरण्यकेशी शाखा में हू येही भाव है । के जा अपनी आत्मा को हित चाहे तो हरि के चरण की

आकृति मध्य में छिद्र राखिकें ऊर्द्ध्वपुंड्र तिलक धारण करें हैं, सो पूर्ण पुरुषोत्तम कूं प्रिय होयकें पुण्यवान भक्तिमार्गीय मुक्ति को अधिकारी होय है और पुराण में हूँ कह्यो शुद्ध जो भागवत है,हरि के पद की आकृति जैसो तिलक ऊर्द्ध्वपुण्ड्र करे अथवा दंडाकार करे परन्तु सुन्दर जाको घाट सूधो मनोहर शोभायुक्त छिद्र सहित सूधो कनिष्ठ आंगुरी जैसो दंडाकार नासिकाग्र ते लेयके केशपर्यन्त दश आंगुल तिलक तो उत्तमोत्तम है। और नौ आँगुल को मध्यम है। आठ सात छः पांच आंगुल ताईं को मध्यम ते हू मध्यम है, ऊर्द्ध्वपुण्ड्र कोई भी वर्ण कूं निषिद्ध नहीं है । उपवीतवत धारण करे और जा जा अङ्ग में जैसो जैसी रीति के तिलक कहे हैं, तैसी ही रीत के ब्राह्मण वैष्णव कूं तो द्वादश तिलक उचित हैं ओंर सेवा के समय शंख चक्र गदा पद्म मुद्रा धारण करे जब ताँई, कोट गोदान को फल होंय। और सहस्रअपराध वाके दूर होंय हैं। परन्तु सेवा पूजा के समय धारण करे ता बिना और समय नही धारण करने जैसे शास्त्र में कहयो है। सोई अपने मार्ग की परम्परा के अनुसार धारण करे।

अथ तुलसी माला प्रकरण

तुलसी काष्ठ की माला जाके कंठ में दीसे सोहीं

भागवदीन में उत्तम है। जो श्रीहरि की प्रसादी तुलसी माला धारण करें हैं, भक्ति सहित उनकूं कोई भी पातक नहीं लगे है। और तुलसी माला पहरिके जो स्नान करें हैं ताकूं नित्य ही प्रयाग पुष्कर के स्नान का फल प्राप्त होय है।

अथ अन्याश्रय प्रकरण

साक्षात् पुष्टिपुरुषोत्तम की प्राप्ति तो अन्याश्रय रहित अनन्यता सूं ही होय है। सों गीता में कह्यो है, जो कोई अनन्य होय के भगवान को भजन चिन्तवन उपासना नित्य अभियुक्त करे है, तिनकूं सर्व पदार्थ श्रीजीही देंय हैं और दीने भये पदार्थन की रक्षा हू करे हैं पर पुरुष जो पूर्णपुरुषोत्तम सो तो अनन्य भक्ति करिकें ही प्राप्त होंय हैं अन्याश्रय मन वाणी काया करिके न करे स्वार्थ रहित अव्यभिचारिणी भक्ति म्लेच्छ चांडालादिकन को हू पवित्र करें हैं। जे कोई अनन्य भक्त हैं ते तो अन्य देव के दरशन कूं कभी कहीं नहीं जाँय हैं। जब ताँई अन्याश्रय है तब ताँई प्रभु वाके ऊपर अनुग्रह नहीं करें हैं, क्योंके अनन्या जनके ऊपर ही वात्सल्यता करें हैं और जैसे स्त्री अन्य में आसक्त होय के पति की सेवा करे तो वो पति वासूं प्रसन्न नहीं होय है। तैसे ही ऐसी भक्ति सूं

श्रीजी प्रसन्न नहीं होंय हैं उग्र जे दुर्गादिक देवता तथा घोर रूप जे भूतपति तिनकों सेवन जे संसार सूं मुक्त होंयबे की इच्छा राखें हैं वे नहीं करें हैं। जो श्रीजी कूं छोड़िकें अन्य देव की उपासना करें हैं। सो कैसो है, कि प्यासो होयकें गङ्गा तीर पै बैठिकें और कूआ खोदे हैं, सो दुर्मति हैं,जो गङ्गा जल में स्वाद पवित्रता है सो कूआ में कहाँ है। भगवान के चरण को आश्रय करिके और अन्यदेव को आश्रय करनो यासूं तो मरनों ही आछो है, क्योंकि हाथी पै चढ़िकें और हलके पै चढ़नों उचित नहीं है। स्वधर्म में चलते में जो मृत्यु भी होय तोहू श्रेष्ठ है, पर धर्म में अत्यन्त भय दु,ख है। अन्य सम्बन्ध की गन्ध कैसी है, कि कन्धा सूं सीस कूं दूर करे ऐसी है नेत्र मूँद लेनो तो श्रेष्ठ है। परन्तु अपने श्रीजी बिना अन्यकों देखनों उचित नहीं है। शून्य वन में रहनों तो श्रेष्ठ है। पर अन्याश्रितन को संग नहीं करनो और कृष्णाश्रय की टीका में हू कह्यो है, कृष्ण एवं गतिर्मम अंश कलावतारन कूं छोड़िकें केवल श्रीकृष्ण ही हमकूं गति है। ऐसी रीति की अनन्यता अन्याश्रय वर्जित, पुष्टिपुरुषोत्तम कृष्ण तथा श्रीआचार्यजी में करनी, याही सूं पुष्टिमार्ग को यथार्थ मुख्य फल प्राप्त होय है।

अथ असमर्पित त्याग प्रकरण

अब पुष्टमार्गीय वैष्णवन कों सर्व वस्तु प्रभु निवेदित ही ग्रहण करनी, अब वैष्णवन को सगरी वस्तु श्रीठाकुरजी कों निवेदित करिके पीछे स्वीकार करनी सो गरुड़पुराण में कह्यो है। अकाल मृत्यु को हरण करिबे बारो सर्व व्याधि को नाश करिबे बारो ऐसो श्रीविष्णु के चरणोदक को पान करिके पाछे ताकों मस्तक पर धारण करनो बृह्माण्डपुराण में कह्यो है, जो पुरुष श्रद्धा करिके युक्त होयके विष्णु के निवेदित कूं ग्रहण करे हैं। बिनकूं प्रत्येक ग्रास में असंख्यात चान्द्रायण के फल प्राप्त होंय हैं। वो पुरुष अनेक पुण्य सों युक्त होय हैं तासूँ प्रयत्न करिके निरन्तर विष्णुभक्ति युक्त पुरुष विष्णु के चरणामृत को ग्रहण करें बृह्म पुराण में कह्यो है कि हजार अग्निष्टोम यज्ञ और सैकड़न वाजपेय यज्ञ वा मनुष्य ने कीये जिनने श्रीविष्णु निवेदित करिके भोजन कियो जो मनुष्य भक्ति सूं नित्य प्रयत्न करिके विष्णु निवेदन करिके अन्न को प्रसाद लेय हैं, सो पाप सों मुक्त होय करिके धन्य बड़भागी होंय हैं, बृह्मांडपुराण में कहयो है। पुरुष भक्ति करिके पत्र, पुष्प, फल, और जल, अन्न, दूध तथा औषध और वस्त्र भूषणादिक श्रीहरि परमात्मा कों

समर्पण करिकें स्वीकार करें, और वैसे प्रभु को समर्पण किये बिना आप स्वीकार करें तो तत्काल पाप के समूह कों प्राप्त होय हैं। और पद्मपुराण में भी कह्यो है। जो विमोहित पुरुष प्रभु कों अन्नादिकन को निवेदन किये बिना ग्रहण करे हैं सो अपने पित्रादिक सहित बहुत काल तांई नरक में रहत हैं। और अपने पाप कों भोगे हैं। और सिद्धान्तरहस्य में भी है कि असमर्पित वस्तु कों सर्वथा त्याग करनो तासूं विद्वान कों सर्वदा श्रीहरि निवेदित सर्व वस्तु को ग्रहण करनो।

अथ असदालाप को प्रकरण

जैसे असमर्पित वस्तु श्रीकृष्ण की प्राप्ति में प्रतिबन्धक है तथा असदालापहू प्रतिबन्धक है तिनको त्याग सर्वथा उचित है। सेवा करिवे के अनन्तर बचे भये काल में असदालाप कों छोड़िकें अन्य व्यसन कों त्यागिकें अर्थ श्रवण कीर्तन स्मरण चिन्तवन करनो व्यवहार हू में हरि में चित्त राखे तासों बचे काल में असदालाप को त्याग कर पूर्ववत् श्रवण कीर्तन स्मरण चिन्तवन करे। सेवा में कथा में सुदृढ़ा भक्ति होय। दैवी जीवन कूं आसुर भाव निर्वृत्ति के अर्थ असदालाप को त्याग कर, "श्रीकृष्ण मेरे रक्षक हैं" यह कहतो भयो रहे, सोई तातचरण ने आज्ञा कीनी है। हे श्रीकृष्ण मेरे रक्षक हैं। तासूं या लोक में तथा परलोक में चिन्ता रहित है। अब श्रेष्ठ पुरुषन के और आचार कहें हैं।

अथ सदाचार प्रकरण

भागवतोक्त जो अपने सम्प्रदाय तामें स्थित जे सत्पुरुष तिनसों पूछे। पराई निन्दा को त्याग करे। महामन्त्र के रूप को जानिवे वारो होय। आत्मनिवेदन करे पारलौकिक कों देखे। अवैष्णव के घर को जल पान को त्याग करे। भगवान साक्षात् पुष्टिपुरुषोत्तम की सेवा में निष्काम होयके तत्पर होय शिवादिकन में द्वेष नहीं करनो। आसन बाँधि के गुरु की सन्नधि में में न बैठे। भगवान के मन्दिर में पैर तथा जंघा न फैलावे। तथा हास्यादिक हू न करे। सिगरे उत्सवन की समाप्ति में भोजन करे। भोजन करिके उत्सव न करे। ऊर्द्ध्वपुंड्र तिलक तथा तुलसी माला बिना एक क्षण हू न रहे। असमर्पित वस्तृ कदापि न ग्रहण करे। भगवान् को उच्छिष्ट ही लेय। अन्यमार्गीय की वार्ता भी न सुने। गुरु के पात्र में तथा भगवत के पात्र में भोजन न करे। जीव की अधीनता कदापि न करे। माला मुद्रा तिलक बिना सेवा कों न करे। मंत्र तथा स्तोत्रन कों प्रकाशित न करे, भगवान् तथा गुरु के

आसन पै अपनी छाया न डारे। स्नानादिक शुद्ध होयके भगवत्सेवा करे। तहाँ प्रथम देहकृत्य या विधि सूं करे, और ब्राह्म मुहूर्त अर्थात् सूर्य के उदय होयवे के पूर्व उठिके साक्षात् परब्रह्म श्रीकृष्ण को स्मरण करिके ग्राम सों बाहर या गृह में हाथ में जल को पात्र लेयके शौच अर्थात् छीवे कों जाय: कान में जनेऊ चढ़ाय उत्तर मुख होयके बैठे, मस्तक में वस्त्र बाँध लेय, मुहड़ो ढाँक लेय न तो जोर सों सांस लेनो न थूके रात्रि को दक्षिण की आड़ी मुख करिके बैठे ताके पीछे आलस्य छोड़िके एक बार लिङ्ग में पाँच बार गुदा में पवित्र माटी लगाय के धोवे, तीन बार वाम हाथ में, दशबार दोनों हाथ में माटी लगावे, सात बार पावन में माटी लगावें या प्रकार सूं पवित्र होयकें सोलह बार गंडूष कुल्ला करे, तथा लंघी करिके अन्त में छः कुल्ला करे, ताके अनन्तर अपामार्ग वेल नीम की बारह अंगुल की शुद्ध लाँबी तथा कनिष्ठिका अंगुलि या प्रमाण मोटी की कूची बनायके दातुन करे ताके पीछे बारह कुल्ला करे भगवत् सम्बंधीन में अपनेपनो राखे तिनसे जे भिन्न हैं, तिनसो भिन्नता मानें सत्य भाषण करे प्रिय भाषण करे अप्रिय न बोले बिना वैष्णवमार्गीय दीक्षान बारेन सों सेवा तथा पाक न करावे। या रीति

सूं प्रातःकाल स्नान को करे ताके पीछे धुवे भये श्वेत पवित्र धोती उपरणा धारण करिके पवित्र स्थान में पूर्व अथवा उत्तर मुख होयकें आचमन करिके तिलक लगावे बिना छिद्र को तिलक श्वान के पद समान है ताके पीछे प्राणायामादि करिके सन्ध्यावन्दन साक्षात्पूर्णपुरुषोत्तम को भजन नमन मनन कीर्तनादि करे।

अथ आचार विचार प्रकरण

सादाचार को अङ्गभूत ग्राह्य अग्राह्य स्पर्शास्पर्श पदार्थन की शुद्ध अशुद्धि विवेक बिना सदाचार पूर्ण सिद्ध नहीं होय है। क्योंकि प्रथम धर्म को मूल शुद्ध आचार है, तासूं सो प्रकार वर्णन करे हैं भावना सों दुष्ट क्रिया सों दुष्ट काल सों दुष्ट संसर्ग सों दुष्ट को त्याग करे। घृत सों पक्व दूध तथा केवल अग्नि सों पक्व अन्न फल के समान है। यह मनुजी ने कह्यो है। दृष्टि सों पवित्र देखिके पांव धरे। वस्त्र सों पवित्र जल पीवे आर्थात् (छनो भयो) सत्य सों पवित्र बचन बोले, मन सों पवित्र आचरण करे। पांय धोय के शेष जो जल पीत को शेष संध्या को शेष जो जल है, सो श्वान के मूत्र समान है। ताको पान करले तो चन्द्रायण करें। लहसुन गाजर पियाज मद्य मांस मसूर कलिंग श्वेत वृन्ताक मूलिका जरो अन्न कदापि न भोजन करे।

यावनी भाषा कों उच्चारण कदापि न करे जो कंठ हू में प्राण आय जाँय तोहू न बोले तथा जैनि के मन्दिर में न जाय। जो हाथी हू पीड़ा करे तोहू न जाय और नीच जे पशु पक्षी जीव हैं तिनको देख्यो स्पर्श्यो सूंघ्यो तिनके संसर्ग को अन्नादिक ग्रहण न करें सो कौन कौन हैं तिनकूं दिखावें हैं। दुष्ट पाखंडी पतित दुष्ट कर्मी ईश्वर कूं माने नहीं अवैष्णव ब्राह्मण तथा शूद्र एकादशी के दिन अन्न भोजन करिवे बारे शूकर कूकर कौआ ऊँट कूं आदि लैके नीच पशु पक्षी तथा रजस्वला सूतकी प्रभृति व्यभिचारिणी स्त्री तथा पुरुष वृषलीपति के देखे सों स्पर्श सों तथा भोजन को शेष अभक्ष्य सों युक्त सों संसर्ग दोष कहावे है। श्वान (कुत्ता) बिलाई चांडाल काक इनको दृष्टि दोष एकसो ही है। जे विमुख हैं, शाक्त हैं, शैव हैं तथा भैरव के पूजिवे बारे अन्य देवतान के उपासकन को दृष्टि दोष बचानो ये हू वैसे ही हैं, अति उष्ण अति रूक्ष बासी सूंघ्यो भयो अन्य को देखो भयो अन्नादिक स्वकार्य में नहीं लावनो रजस्वला चांडाल पतित सूतकी मृतक इनको स्पर्श करिके सचैल स्नान सों शुद्ध होय। यदि वस्त्रादिकन के व्यवधान सों स्पर्श होय तो साक्षात् स्पर्श कह्यो है। स्पर्श में जो कही है, वह वस्त्र के भीतर भी जाननी

स्नानादि करिके यदि काष्ठादिकन कों स्पर्श होय तो नाव के स्पर्श समान आचमन मात्र सूं शुद्ध होय रजस्वलादि स्पर्श में दो मनुष्यन को स्नान तीसरे को आचमन अर्थात् कोई मनुष्य को रजस्वला स्पर्श भयो वा मनुष्य को जो स्पर्श करे तो स्नान सों शुद्ध होय वाको जो स्पर्श करे सो आचमन मात्र सों तीसरो शुद्ध होय गौतमजी ने तो तीसरे हू को स्नान कह्यो है। चौथे को आचमन स्नान तीर्थादिकन में करे अथवा उष्ण जल सों यदि रात्रि को चांडालादिक को स्पर्श होय तों रात्रि ही में स्नानादिक करने। यदि स्पर्श करिके रात्रि को स्नान नहीं करे तो सो भाग अशौच और विशेष होय, यदि सूर्य के अस्त समय स्पर्श होय तो सुवर्ण अग्नि आकाश के दर्शन सों शुद्ध होय है, रात्रि में जो जन्म मृत्यु रजो धर्म होय ताके विचार कहें हैं। सूर्य उदय होयवे के अनन्तर स्त्री रज को देखे तो तथा जन्म होय अथवा मृत्यु होय तो जाको बार ताही की रात्रि है रात्रि के तीन भाग करे जो तीसरे भाग में जन्मादिक होय तो पूर्व दिन लेंनों रजस्बला स्नान करिकें अठारह दिन के पूर्व यदि होय तो अशौच नहीं है अठारहमें दिन एक दिन को उन्नीसमें दिन दोदिन को बीस सों लैके तीन दिन को यदि रजस्राव

बिना जाने होय तो सर्व कर्मन में शुद्धि है। शैव पाशुपत नास्तिक दुष्टकर्मन में स्थित द्विज और शूद्र को स्पर्श करिके सचैल (वस्त्र सहित) जल में प्रवेश करे स्नान करिके पान करिके छींक कें शयन करिकें भोजन करिकें मार्ग में चलिवे सों अधो वायु के निकसिवे में थूकवे में क्रोध करिकें भोजन करिकें मार्जार तथा मूसा कें स्पर्श में प्रहास में वस्त्र को बदल के पुन: आचमन करिवे सों शुद्ध होय है। तीर्थ में, विवाह में, यात्रा में, देश के विप्लव में, नगर तथा गाम के दाह में स्पर्श और अस्पर्श में दोष नहीं है। तथा आपत्ति में कष्ट में रोग के भय में पीड़ा में माता पिता गुरुन की आज्ञा में गौशाला में अश्व की शाला तैलयन्त्र इक्षुयंत्र में कोल्हू में स्त्री में राजकुल में पवित्रता को विचार न करे। विवाह उत्सव यज्ञ संग्राम मनुष्यन के समूह में भागवे में बन में जङ्गल में स्पर्शास्पर्श दोष नहीं। देवालय के समीप में यात्रा के अर्थ आये भये जे चांडाल पतितादिक हैं, तिनकों स्पर्श कदाचित् होय जाय तो स्नान न करे। दीवा सूप शय्या पादत्राण बुहारी इनको स्नान करिके यदि स्पर्श कर लेय तो पुन: स्नान करे सूं शुद्ध होय है। बकरी की धूर गर्दभ की रज बुहारी की रज दीवा मन्चान की छाया पूर्वकृत पुण्यन को नाश करें हैं सूप

के वायु नख को जल अँगोछा तथा परदनी को जल केश को जल ये हू पूर्वकृत सुकृत को नाश करें हैं।

मल तथा मूत्र को त्याग जोड़ा पहिरिके न करे आहत वस्त्र कों प्रोक्षण अर्थात् छींटा देवे सों शुद्ध होय। एक बार को धोयो भयो नवीन श्वेत जो पहिरो भयो न होय वह आहत कहावे, सब कर्मन में पवित्र है। वीर्य रुधिर छेद पीव मूत्र पुरीष चीकनो दुर्गन्ध पुरानो यह तौ दोष वस्त्रन में हैं उपस्करसों आच्छादित जो शय्या तथा लाल वस्त्र पुष्प यह छींटा मात्र दिये सों शुद्ध होय हैं। पशु सदा पवित्र है, ऋतुकाल से भिन्न समय में स्त्री हू पवित्र है। ब्रह्महत्यादि पाप ऋतुकाल में स्त्री को प्राप्त होय है। द्रव्यन की जे खान हैं, वे स्वयं शुद्ध हैं। लैवो दैवो जा हाट पर होय वो भी शुद्ध है। बकरी तथा घोड़ा मुख के भाग सों शुद्ध हैं गौ पीठ सों पवित्र हैं। फूले भये वृक्ष ब्राह्मण भस्म मधु सुवर्ण कुश तिल सर्वदा पवित्र हैं अपामार्ग शिरीष मंदार पद्म आमला मणिमाला सर्षप दूर्वा अक्षत बालू लोह हरिद्रा चन्दन यव पलाश खदिर पीपल तुलसी वट इनमें हू जल गोबर तथा गोमूत्र विशेष पवित्र हैं। द्रव्य की शुद्धि द्रव्य तथा वचन करिकें संस्कार सों होय हैं। अपनो सामर्थ्य देखिकें अथवा अपनी शक्तिता देखिकें बुद्धि करिकें धन

को सुभोता करिकें देश अवस्था के अनुसार शुद्धि करे बिना स्नान किये काष्ठादिकन सों वस्त्र लेयवे में दोष नहीं ऊनी वस्त्र रेशमी वस्त्र मृग चर्म बिनके मध्य में जो वस्त्र हैं और यदी अशुद्धि को विचार होय तो ते छींटा मात्र सें शुद्ध होय हैं। ऊन को वस्त्र तथा कंतान ऊपर लपेटे होय जा वस्तु में दो वेर ता ऊपर को निकार डारे तो भीतर की वस्तु शुद्ध होय हैं । वीर्य सों युक्त सूत्र पुरीष की मृत्तिका को स्पर्श सूं रजस्वला सों छीयो भयो ऊन को वस्त्र शुद्ध होय है । सुवर्णादिक के पात्र धोवन मात्र सों शुद्ध होंय हैं। तैजस मणीन के पात्र सर्व पाषाण मात्र के पात्र पाषाण सों जल सों मृत्तिका सों शुद्ध होय हैं, तांबा चांदी पीतल सीसा रांगा जसत अशुद्ध होय जाय तो २१ बार यव के चून सों माजिवें सों शुद्ध होय है, पीतल को छोड़िकें वो ताप सों शुद्ध होय है, ताम्र पात्र में जो गव्य है तथा पीतल के पात्र में जो मधु गुड़ सों युक्त अदरख तत्काल मद्य समान होंय हैं, घृत के बिना होम कार्य में गौदोहन में पाक करिवे में स्नान तर्पण दान में तथा पात्र को धरो गव्य अर्थात् दूध दही दूषित नहीं होय है।

आसन शय्या यान रथ पालकी नौका नाव मार्ग तृण यह वायु तथा सूर्य सों शुद्ध रहे हैं। ये अपने ही

शुद्ध है, पराये तो अशुद्ध हैं, । तोषा की गादी रजाई पुष्प लाल वस्त्र सूर्य के सामने राखैं सों पुनः जल के मार्जन सों अशुद्ध भये शुद्ध होय हैं। शाक जड़ फल जो हैं जितने अपवित्र हैं। तितनों ही भाग निकारि डारे पुनः जल सों धोय के ग्रहण करे सब कर्मन में घृत मधु तेल फल जो हैं मलेक्ष के वासन में धरे होंय तो हू बाहर आवन मात्र सों शुद्ध होय जाँय हैं। तथा हाट सब पवित्र हैं। बनायबे बारेन के हाथ हू पवित्र हैं। तथा दूध दही म्लेच्छ के हाथ को भी अशुद्ध है। फल फलारी तो मलेच्छादिकन की हाट की शुद्ध हैं। लोहार बढ़ई वैद्य दासी दास राजा यह तत्काल ही शुद्ध होंय हैं। मक्षिका (माखी) पवित्र है।घृत दूध दही गाँडे को रस गुड़ मधु मठा यह शूद्र के भाँड में धरयो भयो हू शुद्ध है। जो बहुत जल बारे कूप में दुर्गन्धादिकन सों कोई मरे जीव कों शङ्का होय तो तीस घड़ा जल के निकारिवे के नन्तर शुद्ध होय जाय है। जो ज्ञान न होय। यदि ज्ञान होय कि यामें जीव है, तो वाकों निकरवाय के यदि माटी को घड़ा होय तो त्याग करे, धातु को होय तो तपाय कें माँजि कै शुद्ध करें। वा कूप मे गोवर गौमूत्र डारे सों वायु के स्पर्श सों शुद्ध होय है। गृह की पृथ्वी गोवर गौमूत्र मृतिका लेप सों

शुद्ध होय है ।

वायु के संग में धूल तथा निरन्तर गिर रही जो जल की धारा सों शुद्ध है। गो घोड़ा माछी पतंग बकरी हाथी संग्राम में छत्र सूर्य चन्द्रमा की किरण सूं ही पवित्र है पृथ्वी अग्नि धूल वायु जल दधि घृत दूध वे स्पर्श में पवित्र ही हैं। धूप भी शुद्ध है। परन्तु इतनी वस्तु अपवित्र हैं। दाग गांडा गोदोहनी शुद्ध है पंखा आदि की कृत वायु वैसो पवित्र नहीं है। माला सूप मुख की वायु सुकृत को हरण करे है । ये बाह्य शुद्ध कही। अब आत्मशुद्धि कहें हैं।

विद्या सों तप सों प्राणायाम सों तीर्थाभिषेक सों व्रत दान सों जप सों वैसी शुद्धि नहीं होय है जैसी हृदय में साक्षात् श्रीकृष्ण परमात्मा के स्मरण सों आत्मशुद्धि होय है। कोई केवल साक्षात् निस्साधन भक्ति मात्र सों सर्व पापन के समूहन को नाश करे है। जैसें सूर्य अन्धकार को नाश करे है यह और सत्पुरुषन के आचरण में दोष के आरोपण करिबे बारो हरि के आवेश को प्रतिबन्धकर्ता काम व्यभिचार है सब दोषन को मूल स्थान है। पुष्टिमार्ग के आदि में जिनके ऐसे काम क्रोध लोभ मोह मद मात्सर्यादिक ते प्रतिबन्धक रूप अंधकार है तासूं मुख्य कामाख्य दोष व्यभिचार वर्णन करे हैं। काम है सो भगवान की प्राप्ति में अत्यंत प्रतिबन्धक है यासूं याको त्याग सर्वथा करिवे योग्य है सो विवरण में कह्यो है। सब दोषन में प्रथम काम को विवेचन निरूपण करें हैं। जाकूं विपरीत काम उत्पन्न भयो ताको भर्म कर्म सर्वनाश होय है यासों सदा विषय कोई आवेश हृदय में रहें है और चित्त कूं विक्षेप को हू यही कारण है और रजोगुण जे राजस मोहू याही सों आछी रीत सूं उत्पन्न होय है और मुख के ऊपर धूर गेरिबे बारो व्यभिचार है (१) भगवत् आवेश कों यह विरोधी है और बुद्धि को बाधक हैं। सत्कर्मन को नाशक है सम्पूर्ण लौकिक आसक्तिन को साधक है चित्त को अशुद्धता को आदि कारण है ज्ञान की उत्पत्ति में बाधक है और पुष्टिमार्ग में चलिवे बारे कूं महाशत्रु है। और वैराग्य के अभाव को साधक है सन्तोष को घातक है याही सूं अत्यन्त लोभ उत्पन्न होय है और सर्व इन्द्रियन कों भगवान तें बहिर्मुख करे है। हरि की प्राप्ति में लाभ व्यभिचार प्रतिबंधक हैं। काम करिकें जिनको चित्त कलुषित होय गयो है, और चक्रवर्त्ति को भी आयुष को यह टुक होय गये, अहो बड़े खेद की बात है! अहो यह मोह को विस्तार कितनों है, मोहित भयो जो पुरुष है, सो सूर्य के अस्तोदय

कूं नहीं जाने है। अहो! बड़े मोह जाल में बँधे हैं, अहो! पश्चात्ताप और खेद होय है ये उत्तम मनुष्य देह अनेक राजान के मुकुटमणि अपनी देह कूं स्त्रीन के क्रीड़ामृग कूं करें हैं तिनकूं धिक्कार है कितनो मोह! ऐसो देह को स्त्री के वश कर दियो, वैभव कूं छोड़ दियो, ऐसी कुलटा स्त्री के पीछे उन्मत्त की नाँई रोतो फिरे है,यह स्त्री के पीछे दौड़े है। तेज ईश्वरपना और महिमा कहाँ से होय जिनको चित्त स्त्रियन सों हरण होय है बिनने विद्या सीखी वासूं कहा भयो तप कीयो तो तप सूं भी कहा विशेष और त्याग सूं ही कहा भयो और शास्त्र सीख्यो वा श्रवण कियो वासूं भी कहा भयो कछू नहिं सर्व व्यर्थ है। और एकान्त में रहिवे सूं भों कहा भयो, तथा मौन धारण कियो तासूं हूँ कहा भयो जाको चित्त स्त्री ने हरण कियो विनके सगरे साधन व्यर्थ हैं। सत्य स्वार्थ रूप परमार्थ को नहि जाने है। मूर्ख है, और अपने कूं पंडित माने हैं, तिनकूं धिक्कार है! मनुष्यन को ईश्वर ऐसे राजपने को पायकें स्त्री बैल और गर्दभ की सी नांई स्वाधीन कर लेत हैं विषयन को उपभोग करिवे सो जैसें घृत पड़े सूं अग्नि विशेष वृद्धि को प्राप्त होय है। परन्तु शान्त नहि होय है, तैसे शांत नहि होय है। आत्माराम और अधोक्षज ऐसे ईश्वर विना और कौन छोड़ावे है, कुमार्ज में परे भये ऐसे और पेट तथा उपस्थ के लिये जो उद्यम के विषे तत्पर हैं ऐसे असज्जनों के साथ रहिके विषय में जो रमते हैं। सो प्रथम की नांई नरक में ही पड़त है सत्य, शौच, दया, मौन बुद्धि, श्रीयश, क्षमा, शम, दम और ऐश्वर्य ए सिगरे जो दुर्जन के सङ्ग सों नाश को प्राप्त होंय हैं अशान्त और मूढ़ और जिनके चित्त खंडित होय रहे हैं। ऐसे असाधू कों जो शोच्य है, और स्त्रियन के क्रीड़ा के मृग हैं तिनको सङ्ग न करे और के साथ रखिवे सूं तैसो मोह नहिं होय है, जैसो स्त्रियन के और स्त्री के संगिन को संग करिवे सूं होय है। ब्रह्मा ने सृजे ऐसे मनुष्य के विषे ऋषिवर्य नारायण बिना यह जगत के विषै स्त्रीमयी माया सों अखंडित बुद्धिवारो कौन है! कोहू नहिं है, ईशान को जीतिवे बारे कों भी मेरी स्त्री रूपिणी माया पाउँ के नीचे दबाय देय हैं देख्यो मेरी माया को बल! कैसों है जो स्त्री केवल भ्रकुटी के बिक्षेप मात्र सूं बड़े बड़े दिग्विजजियन कों अपने चरण सूं दबाय देहै। योग को परम पार के विषे आरोहण करिवे की इच्छा बारो कदाचित स्त्रियन के विषै सङ्ग कों न करे

क्योंकि श्रीजी की सेवा में जिनकूं अन्तरात्मा कों लाभ भयो है ऊपर कह्यो ऐसो परम योग को आरोहण करिवे की इच्छा बारो कबहू स्त्री के और स्त्रीसंगियन को सङ्ग नहिं करे है और श्रीजी की सेवा सूं जिनकों अन्तात्मा की शुद्धि भई है ऐसे पुरुष स्त्रीयादिकन कूं नरक के द्वार रूप कहें हैं। प्रभु की माया को जो रुत्री यह मेरो पुरुष है, ऐसो माने है और मोह सूं पुरुष भी स्त्री रूप देख पड़ती ऐसी मेरी माया रूप स्त्री के संग सूं मोह कूं प्राप्त होय है गृह रूप ऐसी और दैव ने प्राप्त कियो ऐसो मृत्यु रूप वह स्त्री को जाननी ऐसे स्त्रीयादिक के विषे काम करिवे सू भगवत्सेवा में प्रतिबन्ध होय है, तासूं भगवदीयन को है सो स्त्रीकूं भगवत्सेवा में सहाय करिवे बारी है ऐसो जानिकें प्रेम करे परन्तु कामबुद्धि सौं प्रेम करे नहिं, और वाको सङ्ग गृहस्थाश्रमादिक सुख कों भी काम वुद्धि से न करे परन्तु यामें भगवत्सेवा में तत्पर पुत्र होयगों वैसी बुद्धि सों गृहस्थाश्रम करे तैसे करिवे बारे भगवदीयन को भी गृहस्थाश्रम बाधक नहिं होय है। और या जगत में कौन प्रसन्न है ? और आश्चर्य कहा है ? वार्ता कहा है ? और उत्तम मार्ग कौन को है ? ताको समाधान ये है कि दिवस को अष्टम भाग

जो सायंकाल ता पर्यन्त भी जो अपुने घर में अनिषिद्ध व्यवहार तें प्राप्त भयो जो धन तासूं साग रोटी करिके जो श्रीजी कूं भोग धरिकें महाप्रसाद लेय और सेवा स्मरण करे कोई को देनों न होय क्लेश को वास न होय सोई या जगत में प्रसन्न है और आश्चर्य ये है कि नित्य प्रति अनेक जीव यमलोक में चले जांय हैं और जो यहां शेष रहे हैं वे यहां जगत में सदा रहिवे की ही इच्छा करें हैं। देखत देखत हू भूल जांय हैं, यासूं बढ़ती और आश्चर्य कहा हैं ? और वार्ता या या जगत की ये है कि महा मोहमयी तो कढ़ाई है। ताके नीचे सूर्य रूप अग्नि है, रात्रि दिन रूपी ईंधन है, बारह मास छ: ऋतु जो चाहे सो बेर बेर में आवे है जाय है ता कढ़ाई में भगवत् नामस्मरण भजन बिना मनुष्यन की आयुष्य कूं काल भूँज डारे है, दिन दिन प्रति आयुष्य क्षीण होय हैं तातें उत्तम कार्य धर्म आचार सेवा स्मरण कीर्तन नामोच्चारण जो काल करनों होय सो आज करनो और आज करनों सो याही क्षण करे जो क्षण जाय है, सो फेर नहीं आवे है, येही याकी वार्ता है और सर्व मार्गन में मुख्य एक मार्ग है। क्योंकि श्रुति स्मृति पुराणादि को विरोध दूर करिके निरधार कियो जो शुद्ध भक्तिमार्ग तामें चलै जो महा-

पुरुष श्रीआचार्यजी तिनके ही हृदय रूपी गुहा में मुख्य धर्म रह्यो है। तासूं जा मार्ग में वे चले हैं सोही मुख्य-मार्ग है। ता मार्ग में ही उनके पीछे चलनो उचित उचित है। हे श्रीगोवर्धनधर! राधावल्लभ! दैवी जीवन कूं स्वमार्ग में चलाय के कल्याण करो। आप सर्व सामर्थ्ययुक्त परम कृपालु हैं।

इति निजजनदास विरचित पुष्टिमार्ग सार संग्रहः।

समाप्त

श्री गोवर्धन ग्रन्थ माला सीरीज का

अद्वितीय प्रकाशन !

प्रथम पुष्प—
श्री सर्वोत्तम स्तोत्र भावार्थ सहित न्यौछावर २५ नये पैसे
द्वितीय पुष्प-श्री विट्ठलेश चरितामृत श्रीगुसांईजी को जीवनचरित्र
न्यौ० ३५ नये पैसे
तृतीय पुष्प—भावसिन्धु की वार्ता न्यौ० २ रु. ५० नये पैसे
चतुर्थ पुष्प—सूआ की वार्ता न्यौ० २५ नये पैसे
पंचम पुष्प—श्री रसनलालजी की नित्यकृति न्यौ० २५ नये पैसे
छटवां पुष्प—नित्यपाठ वृजयात्रा न्यौ० २५ नये पैसे
सप्तमपुष्प-श्रीयमुनाष्टक भावार्थसहित, एवं श्रीयमुनाजीके ४१पद
न्यौ० २५ नये पैसे
अष्टम पुष्प—श्रीगोवर्धनवासी एवं सूर-पच्चीसी न्यौ० १२ नये पैसे
नवम पुष्प—श्रीयमद्वितिया व्रत कथा व श्रीयमुनाजी नी आरती
(गुजराती में न्यौ. १२ नये पैसे
दसम पुष्प—खटऋतु वार्ता तथा श्रीवल्लभकुल को प्रागट्य
संपादक श्रीद्वार कादास जी परीख न्यौ. १) रु.
एकादश पुष्प-श्रीआचार्यजी महाप्रभुजी की निजवार्ता घरू वार्ता
(सं. १६८७ की प्रति-लिपि) भाव प्रकाश सहित
संपादक—श्रीद्वारकादास परीख न्यौ. २) रु.
बारहवाँ पुष्प—श्रीनन्ददासजी कृत रासपंचाध्यायी (ग्लेज)
न्यौ. ३८ नये पैसे
चौदहवाँ पुष्प—श्रीयमुनाष्टक भावार्थ सहित श्रीयमुनाजी के ४१
पद नित्यलीला सहित (ग्लेज) न्यौ. ३८ नये पैसे
पन्द्रहवाँ पुष्प—श्रीवल्लभाख्यान, मूल पुरुष न्यौ. ३८ नए पैसे

सोलहवाँ पुष्प—धौल पद संग्रह ग्लेज) न्यौ. २८ नये पैसे

सत्रहवाँ पुष्प—वैष्णवोपयोगी नित्यपाठ-संग्रह (बृजभाषा में श्रीनन्ददासजी कृत, रासपंचाध्यायी भ्रमरगीत एवं बल्लभाख्यान, मूल-पुरुष, (श्रीगोवर्द्धनवासी, सूरदासजी कृत सूर पच्चीसी, बल्लभाचार्यजी कृत श्रीयमुनाष्टक, एवं ताको भावार्थ, अष्टसखानकृत श्री यमुनाजी के ४१ पद, श्री चिंतनु के धौल श्री सर्वोत्तमजी के धौल, श्रीनाथजी तथा सात स्वरूप के धौल तथा दीनता आश्रय के पद सहित सुन्दर ग्लेज कागज पर, मुखपृष्ठ पर श्रीनाथजी को तिरंगो चित्र सजिल्द न्यौ. १ रु. ५० नये पैसे

अठारहवाँ पुष्प—वैष्णवों के नित्य नियम के २७ पाठ एव स्तोत्रों का गुटिका (ग्लेज न्यौ. ५० नये पैसे
(रफ) न्यौ. २८ „ „

उन्नीसवाँ पुष्प—श्री सुदर्शन कवच—(ग्लेज)
न्यौ० १० नये पैसे,

बीसवाँ पुष्प—पुष्टिमार्ग सार संग्रह रचयिता गो० श्रीरमणलाल जी महाराज मथुरा वारे न्यौ. १) रु. ५० नये पैसे

पुष्टिमार्ग सिद्धान्त—यामें शोडष ग्रन्थ, श्री बल्लभचरित्र, श्री सर्वोत्तम स्तोत्र, मधुराष्टक दोसो बावन एवं चौरासी वैष्णवों की नामावली श्रीगुसाईजी की विज्ञप्ति सुन्दर पदों में वर्णित हैं सत्सङ्ग मण्डलों से कीर्त्तन करवे योग्य न्यौ. १ रु. २५ नये पैसे

मिलने का पता—

पुष्टि मार्गीय पुस्तकों का केन्द्र—

श्री बजरंग पुस्तकालय, दाऊजी घाट, मथुरा.

हमारे यहाँ मिलने वाली पुष्टि मार्गीय पुस्तकों का

❀ संक्षिप्त परिचय ❀

ो सौ बावन वैष्णवों की वार्त्ता तीन जन्म की लीला भाव ावना सहित तीन खंडों में	न्यौ० २८) रु०
ौराशी वैष्णवों की वार्ता तीन जन्म की लीला भाव भावनावली ौराशी वैष्णवों के चित्रों सहित	न्यौ० ८) रु०
ष्टाक्षर महा मंत्र	न्यौ० १) रु०
ीर्तन प्रणाली के पद	न्यौ० ८) रु०
ी वल्लभ वंश वृत्त	न्यौ० ६) रु०
ी मद् वल्लभाचार्य और उनके सिद्धान्त	न्यौ० ३) रु०
ल्लभ पुष्टि प्रकाश (सातों घरन की सेवा प्रणालिका)	न्यौ० ८) रु०
ी नाथजी की प्राग्ट्य वार्ता	न्यौ० १) रु० ५० न.पै.
ी हरिराय जी कृत वृहद् शिक्षा पत्र	न्यौ० ६) रु०
ाव भावना श्री द्वारकेश जी कृत	न्यौ० १) रु० २५ न.पै.
ज परिक्रमा–गो० व्रजनाथजी कृत	न्यौ० १) रु०
ी गोकुलनाथ जी के २४ वचनामृत	न्यौ० १) रु०
ोडश ग्रन्थ-सटीक-टीकाकार श्री नृसिंहलाल जी महाराज	न्यौ० २) रु० ५० न.पै.

इनके अतिरिक्त समस्त संस्कृत, व्रज भाषा, हिन्दी, ुजराती, इंगलिश के पुष्टि मार्गीय ग्रन्थ तथा व्रज भाषा साहित्य ं धार्मिक ग्रन्थों के मिलने का एक मात्र स्थान—

पुष्टि मार्गीय पुस्तकों का केन्द्र

ी बजरंग पुस्तकालय, दाऊजी घाट, मथुरा

नोट–विशेष जानकारी को बड़ा सूचीपत्र मुफ्त मंगावें ।

हमारे यहाँ प्राप्त होने वाले ब्रज भाषा साहित्य के

ग्रन्थों का संक्षिप्त परिचय

सूर सागर दो खण्डों में	न्यौ० २०) रु०
परमानंद सागर	न्यौ० १२) रु०
साहित्य लहरी	न्यौ० ६) रु०
सूर और उनका साहित्य	न्यौ० १०) रु०
सूर के सौ कूट	न्यौ० ५) रु०
सूर का बसंत वर्णन	न्यौ० ४) रु०
अष्ट छाप परिचय	न्यौ० ५) रु०
वार्ता साहित्य का ऋतु सौन्दर्य	न्यौ० ४) रु०
वार्ता साहित्य (एक वृहद् अध्ययन) ले० डा० हरिहरनाथ टंडन एम. ए., पी. एच. डी.	न्यौ० १५) रु०
नंददास ग्रन्थावली	न्यौ० ६) रु० २५न.पै
कुंभनदास (जीवनी और पदावली)	न्यौ० ३) रु०
गोविन्द स्वामी ,,	न्यौ० ३) रु०
छीत स्वामी ,,	न्यौ० २) रु०
चतुर्भुजदास ,,	न्यौ० ३) रु०
ब्रज और ब्रज यात्रा ले० सेठ गोविंददास एम. पी.	न्यौ० ५) रु० ५० न.
रासलीला एक परिचय ,,	न्यौ० २) रु० ५० न.
ब्रज का इतिहास ले० कृष्णदत्त वाजपेई	न्यौ० ५) रु०
ब्रज का इतिहास-द्वितीय भाग ,,	न्यौ० ८) रु०

इनके अतिरिक्त ब्रज भाषा का यावत् प्राप्य साहित्य तथा ब्रज के प्राचीन महात्मा श्री हित हरिवंश जी, ध्रुवदास जी, चाचा वृन्दावन दास जी प्रभृति की वाणी हमारे यहाँ मिलती हैं।

विशेष जानकारी को बड़ा सूचीपत्र मुफ्त मंगावें।

मिलने का पता—

श्री बजरंग पुस्तकालय, दाऊजी घाट, मथुरा

आवरण पृष्ठ : कैलाश प्रिंटिंग प्रेस, मथुरा

---

* श्री गोकुलेश प्रभु प्रणीत *

* रहस्य भावना - निकुंज भावना *

संपादक—निरंजनदेव शर्मा

* श्रीकृष्णः शरणं मम *

दयासागर प्रभू श्री गोवर्द्धननाथजी हम सेवक यह छब्बीसवीं पुष्पांज
चरणारविंद में समर्पण करने लाये हैं। श्री गोवर्द्धन ग्रन्थमाला
रूपी इस वाटिका में सदैव नवीन-नवीन पुष्प विकसित होते
रहें, हम सेवकों की यह ही भावना है।

—: हम हैं आपके दासानुदास :—

निरंजनदेव शर्मा
प्रधान व्यवस्थापक

सोहनलाल शर्मा
संचालक

❀ श्री गोवर्द्धन ग्रन्थमाला समिति ❀

द्वितीय संस्करण } हरियाली मावस सं० २०२५ { न्यौछाव
५०० प्रतियाँ } सर्वाधिकार प्रकाशक के आधीन { १)२५

याद रखिये—संस्कृत, व्रजभाषा, गुजराती, इंगलिश में सम
भारतवर्ष में प्रकाशित होने वाला पुष्टिमार्गीय साहित्य
"माध्वगौड़ेश्वर" "निम्बार्क सम्प्रदाय" "हितहरवंस संप्रद
के ग्रन्थ तथा अन्य सभी गद्य तथा पद्यमय "व्रजभाषा साहि
एवं समस्त धार्मिक ग्रन्थों का एक मात्र प्राप्ति संस्थान—

पुष्टिमार्गीय पुस्तकों का केन्द्र :—

श्री बजरंग पुस्तकालय, दाऊजी घाट, मथुर

प्रधान व्यवस्थापक—निरंजनदेव शर्मा का सादर भगवद् स्मर

विशेष जानकारी को वृहद् सूचीपत्र निःशुल्क मंगावें।

❀ श्री गोवर्द्धननाथो विजयते ❀

श्रीगोवर्द्धन ग्रन्थमाला का छब्बीसवाँ-पुष्प

श्रीगोकुलेश प्रभु प्रणीत—

* रहस्य भावना, निकुञ्ज भावना *

यामें समस्त रहस्य भावना, निकुञ्ज भावना,
श्रीगिरिराज के अष्ट द्वारन की भावना,
श्रुतिरूपा कुमारिकान की भावना,
अग्निकुमारकान की भावना,
आभरणन की तथा सामिग्रीन की
भावना, षट् ऋतु की भावना,
को अलौकिक वर्णन
कियो है।

★

सम्पादकः—
निरंजनदेव शर्मा

❀

प्रकाशक :-

श्रीगोवर्द्धन ग्रन्थमाला कार्यालय

दाऊजी घाट, मथुरा।

द्वितीय आवृत्ति] रथयात्रा महोत्सव [न्यौछावर
५००] सम्वत् २०२५ [१रु०२५न.पै.

* पुण्य स्मृति में सादर समर्पण *

पुष्टिमार्ग के स्तम्भ वार्ता साहित्य तथा सूरसाहित्य
तथा भाव भावनाओं के मर्मज्ञ, व्रजभाषा
साहित्य के उत्कृष्ट विद्वान् गो० बा०
श्रीद्वारकादासजी परिख की
पुण्य-स्मृति में उन्हीं को
सादर समर्पित

दा० दा०
निरंजनदेव शर्मा
मथुरा।

---

* श्री कृष्णायनमः *
* श्री गोपीजन बल्लभायनमः *
श्रीगोकुलेज प्रणीत :—

रहस्य भावना

★

१ स्मरण भक्ति—प्रात:काल वैष्णवन कूँ श्रीठाकुरजी की सेवा कौ चिंतन करनौ। श्रीठाकुरजी के रात्रि के शयन पीछे के वियोग को विचार करनो। श्रीठाकुरजी के दर्शन की आरति करनी। पाछे दास्य-धर्म रूप माला को दर्शन करनो। वाके दर्शन सूँ सेवा में भगवद्भाव उत्पन्न होय। मैं श्री प्रभु कौ दास हूँ या प्रकार कौ स्मरण बन्यौ रहे। पाछें श्रीमहाप्रभु जी कौ तथा श्रीस्वामिनी जी कौ स्मरण करि नमस्कार करनो। जातें सेवा कौ अधिकार और दीनता प्राप्त होय। पाछें श्रीगुसाँईजी और आपके वंश कौ स्मरण करनौ। श्री महाप्रभुजी कौ वंश सब अलौकिक जाननो नाम और ब्रह्म संबंध दाता गुरू कौ स्मरण करनौ। पाछें उनकों नमन करनो।

२-प्रातःकृत्य, नित्यविधि-देह कृत्य करिके पाछे दंतधावन करनो। मुख शुद्ध्यर्थ बीडी खानी । मुख की बास मिटे । पाछें तेल मर्दन करिके स्नान करनो व्रत के दिन बीड़ी खानी नहीं। द्वादशी कों तेल न लगानो लघुशंका करिके चार, छीवे जायके आठ, भोजनान्ते बारह और विषयान्ते सोलह कुल्ला करने पाछे चरणामृत लेंकें भगवन्नाम लेनो। शरीर आछी रीति सूँ पोंछि अपरस वस्त्र पहरि तिलक मुद्रा धारण करने । सेवा कौ समय भयौ होय तो मुद्रा पीछे करनी । मंदिर के द्वार पास आय दंडवत करने ।

३ सेवा की विधि-प्रथम भगवन्मन्दिर कों नमन करिकै यह श्लोक बोलनो-

"भगवद् धाम भगवन् नमस्तेऽलंकरोमि तत् ।
अङ्गीकुरु हरेरथे क्षांत्वा पादोप मर्दनम् ॥"

पाछें भगवन्मंदिर की क्षमा मांगि माहात्म्य भाव तें नन्द, सुनन्द आदि द्वारपाल कौ स्मरन कौ करनो। बाल भाव होंय तो श्रीयशोदाजी, श्रीरोहिनीजी सखा, गोप गोपी आदि जो दर्शन कों आये हैं ऐसी भावना करि उनको स्मरण करनो । और निकुंज लीला कौ होंय तो ललिता-विशाखा आदि सखीजनन कौ स्मरण

करनो । पाछें नमन करनो । पाछे मनमें विनती करनी जो-

"मैं श्रीआचार्यजी को दास (दासी) हूँ । श्रीआचार्यजी श्रीगुसाँईजी की ओर देखिकै उनकी कानि तें अपनी संग सेवा में राखो । तुम्हारी कृपा तें प्रभु मोकों दर्शन दे ऐसी आप प्रार्थना करो ।"

४—मंदिर के किंवारन की भावना-मंदिर के दो किंवार श्रीस्वामिनीजी के दो नेत्रन के पलक हैं । श्रीस्वामिनीजी पलकें खोलें हैं तब श्रीठाकुरजी की झाँकी होय हैं।

५—निज मंदिर की भावना-मंदिर अक्षर ब्रह्म है, माहात्म्य में । बाल लीला में श्री नंदालय, रहस्य निकुंज भावना में श्रीस्वामिनीजी की निकुंज हैं, वृन्दावन में तहाँ श्रीठाकुरजी युगल स्वरूप सहित पोढे हैं। अथवा श्रीआचार्यजी और सब भक्तन के हृदय हैं तहाँ श्रीप्रभुजी 'निरोधात्मा' (नमामि हृदये शेषे या प्रकार) होय के सदा बिराजमान् हैं, अनेक स्वामिनी सहित यह भाव विचारनो ।

६—घंटा नांद की भावना-पाछे खासा शुद्ध मृतिका और जल तें हाथ धोने। ता पाछे घंटानाद करने ।

व्रज में सात्विक, राजस और तामसी तीन प्रकार की गाय हैं । उनके कंठ घंटा बंधे रहत हैं । सो अपने वच्छन कों रात्रि के भूखे जान मस्तक हिलाय के घंटा बजावें हैं । सो श्रीठाकुरजी कों सूचन करें हैं जो आप जागिकै हमकों खूंटान तें खोलो । यह ब्रज को भाव । नंदालय में तीन प्रकार को राजसी, तामसी, सात्विकी गोपी हैं । वे अपने कंबु कंठ तें मधुर स्वर और वानी तें प्रभुकों जगावे हैं रहस्यलीला में मेनां, सुआ आदि पक्षी जो श्रीस्वामिनी जी की निकुंज में पिजरान में हैं वे समय जानि बोल कै जगावे हैं। तमचर के प्रसंग करि धीरे डरपिं के जगावे हैं। (तमचर को प्रसंग रामानंद की वार्ता के भाव में है) सो ललिता-विशाखा के कंठ की समान बोलि के जगावे हैं। मधुर स्वरन तें। ता समें ललिता सखीजन बीन बजावें हैं।

७ शखनाद की भावना—रहस्य लीला में राजसी, तामसी, सात्विक गोपीजन तीन वार शंखनाद करत हैं। वैष्णवों के यहाँ शंखनाद नहीं होय। उनकौ अधिकार नही या भाव को। सखीजनन को दूसरो भाव पुरुष को हू है सो अष्टसखा सुवल, श्रीदामा आदि नन्दरायजी के यहाँ जाय के शंख बजाय श्रीस्वामिनी जी के कंठनाद की सुरत करावें हैं।

८--सिंहासन की भावना—पाछे हाथ खासा कर मंदिर में जाय शैया भोग को बंटा माला, बीरा, झारी, ये सब बाहर लायकै प्रसादी पात्र में ठलावने। पाछें मंदिर में जाय सोहनी (बुहारी) करिकैं भूमि पर गीलो वस्त्र फिराय पाछे सूको वस्त्र फिरावनो। ता पाछे सिंहासन झटक कर समारनो। सिंहासन महात्म्य में अक्षर ब्रह्म को मध्याकाश है । नंदालय में श्री यशोदा की गोदि है । और रहस्य भाव में श्रीस्वामिनी जी को गोदि है । कटि रूप सिंह को आसन है। पीछे को तकिया हृदय है आस पास के तकिया दोनों भुजा हैं । निकुन्ज में श्रीस्वामिनी जी तैं श्रीचंद्रावली जी और उनतें ललिताजी प्रगटी हैं तातें उनके भाव रूप जाननो नंदालय में श्रीस्वामिनी जी कुमारिका के मध्यनायक श्रीराधा सहचरी रूप तें सेवा को अनुभव करत हैं। ताते उनके रूप भी जानने।

९--सिंहासन के वस्त्र की भावना—उत्तरिय वस्त्र रूप हैं। सिंहासन के कलश कुच रूप हैं । (बीच को कलश मस्तक रूप है) जेमिनी ओर के तकिया पर मुखवस्त्र धरनो। सो लहेंगा स्वरूप जाननो । अथवा अचल रूप जाननों।

१०--मंदिर वस्त्र की भावना—जल छिरक के मंदिर वस्त्र करनो सो तीन प्रकार के ताप निवृत्त होय

हैं भक्त हृदय के । रहस्य भाव में अधरामृत सिंचन है । और श्रीठाकुरजी के चरण कमल के कुमकुम तें ललितादि सखीजनन के ताप दूर होय हैं । सीतलता होय है ।

११-झारी की भावना-वात्सल्य भाव में झारी श्रीयशोदा स्वरूप हैं । झारी नित्य माँजनी । सो देह कृत्य करि नित्य स्नान की भावना है । पाछे खासा को शुद्ध-पवित्र जल भरि कै श्रीठाकुर के वाम भाग धरनी । झारी ऊपर लाल वस्त्र ढाँपनो सो झारी की टोंटी श्री यशोदाजी के स्तन रूप है । झारी रूप श्रीयशोदा लाल वस्त्र रूपी साड़ी पहरि टोंटी रूप स्तन तें अपने बालक को स्तन पान करावें हैं या प्रकार की भावना करनी । निकुंज में श्रीयमुनाजी को भाव है मुख्य रहस्य भाव में स्वामिनी है । सो वाम अङ्ग विराजें हैं । सौभाग्यवती लाल वस्त्र झारी पै आवे । झारी कुमारिका के भाव रूप भी हैं । जाके जैसो भाव होंय वैसी भावना करें । श्रीयमुनाजी को भाव सबमें जाननो ।

१२-मंगल भोग की भावना-मंगल भोग धरें तामें एक कटोरी में औट्यो दूध केसर, बरास; सुगंध

मिल्यो भयो, एक कटोरी में दही, एक में संधानो, एक में मलाई, एक में माखन, तथा एक में पिसी भई मिश्री, और एक में बालभोग के लाडु आदि नई सामग्री नित्य फिरती करनी । वाकों साजि के ढाँप रखनो ।

१३-श्रीठाकुरजी के जागवे की भावना-श्री आचार्यजी महाप्रभु श्रीठाकुरजी के मुखारविंद स्वरूप हैं । तातें जहां श्रीमहाप्रभुजी के पादुकाजी आदि अलग न विराजते होंय वहाँ श्रीठाकुरजी के मुखारविंद के दर्शन करके श्री आचार्यजी को स्मरण करनो । पाछे शीतकाल होय तो गरम करी भई रजाई श्रीठाकुरजी कों जगाय के ओढावनी । युगल स्वरूप होंय तों सिंहासन पर दोनों स्वरूपन कों एक पधरावने और रजाई ओढानी । क्यों जो प्रातःकाल की वियोग क्षण हूँ सहन न होय । वा समें रसोइया को दर्शन करावने और कों मङ्गल भोग के दर्शन को अधिकार नहीं ।

१४-मङ्गल भोग धरवे की भावना-मङ्गल भोग धरते समय वात्सल्य भाव हृदय में रखनो । वात्सल्य-भाव में श्रीठाकुरजी के आगे राखी भई चोकी (मङ्गल भोग की) सो श्री रोहिनी जी को स्वरूप । सोना

की कटोरी श्री स्वामिनी को रस पात्र हैं। चाँदी कौ पात्र श्री चन्द्रावली जी को भाव । पीतल के पात्र में सोना की भावना करनी और जसत में चाँदी की। श्रीस्वामिनी रस रूप पात्र है उनमें कुमारिका की भावना करनी । श्री यमुनाजी सब में हैं। बड़ो कटोरा श्री चंद्रावली जी को श्री हस्त जाननो । या प्रकार मङ्गल भोग धरिकैं श्रीआचार्य जी तथा श्रीगुसाँईजी और तद्भावापन्न अपने ब्रह्मसम्बन्ध दाता गुरु एवं अष्टसखा आदि की कांनि देनीं। उनकी कांनि तें आप आरोगे। पाछे टेरा दे बाहर आनो ।

१५--टेरा की भावना—टेरा है सो माया रूप है। एक अविद्या रूप एक विद्या रूप। अविद्या रूप माया धर्म में मन लगावे नहीं दे, दूसरी विद्या रूप भगवत्सेवा स्वरूप है। सामग्री धरते समय जो टेरा करत हैं सो विद्या रूप माया है । सामग्री स्वरूपात्मक है। और वाको भोग भगवान् वरत हैं। भोग एकान्त बिना होय नहीं ताते टेरा आवत हैं। सो माया रूपी टेरा तें भक्त जनन कौ मनोरथ सिद्ध होय है।

वात्सल्य भाव तें टेरा करिवे तें कोई की दृष्टि लगे नहीं । कुमारिका के भाव में श्रीस्वामिनीजी

पधारें हैं, उनके साथ श्रीठाकुरजी कों बाल भाव तें श्रीयशोदाजी बैठारि के मङ्गल भोग धरें हैं वा समय रहस्य लीला को गुप्त रखिवे के लिए माया रूप टेरा आवे हैं। या भावना तें मङ्गल भोग धरनो ।

१६—शैय्या की भावना—पाछैं शैय्या मन्दिर में जाय कै शैय्या उठाय सोहनी करनी। मन्दिर वस्त्र करनो गीलो। शैय्या के कसना खोलि कै झार कै गादी बिछाय कसना बाँधने। कार्तिक सुदी ११ तें (प्रबोधिनी) रामनवमी तक कसना नहीं बांधने शीत के कारन। उष्णकाल में रामनवमी तें प्रबोधिनी तक बँधे।

शैय्या भक्त कौ स्वरूप है । शैय्या के उपर वस्त्र भक्त कौ हृदय है। आसपास के तकिया भक्त के दोऊ हस्त हैं।

शीत प्रभु के श्री अङ्ग में रहे है, और शैय्या रूप भक्त के हृदय के ताप विरह रहे हैं। जातें शीतकाल में शैय्या के पास कस्तूरी, जायफल, लोंग आदि गरम सामग्री आवे हैं। इन सामग्रीन तें भक्त अपने हृदय को भाव जनावे हैं। और सोभाग्य सूंठ की सामग्री हु धरे हैं। सो प्रभु वाको भोग करें हैं।

शैय्या के चार पाये चार यूथाधिपति भाव रूप हैं। चार पाये चार पाटी, चार तकिया प्रभुन के चारों ओर हैं। वाम भाग के श्रीस्वामिनी जी के भाव रूप और जेमिनी ओर के श्रीचंद्रावली के भाव रूप जानने। सिरहाने श्रीयमुनाजी के भाव रूप चरनारविंद की ओर ललिताजी को भाव जाननो।

१७—शैय्या के तकिया आदि की भावना— गेंदुआ कपोल के भावतें हैं। वाके पास गलीचा बिछे सो सब सखीन के भावतें। पाछे शैया को चादर उढ़ाय के बाहर आवनो।

पाछे शृंगार को साज ऋतु-समय के अनुसार निकासनो। शीतकाल में रुई के गद्दल वागा कोमल तकिया आवे। वे सब श्रीस्वामिनी के उदर के भाव रूप हैं। प्रभु पुष्टि स्वरूप तें बिराजें हैं ताते श्रीस्वामिनीजीकों सुख होय है। वागा के उपर पीलो पाट श्रीस्वामिनी के भाव तें। सफेद श्रीचन्द्रावलीजी के भावतें। लाल कुमारिकान के भाव तें। स्याम श्रीयमुना जी के भाव तें। या प्रकार अनेक रङ्ग के श्रीस्वामिनीन के भाव तें धरें हैं।

श्रीठाकुरजी के वागा को घेरा सो श्रीस्वामिनीजी के

लहेंगा रूप है। सूथन श्रीस्वामिनी की चोली रूप है, (लम्बे पूरे श्री हस्त की) श्रीठाकुरजी को उपरना श्रीस्वामिनीजी की साडी है।

जरी के वागे—आसोज सुदी १० विजय दशमी तें कार्तिक सुदी १ तक धरने। कार्तिक वदी ११ (गुर्जर आसोज वदी ११) कौं स्याम जरी के वागा श्री यमुनाजी के भावतें। कार्तिक वदी १२ कों पीरी जरी के वागा। श्रीस्वामिनीजी के भावतें। कार्तिक वदी १३ कों हरी जरी को वागा सोलह हजार कुमारिकान के भावतें। कार्तिक वदी ३० कों सफेद जरी को वागा निर्गुण भक्तन के भावतें धरने।

शीतकाल में सब भक्तन कों गाढावलंबन होय है याते शैय्या के ऊपर सिहराने में दो कस्तूरी की थैली श्री जमुनाजी के भावतें आवें। जहाँ श्रीयमुनाजी होंय वहाँ इर्ष्या द्वेष आदि नहीं रहे। सब भक्तन को भाव रस रूप होय जाय।

शीतकाल में अँगीठी भक्तन के विरह ताप के सूचनार्थ श्रीठाकुरजी के सन्मुख रहे।

अक्षय तृतीया तें—पाग पिछोरा धरने। श्रीनवनीतप्रियजी ओढनी धरें। यातें भक्तजनन कों भाव प्रगटे हैं। विरह की शांन्ति अर्थ ता दिन तें पंखा, चंदन अर्गजा धरें। या प्रकार ऋतु—समय अनुसार तैयारी करिके मङ्गल भोग सराने।

१८--आचमन तथा बीडी की भावना--आचमन की झारी श्रीयमुनाजी स्वरूप है । तष्टि (झारी के नीचे की तबकडी) श्रीललिता स्वरूप है । दोनों त्वरूप के मुखके प्रसादी जल कौ पान भक्त करें हैं मुखवस्त्र सो तो उत्तरिय वस्त्र है । पान की बीरी श्रीस्वामिनीजी को चर्वित है। सो आरोगें हैं । पाछें प्रसादी जल की झारी खाली करिकै मंगला आरती करनी ।

१९—मंगला आरती की भावना--गरमी में चार बाती की आरती होंय शीतकाल में सोलह बाती होंय । आरती भक्तन के हृदय को विरह है सो प्रभु पर न्योछावर करत हैं। श्रीयशोदा के भावतें पुत्र की रक्षा के लिये मातृचरण बलिहारी लेति हैं । आरती करि दंडवत प्रणाम करि प्रसादी हाथ धोय शृंगार करने ।

२०--अभ्यंग और स्नान की भावना—थारी में चौकी बिछानी तामें चार तैह को वस्त्र बिछामनो । उत्सव होय तो अभ्यंग कौ साज निकट रखिए। पाछे श्रीअंग कौ शृंगार बड़ो करनो। ठाडे स्वरूप कों तनिया रहे । पाछे स्नान करावनो । श्रीनवनीत प्रियाजी कों वस्त्र न रहे। नंदरायजी के भावतें । ठाडे स्वरूप कों वस्त्र रहे।थारी ललिता स्वरूप । चौकी चंद्रावली रूप । वस्त्र श्रीस्वामिनी रूप । श्याम स्वरूप कों नित्य फुलेल

लगाय स्नान करामनो । श्रीनवनीत प्रियाजी कों केसरी चंदन में रंच फुलेल तेल पधराय, कै स्नान करामनो । आमले कों भींजाइ कै वस्त्र तें छान आमला के जल में थोरी हलदी थोरी सुकी तुलसी तथा थोरो फुलेल पधराय कै अपराध न होय ऐसो मनमें भय राखिकें श्रीठाकुरजी कों स्नान करामनो। आमले श्रीयमुनाजी कौ भाव तुलसी कुमारिका कौ भाव, हलदी अभ्यंग तें अलौकिक ब्याह की सूचना करें हैं । कोई विरह की सूचना हू कहें हैं। वो हल्दी श्रीस्वामिनीजी के श्रीअङ्ग कौ रंग है। फुलेल श्रीस्वामिनी जी को स्नेह है। जल श्रीचंद्रावलीजी रूप श्रीस्वामिनीजी के हृदय कौ विरह है। ऐसी भावना कर श्रीठाकुरजी कों स्नान करामनो । जल श्रीयमुनाजी को रूप हू है । स्नान के लोटा में थोरो जल रहे वाकों श्रीठाकुरजी के ऊपर फेरिकै थारी में करि देनो । फेरि दर्शन करने । श्रीठाकुरजी के सर्वाङ्ग दर्शन करिवे तें दृष्टि-दोष भयो होय वह लोटा कों श्रीठाकुरजी के ऊपर फिरायवे तें दूर होय है।

१—शृंगार की भावना—पाछें श्रीठाकुरजी के अंगवस्त्र करनो । फिर स्याम स्वरूप होय तो चोवा समर्पनो और गौर स्वरूप होय तो अतर समर्पनो । चोवा श्री यमुनाजी के भाव तें हैं । बड़े स्वरूप कों तनिया

धरावनो ।

श्रीनवनीतप्रियजी कों शीतकाल में रुई को बागा, गदल, उष्णकाल में ओढनी धरनी । अलंकार धरतें होंय तो अलंकार धरिये अंजन धरावते हों तो अंजन धरनो । अंजन में काजर, घी, बरास है सो श्रीयमुनाजी काजर रूप हैं, घी श्रीस्वामिनीजी कौ स्नेह है और बरास श्रीचंद्रावलीजी के भाव रूप हैं पाछे चरनारविंद में नूपुर श्रीस्वामिनीजी धरावें हैं और नंदालय में श्रीयशोदाजी वात्सल्य रस के आधिक्य तें धरावें है या प्रकार भावना करनी ।

याही प्रकार श्रीयशोदाजी के घर में श्रीस्वामिनी के भाव तें कुमारिका शृंगार धरावें हैं । और निकुं में श्रीस्वामिनीजी अपने श्रीहस्त सों शृंगार करें हैं । श्रीस्वामिनीजी को शृंगार श्रुतिरूपा-श्रीचंद्रावलीजी अपने हाथ सों करें हैं ।

शृंगार में दो भाव हैं—१ रीति और २ विपरीत । रीतिको शृंगार मर्यादा तें होय और विपरीत पुष्टिप्रका तें । रीति कौ शृंगार सिखातें नख पर्यन्त धरायो जा और विपरीत नखतें सिखा पर्यन्त । निकुंज में श्रीस्वामिनीजी नखतें सिखा पर्यन्त शृंगार करें हैं ।

नूपुर पाछें जेहर धरावनो । नूपुर श्रीस्वामिनीजी

के भाव रूप हैं । जेहर श्रीयमुनाजी के भाव रूप सुवर्ण श्रीस्वामिनीजी के भावरूप, चाँदी श्रीचंद्रावलीजी के भावरूप और हीरा श्रीकुमारिका के भावरूप जानने । पाछें पीतांबर धरावनो ऊपर क्षुद्रघंटिका । सो रासविहार आदि में रस उद्दीपन करे हैं । पाछे वैजयंति ग्रीवा तें कटि ताँई आवे ।

अब नौ प्रकार के भक्तन के भावतें सोना के मनिका की माला आवे । प्रतिमनिका के साथ एक-एक मणि पोये होंय, ऐसी माला धरावनौ । सो 'साधनसिद्धा' और 'नित्यसिद्धा' के भावतें । वा पर उज्ज्वल गजमोती की माला श्रीचंद्रावलीजी के भावतें आवें । वा पर सोने की साँकल हृदय पर धरें सो श्रीस्वामिनीजी ने स्नेह को फंदा श्रीठाकुरजी के उपर डार अपने वश करि लीने हैं । या भावतें आवें । बीच में चौकी आवें सो स्वामिनी के हृदय रूप और हीरा की रत्न जटित धुग धुगी सो श्रीचंद्रावलीजी के भाव रूप । पाछें पछेली, छत्र के चिन्ह की भावना करनी वह आधिदैविक लक्ष्मी रूप स्वामिनी हैं उनकों श्रीठाकुरजी ने हृदय में छिपाय रखें हैं । और कंठ में कौस्तुभमनि कीं भावना करनी । वह कोटि कोटि स्वामिनी के हृदय रूप है । पाछें कंठ में सोना की

हँसुली धरें सो श्रीस्वामिनीजी के श्रीहस्त की गलबाँही कौ भाव जाननो। वा हँसुली में चित्र-विचित्र नक्कासी है वह श्रीस्वामिनीजी के हस्त के आभूषण जानने। हँसली की दो नोंक मुरी हैं, वह नख कौ भाव है। पाछें तीन लर, पांचलर, सातलर, नौलर, तेरहलर और एक इक्कीस लरिकी माला धारण करें हैं। तीन लरिकी माला है वह राजस-तामस सात्विक भक्तन के भाव रूप। पांचलरि की माला में श्रीस्वामिनीजी, श्रीयमुनाजी श्रीचंद्रावलीजी, श्रीकुमारिका और सब स्वामिनीन के भाव रूप जाननी। सात लरि की माला में चारयूथाधिपति और तीन राजस, तामस, सात्विक भक्त के भाव जानने। नव लरि की माला में नव प्रकार के (सात्विक, राजस, तामस के तीन तीन प्रकार के) भक्तन कौ भाव जाननो। तेरह लरि की माला में भक्तन के एकादश इन्द्रिय के अङ्ग और दो नित्यसिद्धा के स्वरूप के अङ्ग और दो नित्यसिद्धा के स्वरूप के भाव जानने। एकईस लरिकी माला में दस प्रकार के भक्त (नौ सगुण एक निर्गुण) श्रुतिरूपा के यूथ के और नो प्रकार के कुमारिका के यूथके तथा श्री स्वामिनी जी और श्री यमुना जी के भाव जाननो। कंठ ते चरणारविंद ताँई ये सब

सब मालाएँ आवें तापर वनमाला आवें। सो तुलसी तथा अनेक वनस्पति की होंय। सो ब्रज की समस्त स्वामिनी श्रीयमुनाजी, सखी, सहचरी और सब दूतिन के भाव रूप हैं। सो श्रीठाकुरजी भ्रमर रूप होंय वनमाला पर सब भक्तन के रस कौ अनुभव करत हैं। कभी अकेली तुलसी की माला हू धारन करें हैं तब श्रीस्वामिनीजी के श्रीअङ्ग की सुगंध कौ अनुभव करें हैं।

'प्रियागंध तुलसी' इत्यादि।

कोई समें श्रीठाकुरजी कमल की माला हू धारण करें हैं। सो श्रीस्वामिनीजी के हृदय के भाव रूप हैं।

२२—श्रीठाकुरजी के फूलन के शृंगार कौ भाव—कोई दिन पीरी चमेलीन की माला धारण करें, तब श्रीस्वामिनीजी के श्रीअङ्ग के वरण कौ भाव विचारनो। सुफेद चमेली की माला श्रीचन्द्रावलीजी के श्रीअङ्ग कौ भाव। मोगरान की माला श्रीचन्द्रावलीजी की दंतावली कौ भाव चंपा की माला श्रीकुमारिका कौ भाव। गुलाब के फूलन की माला में श्रीस्वामिनीजी के हास्य तें फूल झरें ऐसो भाव विचारनो। कोयल श्रीयमुनाजी कौ और पाडर श्रीस्वामिनीजी की नासिका के भाव रूप। कदंब श्रीकुमारिका के भाव रूप इत्यादि

भाव विचार के माला धरामनी ।

२३--श्रीठाकुरजी के दोनों श्रीहस्त के शृङ्गार कौ भाव-श्रीठाकुरजी के दोनों श्रीहस्त की दस अंगुलीन में दस मुद्रिका धारण होय सो दस प्रकार के भक्त रूप हैं। स्नेह के बस होकर भक्तन कों धारण कर रखे हैं। जब श्रीठाकुरजी वेणु बजावें हैं तब उन मुद्रिका रूप भक्तन कौ श्रीठाकुरजी के कपोल पर स्पर्श होय हैं। याहूं युगलगीत में कहत हैं:—

"वामबाहु कृत वाम कपोलो" दस अंगुलिन के दस नख हैं सो चंद्र रूप हैं। सो दस नखचन्द्र के प्रकाश ते भक्तन के हृदय में रही असद्वासना रूप अन्धकार को नास होय है। हृदय में प्रकाश और शीतलता होय हैं। पाछें दोनों श्रीहस्त में कङ्कन धरें हैं। सो श्रीस्वामिनीजी ने ब्याह के समय अपने कङ्कन पहराए हैं जडाउ के। वाके पास पहोंची हैं, सो श्रीचंद्रावलीजी ने अपने ब्याह के भावतें श्रीठाकुरजी कों पहराई हैं। फेरि सोना के कडे हैं। सो कुमारिकानने अपने ब्याह के भावतें पहराये हैं। सो कुमारिकान के रसके बंधन-रूप हैं।

२४--मुरली कौ भाव—श्रीठाकुरजी श्रीहस्त में मुरली धरें हैं सो श्रीस्वामिनीजी के सुरतें मुरली द्वारा अपनों

सुर मिलावे हैं। यातें मुरली परम प्रिय है। और मुरली के सात रंध्र हैं सो मुख्य रंध्रतें श्रीस्वामिनीजी श्री ठाकुरजी को सुधा कौ पान करे हैं अन्य छः रंध्रतें श्रीचन्द्रावलीजी, श्रीकुमारिका, गाय, गोवर्द्धन, पशु-पक्षी और देवतान कों सुधा कौ दान होय है। वृक्षलता औषधि आदि कों भी दान है।

वेणु भीतर तें पोलो है सो लौकिक वैदिक बासना करिकें रहित है। और 'सुधा' श्रीमहाप्रभुजी स्वरूप है तथा वेणु श्रीगुसाँईजी के भाव रूप है सातरंध्र सात बालकन के भाव रूप। इन करि सारो व्रज भगवदीय होय है।

२५--वेत्र की भावना—वेत्र (लष्टिका) श्रीयमुनाजी रूप है। सो पुष्टिमार्ग के विधाता ब्रह्मा है।

२६—चिबुकाभरण की भावना—चिबुक के आभरण श्रीचन्द्रावलीजी रूप हैं। सो श्रीस्वामिनी और श्रीठाकुरजी के अधरामृत कौ पान करें हैं।

२७--वेसर की भावना—वेसर श्रीस्वामिनीजी तथा श्रीचन्द्रावलीजी दोनों अपने-अपने भावतें धरावें हैं। बिंबफल सारिखो श्रीठाकुरजी को अधर है वाके रस को पान करिवे के लिये श्रीस्वामिनीजी के मनरूप सुआ आयके बैठ्यो है । सो रस-पान करिके रस में

मग्न होय घूमि रह्यो है ऐसो वेसर कौ भाव विचारनौ अथवा वेसर में सोना हैं, सो तामें श्रीस्वामिनीजी कौ भाव विचारे और वामें चुन्नी है। सोहू श्रीस्वामिनी रूप हैं। मोती श्रीचन्द्रावली रूप है।

२८—तिलक की भावना—केसरी तिलक श्रीस्वामिनीजी के भाव रूप है। प्रसादी कुंमकुंम कौ तिलक विरह ताप कौ निवारन करें हैं। कस्तुरी कौ तिलक श्रीयमुनाजी के भाव रूप है। जडाऊ तिलक श्रुतिरूपा के भाव रूप। गोरोचन कौ तिलक सोलह हजार अग्निकुमारिका के भाव रूप। लम्बो तिलक श्रीस्वामिनीजी के चरणारविंद के आकार की भावना सुं श्री ठाकुरजी धारन करें हैं। सो श्रीस्वामिनीजी ने छाप देके वश कर राखे हैं।

२९—कुंडल की भावना—कुंडल साँख्य योगरूप है। अथवा श्रीठाकुरजी मयुराकृत कुंडल धारण करें हैं। सो मयुराकृत तें तो जैसे मोर मयुरी को रसदान कला करिके करें हैं वैसे श्रीठाकुरजी निर्विकार रूप तें वाही प्रकार भक्त कों रसदान करत हैं। और मीनाकृत मस्त्याकृत कुंडल जैसे मीन मकर जल में रहें हैं ता प्रकार जल रूप रसमय प्रभु हैं, या भाव प्रकट करिवे के लिये धरें हैं।

३०—अलकावली को भाव—अलकावली श्रीचंद्रावलीजी के भावरूप है।

३१—पाग और मुकुट की भावना—पाग श्रीयमुनाजी को भाव है। मुकुट श्रीस्वामिनी को भाव है। श्री आचार्यजी स्वयं श्रीस्वामिनीजी रूप हैं सो आपने मोरपंख को मुकुट करके श्रीठाकुरजी कों सर्व प्रथम धरायो है। और कुलह श्रीचन्द्रावलीजी के भाव सूँ धरें हैं। कुलह उत्सव को साज है, यातें उत्सव में आवें। कुलह श्री गुसाँईजी श्रीचन्द्रावली रूप हैं। तातें उनके भाव रूप। उत्सव के सब शृंगार श्रीगुसाँईजी ने प्रकट किये हैं।

सेहरा का भाव—अग्निकुमारिकान के भावते हैं। वे पहले ऋषि हते सो श्रीरामचन्द्रजी के वरदानतें वंगदेश तें व्रज में आई हैं। ऋषि होयवे के कारण कुमारिकान कों वेद मर्यादा रीति तें विवाह प्रिय है। तातें कात्यायनी व्रत कियो और प्रभुन कों अपने पति-भाव तें माने सो सेहरा विवाह के भाव ते हैं।

टोपी की भावना—टोपी श्रीयशोदाजी के भावतें धारण करें हैं। ग्वालपगा ग्वालन के भावतें। तामस भक्तन के मान मर्दनार्थ टिपारो धारण करें हैं। राजसी भक्तन के लिये दुमाला और सात्विक भक्तन के लिये फेंटा धारण करें हैं। वेणी श्रीस्वामिनीजी के

भावरूप हैं। मीना को सिरपेच कुमारिका के भावतें हैं।

सोना की कलगी कुमारिका के भावतें। मोर पंख की कलगी श्रीस्वामिनीजी के भावतें। तुर्रा श्रीयमुनाजी के भावतें टिपारा के दोनों ओर कतरा आवे हैं। सो एक वाम भाग को श्रीस्वामिनीजी के भावते। वह श्रीठाकुरजी के रक्षणार्थ और जेमनों श्रीचंद्रावलीजी रक्षणार्थ धरावें हैं।

चंद्रिका—श्रीस्वामिनीजी धरावें हैं। तीन चन्द्रिका राजस तामस सात्विक के भावतें। पाँच चन्द्रिका—चार यूथाधिपति और समस्त व्रज भक्तन के भावतें। चाकदार वागो श्रीचन्द्रावलीजी के भावतें।

२२-श्रीस्वामिनीजी के शृङ्गार की भावना—मांग सँवारि पटिया में सुन्दर फुलेल लगाय सिन्दुर भरें हैं। सो श्रीठाकुरजी के अत्यन्त संकुचित स्नेह जतायवे के अर्थ है फुलेल श्रीठाकुरजी के स्नेह रूप हैं।

श्रीस्वामिनीजी के केश हैं, तिनके आगे छोटी-छोटी घूंघर वाली लटें हैं सो श्रीठाकुरजी अनेक भ्रमर रूप होयके रहें हैं। आप मुख-कमल के पराग को पान करें हैं।

श्रीस्वामिनीजी के कपोल पर दोनों ओर लटें हैं

सो कुच उपर आइ रही हैं। सो अत्यन्त शोभाकों प्राप्त होय रही हैं। सो मानो श्रीठाकुरजी के ये दोऊ श्रीहस्त हैं। सो कुच-कलश को अनुभव करत हैं।

श्रीस्वामिनीजी की चोटी श्रीचन्द्रावलीजी करत हैं, सो फूल गूंथें हैं। सो केश श्रीठाकुरजी रूप हैं। सो युगलस्वरूप को अनुभव होत है। अथवा गूंथे भए फूल श्रीचन्द्रावली रूप हैं सो युगल स्वरूप की सेवा करें हैं। कभी जूरो बांधे हैं। कभी वेनी पीठ पर लटक रही हैं। तातें रीत विपरीत भाव समजनो।

वेनी गूंथी है तामें सोना को झब्बा है सो श्रीस्वामिनीजी के भाव रूप हैं और स्याम रेसमी पाट को फोंदना श्रीठाकुरजी को स्वरूप है। सो श्रीस्वामिनीजी के पीठ रूप सोना के स्तम्भ पर रस रूप सुरत हिंडोरे श्रीठाकुरजी भूल रहे हैं यह भाव जाननो। श्रीस्वामिनीजी की पीठ पर रही भई, वेनी और झब्बा बार-बार चंचल होय रहें हैं। वेनी में चार झब्बा हैं और तामें स्याम रेशम के फोंदना हू चार हैं। सो चार यूथपति हैं। वह विवाह को भाव सूचित करें हैं। वेनी में जो फूल गूँथे हैं। सो मानों सब सखीजन यह लीला के दर्शन करत हैं।

श्रीस्वामिनीजी के केश पर वाम भाग में जडाव

की शीश फूल धारन किये हैं सो सूर्य रूप हैं । सो दिन की लीला में रस-उद्दीपन में सहायक हौंय हैं । और सूर्य-पुत्री श्रीयमुना के भाव रूप भी हैं।

श्रीस्वामिनीजी की दोनों भ्रकुटि रूप धनुष हैं सो कामदेवके मदकों चूर करें हैं और श्रीठाकुरजी के ऐश्वर्य-मद कों भी दूर करें हैं । भ्रकुटी की मरोर तें श्रीठाकुरजी त्रिभंगी होय रहे हैं ।

भ्रकुटी के बीच में जटित तिलक है, वाके पास कस्तूरी को स्याम बिन्दु है । और सोना की बिन्दी हू है । और मोती शोभायमान है । सो कस्तूरी को बिन्दु श्रीठाकुरजी के भ्रमर स्वरूप है । सो मुख-कमल को पान करे हैं । सोना की बिन्दी श्रीस्वामिनी रूप हैं सो श्रीठाकुरजी रूपी भ्रमर को सोभायमान करत हैं । मोती श्रीचन्द्रावलीजी के भावतें हैं । और जटित बिन्दी श्रीयमुनाजी के भाव रूप जाननो ।

श्रीस्वामिनीजी बांकी बिन्दी के बीच में बैना लटकें हैं । सो श्रीठाकुरजी के भाव रूप हैं । वो मधुर रस के भाव कों बढ़ावन हारो है ।

दोनों श्रवण में बांके झूमक सहित कोई वार करन फूल कोई वार नक फूली आदि धारण करें हैं बांके झूमक श्रीयमुनाजी के भाव रूप हैं और नकफूली

रूप सोलह हजार कुमारिका हैं, यह अवस्था में श्रीस्वामिनीजी सों छोटी हैं, दोऊ नयन कमलन में अरुण स्वेत ड़ोरा तामें अंजन कियो है, सो तामें अनेक प्रकार के भाव हैं तिनमें कछु कहें हैं, श्वेत डोरा श्रीचन्द्रावली जी रूप, तथा अरुण डोरा कुमारिका रूप, श्याम पुतरी श्रीयमुनाजी रुप, सो तामें अनन्य रुप श्रीठाकुरजी हैं ।

चारों यूथ पतिन के रस को अनुभव करत हैं, सो तहाँ दोऊ करणन में करनफूल हैं, सो ता करिके व्यापि-वैकुण्ठ की लीला और व्रज की दोऊ लीलान को अनुभव अङ्ग अङ्ग में करत हैं तासों रोम रोम पर लुभाय के परवश होय रहे हैं, और सुन्दर नासिका में नकबेसरि तथा सुन्दर नथ विराजमान हैं । सो नथ नाँहीं है, श्रीठाकुरजी को मन पच्छी की नाँई चंचल ह्वै रह्यो है । सो सगरे भक्तन के रसपान करन में आप चलायमान हैं, पच्छी के पकरन को कामदेव रुपी जाल बिछाय राख्यो है, सो श्रीठाकुरजी को मन, पच्छीरुप अधरबिंब रसपान करन को आयो । सो नथरुपी जाल में ता रस को भोग करन लाग्यो । तब श्रीस्वामिनी जी ने नथ रुपी जाल को चलायमान करिकें श्रीठाकुरजी के मन-रुपी पच्छी को बाँधि लियो है । सो मनके बंधत ही

देह प्राण, सब बंधि जाँय हैं । सो तासों श्रीठाकुरजी श्रीस्वामिनी जी की नथ की शोभा देखिकें तन, मन, धन सो वश होय जाँय, वा नथ में मोती चुन्नी रूप श्रुतिरूपा गोप भार्य्या मुख्य के भावतें । गोलाकार श्री यमुनाजी सोने की झलमलात रूप हैं, और चुन्नी रूप सोलह हजार कुमारिकान में मुख्य हैं । सो अलौकिक सुखरुप श्रीठाकुरजी धारण कर अधरबिंब के रस को पान करत हैं । अथवा शुकरुप तथा तिलके फूल रुप श्रीठाकुरजी को नथरुप भक्त अधरामृत के रसको पान करिकें, उन्मत्त होयकें झूम रहे हैं । सो परस्पर दोऊ रसपान करत हैं ।

पाछे चिबुक पर श्याम बिन्दु अत्यन्त शोभा देत हैं सो ताको भाव यह हैं, जो श्रीठाकुरजी छोटे भ्रमर को रूप धारण करि चिबुक पर यातें बिराजत हैं । जो श्रीस्वामिनीजी, आप अपने मनमें प्रसन्न होयकें दूध दही इत्यादि जो रस को पान करें, सो वहिकें चिबुक पर आवे, सो तासों श्रीठाकुरजी वा प्रशादी अधरामृत रसके पान करणार्थ चिबुक पर बिराज रहें हैं, अब दोऊ सुजान के आभूषण कों भाव वर्णन करत हैं । सो बाजूबंद जड़ाऊ पहिरे हैं । ताके नीचे गोल कड़ा पहिरे हैं । ताके नीचे श्रीठाकुरजी की रीति

विपरीत अनेक रसके बंधन के भाव कों सूचन करत हैं । सो दक्षिण दिशा के बाजू बड़ा विपरीत रस तथा अनेक रस के बंधन को भाव प्रगट करत हैं । और वाम दिशा के बीच रीति रस को भाव जनावत हैं । ताके नीचे कंकन, पहुँची, पछेली, चूरी, धारण किये हैं, सो चूरी सौभाग्यरुप हैं । और कङ्कन श्रीठाकुरजी ने ब्याह खेल करिके कुञ्ज में पहिराये हैं, पहुँची रुप श्रीपुरुषोत्तम के सर्वाङ्ग रस को अनुभव करन कों श्रीस्वामिनीजी की ही पहुँच हैं, अन्य कुमारिका कहैं अब हमें भी पहुँचाय देऊ । क्योंकि हम तिहारी शरण हैं । तब श्रीस्वामिनी ने पूर्ण पुरुषोत्तम के अधरामृत को रसास्वादन समस्त, गोपिकान कूँ करायो । और पछेली श्रीचन्द्रावलीजी को मनोरथ को भावरुप धराये । और चूरी श्रीयमुनाजी की लहरि रुप हैं । या भावतें श्रीठाकुरजी सदा विहार करत हैं । और कङ्कन कर श्रीठाकुरजी सदा हस्त में राखत हैं ।

श्रीहस्त कें उपर के तल पर हथसाँकला के फूल हैं, दस आंगुरीन में दस मुद्रिका हैं । बीच में हथ साँकली है । सो श्रीठाकुरजी के श्रीहस्त कों बांध लिये हैं ।

कंठ में तीन मनिका स्याम रेशम की पाट में पोये

भये हैं सो सोने के हैं। सो सात्विक, राजस, तामस भक्त हैं।

उर स्थल पर स्याम कंचुकीं कसिके बाँधी है, सो बंध रुप है। दोनों तनी पीठ पर बंधी हैं, सो श्रीठाकुरजी के दोनों श्रीहस्त हैं। सो गाढ आलिंगन के भाव-रुप है।

कंचुकी पर चौकी विराजमान है। सो निकुंज को शैया रुप हैं। चौकी के नीचे धुगधुगी रत्न जटित है। स्याम पट में पोई भई है। धुगधुगी के मिष तें श्रीठाकुरजी कों हृदय पर रखे हैं।

सोना की चंपकली तिलरी, दुलरी आदि आभरण श्रीस्वामिनीजी के श्रीकण्ठ में विराजें हैं, सो श्रीस्वामिनीजी के श्याम कंचुकी रुप श्रीठाकुरजी को पूजन कियो तब चंपकली दीपमाला समान भई। मोती माला सुरसरी गंगा समान भई।

श्रीस्वामिनीजी कौ लहेंगा सो श्रीठाकुरजी कौ घेर है स्याम सारी श्रीठाकुरजी के श्री अङ्ग की भावना तें धरी है, केसरी सारी पीताम्बर के भावतें कभी धरें हैं। लाल साडी श्रीठाकुरजी को स्नेह है। हरी सारी रहस्य लीला को सूचन करिवे कों कभी धारण करें।

चरन में नुपुर, घुंघरु, पायल, अनवट, बिछिया, इत्यादि

ामिनीजी धरावें हैं। सो घुंघरू श्रीठाकुरजी के
ीहस्त के टीकडा के बाजूबन्द कौ भाव जाननो। पग
ान शीतकाल में श्रीठाकुरजी शीश फूल धरावें हैं, ताके
ाव रूप। अनवट श्रीहस्त अंगुष्ट के नख के भाव
प जानने। बिछिया टोपी के भाव रूप हैं।

श्रीस्वामिनीजी के चरण-तल अत्यन्त लाल है।
ी श्रीठाकुरजी के अधरबिंब के भाव रूप हैं।

या प्रकार नख तें शिख पर्यन्त युगल स्वरूप के
ङ्गार की भावना करिकैं शृङ्गार धरावनो।

३३--श्रीनवनीतप्रियजी आदि बाल स्वरूप कों वेनु आवे
त्र नहीं। वेनु वेत्र की तरह पास धरनी।

३४--दर्पन की भावना—दर्पन श्रीस्वामिनीजी के
ीअङ्ग कौ प्रतिबिंब है। सो दर्पण देखिकैं श्रीठाकुरजी
ीस्वामिनीजी के श्रीअङ्ग में अपनो श्रीअङ्ग देखिकैं
सन्न होत हैं।

३५--चरणस्पर्श की भावना—श्रीठाकुरजी के चरण-
विंद भक्ति कौ स्वरूप है। यातें चरण स्पर्श ते भक्ति
ृदय में आवें। प्रतिदिन भक्ति भाव बढें। और मनमें
ानन्द बढ़े। जैसे श्रीगिरिराज श्रीठाकुरजी के चरन
रस तें प्रमुदित होय हैं ऐसे वैष्णव कों होनों।

३६--गोपीवल्लभ की भावना—गोपी वल्लभ भोग धरते

समय शृङ्गार की फूल की माला बडी करनी । माला सब ब्रज भक्त को स्वरुप है। सो गोपीवल्लभ भोग श्रीस्वामिनीजी के मनोरथ की सामग्री है ताते सब ब्रज भक्तन के सन्मुख श्रीस्वामिनीजी के रस के अनुभव में श्रीठाकुरजी स्वयं लज्जित होंय हैं।

भोग धरते समय यह श्लोक बोलनो—·

'गोपिका भावतः'

श्लोक को अर्थ—जा प्रकार तें गोपिका के भावतें गोपीजनों के गृह में आरोगें है, वा प्रकार हें, गोपिजनों के पति ! कृपा करिके मेरो समर्प्यो भोग आरोगो। इत्यादि :—

३७- कटोरी भोग धरने की भावना—शृंगार भोग में भोग के पास दो कटोरी धरनी । एक कटोरी में मिष्ठान सामग्री धरनी और दूसरी में माखन और लड्डू मिश्री के। गुलाब श्रीखण्ड गिदोडा आदि । श्री श्रीस्वामिनी के अधरामृत रुप हैं । मेवा की कटोरी में बादाम, किसमिस, छुहारा, गिरी, मिश्री के टूक, पिस्ता आदि आवे । मिश्री श्रीस्वामिनीजी को अधरामृत, बदाम, दाख, किसमिस श्रीयमुनाजी की सुधा, छुहारा कुमारिका के भाव रुप गिरी सो श्रीचंद्रावलीजी के रहस्य भावरुप पिस्ता विशाखाजी के भावरुप जानने।

३८—शृङ्गार भोग धरवे की भावना—श्रीस्वामिनीजी

रस कौ अनुभव करिकै शृङ्गार भोग धरें हैं। शृङ्गार भोग पीछे श्रीवल्लभकुल में गोपीवल्लभ आवें। वैष्णव के यहाँ न आवें। शृङ्गार भोग में अनसखड़ी, पूरी, मेदा की, दो दो तरह की एक खरखरी एक नरमपूरी, थपडी बेसन की नरमपूरी श्रीस्वामिनीजी के मनोरथ की है। खरखरी कुमारिका के मनोरथ की थपडी श्रीयमुनाजी के मनोरथ की है।

एक दही की कटोरी, एक संधाना की कटोरी, एक खाँड की कटोरी । तथा ओट्यो दूध केशर बरास मिल्यो भयो सुगंधित । तथा खीर । ए श्रीस्वामिनीजी के मनोरथ रूप हैं। दही श्रीचंद्रावलीजी के मनोरथ रूप। बूरो श्रीयमुनाजी के मनोरथ रूप। संधानो कुमारिका के मनोरथ रूप जाननों। शीतकाल में अनसखडी में दो साग धरने। गोपीवल्लभ में सखडी बनि आवे तो धरनी। कदाचि नित्य न बने तो रविवार तथा द्वादशी कों अवश्य धरनी। भात को थार, एक दाल को डबरा, एक पापड एक अथवा दो सखडी के साग एक कटोरी में घी, तथा घी की सामग्री इतने अवश्य धरनो । घी है सो श्रीस्वामिनीजी कौ स्नेह है । भात है सो श्री चंद्रावलीजी के हास्य रूप है। दार श्रीयमुनाजी को प्रेम है। पापड श्रीकुमारिका के भाव रूप हैं । साग

सब व्रजभक्तन के भाव रूप है। सोना की कटोरी श्री स्वामिनीजी को भाव। चाँदी की श्रीचन्द्रावलीजी के भाव रूप हैं। काँसा सब सखीजनन के भावतें और रांग सब दूती जनन के भाव रूप। पत्रा पुष्टिमार्गीय भगवदीय वनस्पति हैं।

या प्रकार भावना कर भोग धरनो पाछें झारी भरनी। समयानुसार भोग सराय के आचमन मुख वस्त्र करने पाछें बीरी आरोगावनी। बीरी श्रीठाकुरजी की दक्षिण ओर ठाडे होयकें श्रीचंद्रावलीजी के भाव तें आरोगावनी। पाछें भोग धरिवे की चौकी कों धोयके मंदिर वस्त्र करनो। मंदिर वस्त्र करिवे की सेवा कुमारिकान की है सो उनकौ स्मरण करिके करनो।

३९—गोदोहन और गोपाल भोग की भावना गोपीवल्लभ आरोगिकें श्रीठाकुरजी द्वार पर खेलिवे पधारें हैं। तब श्रीयशोदाजी श्रीदामा कों श्रीठाकुरजी की निघाह रखिवे कों कहें हैं। फिर सब भक्तन कों दर्शन देंइहैं, काहू कों बीरी दें हैं, काहूकों माला काहू कों वाणी तें समाधान करत हैं। इतने व्रजभक्तन के भावते ग्वाल (अन्तरंग सखा) आवें हैं, सो श्रीठाकुरजी कों प्रार्थना करिकें गाय दोहिवे ले जाँय हैं। खिरक में। वहाँ श्रीठाकुरजी के पास घर-घर तें श्रीस्वामिनीएँ अपनी अपनी दोहनी

लेकें आय रही हैं। और प्रभुन तें प्रार्थना करत हैं, जो पहले हमकों गाय दोहिदो घर में हमारे काम बहुत हैं। सो श्रीस्वामिनीन की बिनती तें अनेक रूप धारण करिके नेत्र कटाक्ष तें संकेत में समाधान करते भये सब की गाय दुहि देंय हैं। पाछें श्रीगोपीजन बिनती करिके श्रीठाकुरजी कों कहत हैं, ग्वाल भोग लीजिए। या प्रकार भावना करिके डबरा में जो तातो दूध होय वामें बूरो मिलायके रूपा के कटोरा में सीरो करिके आरोगने लायक होय तब सिंघासन पास दूध ल्याय के सोना रूपा के पात्र में भरिकें दूध आरोगावनो। या प्रकार गोपीवल्लभ भोग की भावना करनी। गोपीवल्लभ भोग वैष्णव के यहाँ न आवे। पाछें आचमन मुख वस्त्र करनो। सो आचमन तें प्रभु को गाय-दोहिवे ते भयो श्रम दूरि होय है। मुखवस्त्र श्रीस्वामिनी के अंचल के भावतें है। ग्वाल भोग में बीडा आरोगें। सो श्री यशोदा जी के भावतें। पीछे श्रीयशोदाजी कुमारिकान कों कहें हैं। जो जब तक राजभोग को सामिग्री सिद्ध न होंय तब तक श्रीठाकुरजी कों माखन आरोगावो। सो दूध कों मथिके माखन आरोगावें हैं। सो श्रीस्वामिनीजी के अधरामृत रूप है। पाछें पलना झूलें सो :—

४०—पलना तथा पलना के भोग की भावना कहत हैं—

श्रीयशोदाजी पुत्र भाव तें पलना झुलावें हैं। और श्री यशोदाजी के यहाँ कुमारिकाएँ प्रीत भाव तें श्रीठाकुर जी कों हिंडोरा खाट पर झुलावें हैं। सो विहार के भावतें। और श्रीगुसाँईजी ने 'प्रेंखपर्यङ्क' कीर्तन गायो है सो तो-'माननी मान हरणं' के भाव रूप है।

पलना में तीन सुफेदी एक चादर बीछे हैं। सो नीचे की सुफेदी श्रीयमुनाजी के भाव तें, बीच की श्री चंद्रावलीजी के भावतें और उपर की श्रीकुमारिकान के भावतें। तापर चादर बिछे सो श्रीस्वामिनीजी के हृदय को भाव है, या प्रकार शैया में भी तीन सुफेदी एक चादर बिछे। पाछे पलना के भोग की सामग्री वस्त्र तें ढांपिके गादी आगे धरनी। सो वा सामग्री में एक कटोरा में बेसन की थपडी कोई २ बेर थपडी पर सेंधो लोंन हु लगे। एक में बेसन को सेव एक में माखन एक में बूरो, एक में मेवा इतनो अवश्य धरनो।

बेसन की थपड़ी श्रीस्वामिनीजी के कपोल स्वरूप है। सेव अधररूप, माखन अधरामृत स्वरूप, मेवा चारौं यूथाधिपति रूप।

जब ताँई राजभोग की सामग्री सिद्ध होय तब ताँई पलना झूलें।

४२—खिलौना को भाव—खिलौना में कोयल श्रीस्वामिनीजी को गान हैं। फिरकी श्रीचन्द्रावलीजी को नृत्य है। पपैया कुमारिका को भाव है। चटकना एक फिरकनी रूप एक चकई रूप दोनों भँवरा हैं। सो श्रीठाकुरजी को कटाक्ष रूप रस्सी तें पकडिकें खेंच अपने पास लेंइ हैं। बड़ी गेंद सोंना चांदी की श्रीचंद्रावलीजी के कुच मझली श्रीस्वामिनीजी के भावरूप। हथवंगी लाल सात्विकी भक्त सो दीनता तें नृत्य करिकें कहत हैं, जो हम तैयार हैं। झुनझुना दुहेरा भक्त के हाथ के आभूषण रूप हैं। इकहरा झुनझुना व्रजभक्तन के हाथ की चुटकी रूप आभरण होयके वजें हैं। खिलौना की दो तबकडी। एक में हाथी, घोडा, वाघ, सिंह, हिरन आदि खिलौना धरें। सो पुष्टि भक्तन के संग लीला करें तब अनाधिकारीन के विरोधकर्ता। अनुकूल भक्तन के लिये सब रसात्मक अङ्ग रूप हैं। दूसरी में सुक, मेना, कबूतर, कोयल, बतक, आदि श्रीस्वामिनीजी के निकुंज संबंधी पक्षी हैं। वे मधुर वचन बोले हैं। ये संकेत करिवे वारे पक्षी हैं। सो उद्दीपन भाव रूप हैं। एक और तबकडी में जल के जीव मीन, मगर, कछुआ, चकई, चकवा, बगुला, सारस, हंस आदि इनको देखिकें जल बिहार को रस उत्पन्न होय है।

या प्रकार की रीति तें खिलौना धरने। भाँत-

भाँत की जल-स्थल संबंधी लीला हैं। पाछें राजभोग सिद्ध भये, श्रीठाकुरजी कों सिंहासन पर पधरावने।

४२--राजभोग के समय में सिंहासन तथा सांगामाची की भावना-भोग मंदिर में सांगामाची ऊपर श्रीठाकुरजी को पधरावने। वामें रीति और विपरीत दो प्रकार को भाव विचारनो—

१--रीति-सिंहासन आगे श्रीठाकुरजी को भोग आरोगावे तब भक्त वहाँ आयकै श्रीठाकुरजी के भगवद् रस को अनुभव करें हैं यह रीति प्रकार को वर्णन है।

२--विपरीत-भोग मंदिर में श्रीठाकुरजी राजभोग आरोगें हैं तब भक्ताधीन लीला है, यासूं श्रीठाकुरजी आप भक्तन के रसन को अनुभव करें हैं। यह विपरीत प्रकार है।

राजभोग समय प्रथम धूप दीप करने।

राजभोग की सामग्री-शीतकाल में धरिवे की सखड़ी की सामग्री:-

उर्द, मूंग, मोंठ, चना, पापडी आदि प्रतिदिन फिरते करने। बाजरी, मेथी, गेंहूँ की रोटी, बाटी आदि फिरती करनी। बेझर की रोटी में हल्दी, जीरा, नोंन डारके करनी याही प्रकार चूरमा आदि और ऋतु अनुसार साग। भुजेनां, भात मूंग, कढी, खीचरी

आदि। अनसखड़ी में ठोर, पूरी, मगद, बूंदी लाडू लुचई आदि रबडी, दूध, दही, रायता, संधाना, माखन, सिखरन इत्यादि, साथ में जल की कटोरी, मूंग, भात और घी को एक कौर करनो सो भोग सरे तब गौ ग्रास में जाय।

उष्णकाल और वर्षा में भी ऋतु अनुसार सखडी की सामग्री आरोगे। दार में मूंग, चना और अरहर के सिवाय अन्य न आरोगें। उष्णकाल और वर्षा में तेल न आवे। उष्णकाल में घी को और जल को सतुवा आरोगें।

४३-धूप दीप की भावना करनी-धूप सुवास के लिये हैं। श्रीस्वामिनीजी के श्रीअङ्ग की सुगंधी की भावना तें होय। दीप दृष्टि दोष निवृत्यर्थ है।

४४—तुलसी समर्पण—सामिग्री मेंते अन्य संबंध निवृत्यर्थ तुलसी समर्पण करनो। दूसरो भाव श्रीस्वामिनीजी के श्रीअङ्ग की गंध रूप तुलसी है। 'प्रियांग गंध सुरभि तुलसी चरण प्रिया'। यासूं सामिग्री में श्रीस्वामिनीजी के भाव को संबंध होय है। तुलसी समर्पण की बिरियां 'पंचाक्षरमंत्र' बोलनो।

४५—शखोदक की भावना—शंख को जल आधिदैविक रूप है। वह जल श्रीठाकुरजी के सन्मुख अरोगिवे की सामग्री पर छिरकनो तासूं सब अमृतमय रस

रूप होय। शंख श्रीस्वामिनीजी के कंठ रूप है । वासूं शंख को जल श्रीस्वामिनी के अधरामृत रूप है। तातें श्रीठाकुरजी वह जल के स्पर्श की सामग्री प्रीति पूर्वक आरोगे। "श्रीराधा अधर सुधा बिना बीजूं तें कई नव भावे जी" यह भाव विचारनो ।

अथवा धूप श्रीस्वामिनी जी । दीप श्री चंद्रावली जी के हृदय को विरहताप न्यौछावर । तुलसी सोलह हजार कुमारिका हैं, सो श्रीठाकुरजी में उनको पतिभाव है। यासूं प्रबोधिनी के दिन तुलसी विवाह होय है। शंखोदक श्रीयमुना के भावरूप या प्रकार चारों यूथाधिपति को भाव जाननो ।

राजभोग धरिवे की भावना—राजभोग में श्रीनंदरायजी के घरकी, आठ उपनंद के घर की, और श्रुतिरूपा के मनोरथ की सामग्री हैं। सो श्रीनंदरायजी के घर में रही कुमारिका ये सेवा करें हैं। श्रीयशोदाजी के मनोरथ की सामग्री अलग करिके कुमारिका आरोगावें हैं । गुप्त रस के भावतें ब्रज भक्तन के यहाँ गुप्तरीति चोरी तें आरोगें हैं। निकुंज में श्रीस्वामिनीजी आरोगावें हैं। उष्णकाल में छाक बन में आरोगें। वहां व्रजभक्तन के मनोर्थ पूरे होंय हैं।

राजभोग धरिके बाहर आय रसोई के पात्र

मांजने। शृङ्गार करते समय भगवन्नाम और सर्वोत्तम आदि स्तोत्र को पाठ न भयो होय तो अब करनो। दो घड़ी पीछे भोग सरावने । लौकिक कार्यार्थ ढील न करनी।

आचमन कराय मुख वस्त्र करि बीडी आरोगावनी। चौकी उठायके धोवनी। मंदिर वस्त्र करनो। चरणारविंद की तुलसी बडी करनी । माला धरावनी । दिवाली तक शैय्यामंदिर में पंखी राखनी पीछे नहीं। विजय दशहरा तक सिंहासन उपर शैया-भोग, बीडा और माला आदि धरनो।

सिंहासन और तकिया की भावना पहले कहि आये हैं।

पाछे ठाडे स्वरूप कों वेणुवेत्र धरने । खंडपाट सिढी सिंहासन कों लगाय के धरनी।

४८--खड पाट की भावना—खंड के सीढी हैं, सो श्रीस्वामिनीजी को भाव है । प्रथम सीढी गोपभार्या श्रीचन्द्रावलीजी के भावतें, लाज को निवृत करिकै पीछे ठाडे हैं। यह भाव है। बीच की सीढी कुमारिका के भाव रूप हैं। श्रीठाकुरजी के पास की सीढी कुमारिका के भाव रूप हैं। तथा श्रीठाकुरजी के पास की सीढी श्रीयमुनाजी के भावरूप हैं। यह जाननो ।

तीनों खंड--सीढी पर रुई की गादी बिछावनी

वे रूई की गादी तीनों भक्तन के गुन रूप हैं । खण्ड पर खिलौना और चार तबकड़ीं धरनीं । दो जेमनी और दो बाँये ।

वाम भाग श्रीस्वामिनीजी और जेमनी और श्रीचंद्रावलीजी की स्थिति हैं । ऐसो भाव विचारनो ।

खंड के आगे पाट धरनो । वाके ऊपर वस्त्र आवें । खोली वह श्रीललिताजी के हृदय रूप हैं । आस पास दो गादी आवें । वे दोनों श्रीस्वामिनीजी और श्रीयमुनाजी के भावरूप हैं । जा गादी पर प्रिया प्रीतम विराजें हैं । सो भक्तन के हृदय के भावरूप हैं ।

४९—चौपड़ की भावना - पाट कें बीच में चौपड आवें । वामें हाथी दाँत की श्रीयमुना जी के भावरूप, काष्ट की अग्निकुमारिका के भावतें, शतरंज बाघ बकरी चारों यूथाधिपति के भावतें । चौपड में गोटी सोलह वामें एक-एक घर में चार-चार रहे, सो चारों घर अलग-अलग निकुंज के भावरूप हैं ।

एक-एक घर में चौवीस कोठा के बारह अङ्ग भक्त के बारह श्रीठाकुरजी के जानने । चौवीस मंदिर निकुंज रूपी सुन्दर घर हैं । या प्रकार ९६ कोठा हैं । वहाँ काम शास्त्रोक्त बारह मास की नित्य लीला हैं ।

कोई बार अधिक के कारण तेरह महिना भी

होय हैं सो बीच को बडो घर नंदालय रूप जाननो ।

चार भक्तन के निकुंज आदि भावतें चौरासी कोठा हैं । सो व्रज की बारह बरस ताईं की लीला को विचार करनो । ग्यारह बरस पीछे प्रभु मथुराजी पधारें, सो बारह बरष के भीतर के स्वरूप की भावना करें । सो बालभाव, कुमार, पोगण्ड, और किशोर ऐसे सब भाव आय जाँय ।

पासें ३ हैं । राजसी, तामसी, सात्विक भाव रूप । जब श्रीठाकुरजी पासा तें खेले तब रीति को रमण, भक्त जब पासा डारें, तब विपरीत रमण जब भक्त कोई वेर तामस होय जाय तब भगवान सात्विक भाव धारण करें हैं । राजस में दोनों राजस होंय हैं ।

जा ऋतु को भोग करिवे की भक्त इच्छा करें वही इच्छा श्री ठाकुरजी करें हैं । तीन-तीन गुन संयुक्त होयकें नव होंय । सो पांसे तीन हैं । एक पांसे में १४-१४ अङ्क हैं । सो चौदह सम्पूर्ण विद्या हैं ।

श्रीठाकुरजी की सोलह कला, और भक्त दश प्रकार के या भावतें चौपड़ खेलें हैं । प्रभु हारें तब भक्त विपरीत रमण करें हैं । भक्त हारें तब प्रभु रीति रमण करें हैं । या प्रकार चौपड को भाव गोपनीय है । उत्सव में अभ्यंग होय वा दिन चौपड अवश्य बिछे ।

५०-–बाघ बकरी की भावना—आठमें दिन शतरंज और बाघ-बकरी करिके धरने। चौपड श्रीस्वामिनीजी के भावरूप हैं, बाघ-बकरी सोलह हजार कुमारिका के भाव-रुप।

वाघ-बकरी को भाव या प्रकार-बकरी सोलह बाघ दो अथवा एक। जब श्रीठाकुरजी कों भक्त अपने वश करें हैं। तब श्रीठाकुरजी बकरी के समान भक्त की आज्ञानुसार चलें हैं। तब भक्त विपरीत रमण करें हैं। कोई बार श्रीठाकुर जी बाघ के समान रीति विपरीत ऐसे दोनों प्रकार तें रमण करें हैं। सोलह बकरी चार यूथाधिपति के राजस, तामस, सात्विक और निर्गुण भाव-रुप हैं।

दो बाघ—श्रीस्वामिनीजी और चन्द्रावलीजी। ठाकुरजी बकरी रुप हैं। दो बाघरुप स्वामिनी बकरी रुप ठाकुरजी कों घेरि लेय हैं। दोनों आडीतें।

एक बाघ को भाव है केवल स्वामिनी रुप। दंपति रुप में बकरी श्रीस्वामिनीजी और बाघ मानादिक में प्रभु को स्वरूप ऐसे विचारनो।

कोई बार चार बकरी होंय तो चार यूथाधिपति की भाव विचारनो! उनमें एक-एक सखी तरङ्गिणी हैं। यातें उनमें पाँच-पाँच बकरी इकट्ठी आवें हैं। घर चौंसठ सो चौंसठ कला। एक-एक स्वामिनी सोलह कला पूर्ण हैं। यातें उनमें पाँच-पाँच बकरी इकट्ठी आवें हैं। घर चौंसठ सो चौंसठ कला। एक-एक स्वामिनी सोलह-सोलह कला से पूरन। 'चौंसठ कला प्रवीन तदपि भोरी'-या भावतें बाघ बकरी की भाव विचारनो।

५१-शतरंज कौ भाव—श्रुतिरुपा श्रीचन्द्रावलीजी के भावतें राजसी भक्तन को मनोरथ यातें शतरंज है। वामें चार हाथी घोडा ४ ऊंट ४ वजीर दो बादशाह दो प्यादे १६ होय हैं या प्रकार सब मिलकें २२। सो सोलह भक्त के सोलह श्रीठाकुरजी के जानने। सो १६-१६ शृङ्गार रुप हैं।

शृङ्गार राजसी—भक्तन कों बहुत प्रिय है। यह खेल राजान को है। यातें गोठ ३२ हैं। वामें चार हाथी करिकै गजवत् लीला पंचाध्यायी में कहे हैं।

श्लोक—'गंधर्व पा...तें लेकर 'रे मे स्वयं स्वरतिस्त्र गजेन्द्र लीला।' या प्रकार की विहार है वामें चार हाथी हैं। सो वे चार प्रकार के भक्त श्रुतिरुपा हैं। सो श्रीठाकुरजी के निजधाम में हती, सो वरदान तें व्रजमें गोपीजन भई हैं।

सो सात्विकी राजस, तामस, निर्गुण या प्रकार

चार और चार यूथाधिपति स्वामिनी के भावरूप चार घोडे। सो पवन के वेग के सदृश श्रीठाकुरजी कों लेके गुरुजन गोप कोई होइ नहीं वहां निकुंज में लेइ जाँय हैं।

ऊँट—अपनी पकड में प्रसिद्ध है। पकड़ें ताकूं छोडे नहीं। या प्रकार श्रीठाकुरजी को पकड़ रखें हैं चार यूथपति ने। अथवा ऊँट बोझ उठायवे में प्रसिद्ध है। सो यहाँ श्रुतिरूपा, गोपस्त्री। सो गृहस्थाश्रम में प्रतिबंध होयवे में भी तन, मन, धन सब श्रीठाकुरजी कों समर्पण कियो है और उनकी चाल तेज होय हैं। सो श्रुतिरूपा वेणुनाद समय तेजगति ते श्रीठाकुरजी के पास गई हैं।

वजीर दो-बादशाह सो ठाकुरजी और स्वामिनीजी दोनों युगल स्वरूप दो बादशाह हैं। और श्रीचन्द्रावलीजी और अग्निकुमारिका दो वजीर हैं। क्यों जो ये दोनों दास भावरूप हैं।

प्यादे १६—आठ श्रीठाकुरजी के सखा और आठ श्रीस्वामिनीजी की सखी हैं। सो दोनों मिलिकै १६ भई।

शतरंज शर्त जो अनेकानेक श्रीस्वामिनी उनके मनकी रंजन करे हैं।

५२—खिलौना तबकडी की भावना—सिंहासन के पास दो तबकडी खिलौना की धरनी। वामभाग में हाथी-

दांत की और जेमनी ओर काष्टके लाल खिलौना। हाथी दांत के श्रीस्वामिनीजी के मनोरथ के हैं। काष्ट के श्रीचन्द्रावली जी के मनोरथ के। खिलौना भाव उद्दीपनार्थ हैं।

५३--पीकदानी--पाट के आगे बीचो-बीच एक खाली तष्टी धरनी। वह श्रीललिताजी के भावरूप है।

५४--गेंद की भावना--पाट के ऊपर दो गेंद आवें। सो कभी जडाव की कभी सोना की कभी रूपे की, कभी सूत की ऊपर रेशमी कलाबन्द होय कभी हाथी-दाँत की कभी काष्ट की। वह यूथाधिपतियों के भावरूप हैं। गेंद के पास चौगान धरनी। सो यूथाधिपतिन के भुजा रूप हैं।

५५--दर्पण की भावना--दर्पण श्रीठाकुरजी को दिखावनो। सो श्रीस्वामिनी जी के नखचन्द्र की भावना है। अथवा श्रीस्वामिनीजी के प्रतिबिंब रूप जाननो। वामें अपनो स्वरूप देखिके श्रीठाकुरजी बहुत प्रसन्न होंय हैं।

५६—आरती की भावना—सो सब व्रज भक्तन के हृदय के तापकों न्यौछावर करत हैं। फिर दर्पण देखें। सो श्रीस्वामिनीजी अपने हृदयरूप दर्पण में श्रीठाकुरजी कों लेकै निकुंज में पधारें हैं। अथवा निकुंज की सूचना करें हैं।

५७--माला बडी करनो ताकी भावना—फेर फूल की माला बडी करनी सो फूल की माला ब्रज की सब स्वामिनी हैं। सो उनको ठाकुरजी आज्ञा करत हैं जो सब अपनी-अपनी निकुंज में पधारो। आगेतें सामग्री सिद्ध करो। पीछे हम आवेंगे।

५८--पेंडे की भावना—शैया तें सिंहासन ताँई श्रीठाकुरजी के पधारवे के लिये गादी बिछावनी सो पांवडे बिछायवे को भाव है। अथवा श्रीठाकुरजी बन में पधारत हैं, सो भाव जाननो।

५९--ताला मंगल की भावना—मंदिरको ताला मंगल करने सो ताला है, सो श्रीस्वामिनीजी के हाथ की मुठी है। सो मुठी के भीतर श्रीठाकुरजी रूपी रत्न हैं। सो श्रीस्वामिनी रूप श्रीआचार्यजी के वंश ठाकुरजी हैं। सो उनके दृढ़ आश्रय तें भगवद्दर्शन होंय। सो ताला को भाव है। सो ताला मङ्गल करि दंडवत करि बाहर आवनो।

६०—वैष्णवन कों प्रसाद लिवायवे की भावना—वैष्णवन के हृदय में श्रीमहाप्रभु श्रीठाकुरजी सब बिराजें हैं। या भावतें वैष्णवन कों स्नेह पूर्वक प्रसाद लिवावनो। वैष्णव कों प्रसाद लिवावे तब वह महाप्रसाद होय। सो लेवे तें दास भाव बढें। प्रसाद लेवे के समय अचानक वैष्णव आवें तो अहोभाग्य मानें और जो कोई वैष्णव न आवे तो गौ ग्रास काढनो। गाय है सो ब्रजभक्त कौ रूप है। गौ ग्रास नित्य काढनो, और शक्ति अनुसार वैष्णवन को आग्रह पूर्वक हू लिवावनो। सामग्री सुधरी-बिगड़ी जानवे के लिये प्रसाद में स्वाद को अनुभव करनो। दैहिक सुख की भावना तें नहीं करनो।

६१—बीरी की भावना—कुल्ला करे। पीछे मुख शुद्ध्यर्थ भगवत्प्रसादी बीरी लेनी पाछे दो घडी आलस निवृत्ति अर्थ सोय जानो। व्यौपार धंधा नौकरी अर्थ जानो होय तो जावे। पाछें पुष्टिमार्ग के पुस्तकन को अवलोकन करनो।

६२—उत्थापन की भावना—एक प्रहर दिन रहे तब श्रीठाकुरजी कों उत्थापन करावनो। अबेरी करनी नहीं। चिंता पूर्वक यथा समय स्नानादि करि चरणामृत तिलक ले मंदिर में जाय उत्थापन की सामग्री, मेवा आदि ऋतु अनुसार सिद्ध करने। गरमी में काँकडी खरबूजा पना आदि धरनो। ऊख को रस कार्तिक सुदी ११ तें फागुन बदी पडवा तक धरनो पाछें श्री ठाकुरजी कों जगावनों पेंडो उठावनो। पाछें दरशन करावनो। शैया और सिंहासन के पास धरी झारी,

माला, बींडा सब उठायके प्रसादी पात्र में ठलावने। उत्थापन की झारी शीघ्र धरनी देर नहीं करनी। पाछें कंद मूल फल फूल श्रीपुलिंदिनीजी की भावना तें धरिकैं टेरा दे बाहर आवनो।

६३—भोग समय की भावना—शीतकाल होय तो किवाड खोलि चौपड के आगे अङ्गीठी धरनी। उष्णकाल होय तो छिरकाव करनो।

६४—संध्या भोग की भावना—वैष्णव के यहाँ नहीं। संध्या में मठडी संधाना, आदि धरनो। पाछें समय भये आचमन मुख वस्त्र करने। यह बनतें ब्रज में आवत समय को मार्ग को भावरूप भोग है। सब ब्रजभक्तन के भावरूप। पाछें नंदालय में श्रीयशोदाजी आरती करें हैं।

६५—श्रृङ्गार बडो करिवे की भावना—माला, चंद्रिका, बाजूबंद आदि बडे करने। करनफूल, बेसर, चिबुक, तिलक, श्रीकंठकी कंठसरी, कटिकिंकिनी, पहुँची, नूपुर इतनो श्रृंगार स्वामिनीजी के भावरूप हैं। झारी भरें, डबरा भोग धरें। वैष्णवन के यहाँ नही।

६६—शयन भोग की भावना—पाछें शयन भोग आवे। तामें सखडी अवश्य धरनी। यदि न बनें तो दशम, द्वादश, अमावस को दिन तौ अवश्य धरे। आधो समय

होय पाछे ओट्यो दूध भोग धरे सो केसर, बरास, सुगंधी ते मिश्रित होय तामें सोना, अथवा रूपा की अथवा कांसा की कटोरी फिरती रखें। दूध श्रीस्वामिनी जी के अधरामृत रूप है।

❀ शयन आर्ति की भावना ❀

ता पाछै शयन भोग आवें सो शयन में सखड़ी अवश्य चाहिये। न बने तो द्वादशी के दिन अवश्य करिकै दारि मूंग की भात, मिरच को शाक, राजभोग ताँई सामग्री है, सो कटोरी होय तामें तें थोरो धरि राखिये भोग धरिये संधाने की कटोरी धरिये। लोन की कटोरी धरिये। जल की एक कटोरी भरिकें धरिये। एक कटोरी दूध की धरिये। एक कटोरी न्यारी दूध भात की धरिये। ता पाछें दंडवत करिकें बाहिर आइये। सो जब आधोसमय होय चुकै तब दूसरो भोग माढै ओट्यौ दूध तामें चमचा सोने तथा रूपे तथा पीतर वा काँसी को डारिये सो एक कटोरा में दूध भात एक कटोरा में दूध। केवल सखडी न बने तो दूध शयन में अवश्य धरिये। सो काहेतें दूध शयन में होय तौ सगरे दिन की सामग्री दूध की नांई प्रभुन को सुखदायक होय तासों दूध-शयन में श्रीस्वामिनीजी को अधरामृत है सो अत्यन्त

मीठौ और गाढौ हैं, सो यह भावना करिके भोग धरिये। पाछैं दंडवत प्रार्थना करि बाहिर आइये। सो जब आधौ समय होय चुक्यो होय तब झारी ले आचमन मुखवस्त्र करि बीड़ी आरोगाइये। बीड़ा दाहिनी ओर धरिये और शयन के दर्शन सेवा संबंध वारे करें। तथा और कोंहू कराइये ता पाछे बागा बड़ो करि पाग टोपी सदाँ रहैं, फेरि ऊपर पोढाइये। सो शयन आरती वैष्णव के आवश्यकीय नाहीं हैं, सो शैज्याजी के पास दोय झारी धरिये। जो दोय न बने तौ एक तो अवश्य धरिये। एक कटोरी माखन की एक मिश्री की धरिये। सो आछी भाँति सों ढाँकिकें। ता पाछैं रीति अनुसार प्रभुन को पौढाय उठाइये। ता पाछैं सिंहासन वस्त्र उलटिके ढाँकि धरिये। श्री स्वामिनीजी होंय तो श्रीठाकुरजी के वामभाग पोढाइये। प्रसिद्धि न होय तो भावना करिये। तामें दोय प्रकार को भाव है। जो श्रीठाकुरजी श्रीयशोदाजी के घर पौढत हैं, सो तहाँ रात्रि में श्रीठाकुरजी की बैठक न्यारी है सो कुमारिका श्रीराधाजी की सेवा में तत्पर हैं। और कबहूँ सखीजन श्रीठाकुरजी ललिता विशाखा के संग बनमें पधारत हैं, और उततें (बरसाने ते) सखीन संग श्रीस्वामिनीजी आवत हैं। सो श्रीठाकुरजी के

दोऊ स्वरूप—परस्पर मिलिके निकुंज मन्दिर में लीला करत हैं, सो तहाँ श्रीठाकुरजी कौ स्वरूप कोटि कोटि कन्दर्पसों अधिक शोभा देत हैं। सो तिनमें श्रीस्वामिनी अपनो स्वरूप देखिकें मनमें यह जानत हैं, जो श्रीठाकुरजी के मनमें दूसरी नायका विराजमान है। सो यह जानिकै मनमें क्रोध करिकै मान करत हैं, और कबहू श्रीचन्द्रावली जी को देखिकें हृदय में मान करत हैं, कबहू श्रीयमुनाजी को देखिकें श्रीस्वामिनी जी अपने हृदय में मान करत हैं। कबहू कुमारिका कों देखिकें मान करत हैं। और कबहू श्रीचन्द्रावलीजी ब्रज की स्वामिनीजी कों देखिकें मान करत हैं, सो तब प्रभू अपने मनमें सबकों जानिकें श्रीस्वामिनीजी को मान मनावत हैं। और कबहू श्रीचन्द्रावलीजी कों मान मनावत हैं और कबहू श्रीचन्द्रावली और श्रीयमुनाजी और कुमारिका और ब्रज की स्वामिनी श्रीस्वामिनीजी सों दीनता करत हैं। जो अपनो दासत्व हमको देहु। क्यों जो हम तिहारे समान नाहीं हैं। तासों तिहारी दासी हैं तासों तिहारे आगें हम श्रीठाकुरजी सों कैसे मिलें। परन्तु आश्रय तिहारो है। सो या प्रकार दीनता के वचन सुनिकें श्रीस्वामिनीजी जो अति चतुर चौंसठि कलायुक्त हैं। तदापि भोरी ऐसी हैं

तासों सगरे व्रज की स्वामिनीन की दैन्यता देखिकें श्रीस्वामिनीजी प्रसन्न होयकें बोलत भईं जो तिहारो नाम व्रजरत्ना है। सो काहे तें जो व्रज में रत्न तुम ही हो याहीतें श्रीठाकुरजी में अपनो पतिभाव कियो या समान और उत्तम भाव नाहीं है। तातें तुम उत्तम तें उत्तम हो तासों हमसों तुममें उत्तम भाव बहुत अधिक है, एक तो सदा पवित्र रहत हो कोई गोपको सम्बन्ध तुमतें नाहीं है, और दूसरे निरुपाधि हो। हमारे विहार के अर्थ सहायक हो और तीसरे उपाध्यायी रस तिहारे नाहीं है। प्रभुन के हृदय में बहुत पियारी हो तिहारों जुगल—स्वरूप में एक रस निरन्तर प्रेम है। चौथे केवल दास होय सो जुगल स्वरूप में दास भाव करै सो तातें हम तिहारे ऊपर बहुत प्रसन्न हैं और पाँचवें तनमन सकाम है सो तन-मन-धन सब एक प्रभुन के अर्थ है सो तुम सबरी एक मनी हो और आपस में क्लेश लौकिक बुद्धि है, ताहीं सों सबरी मिलिकें रहत हो क्यों जो अकेली एक खोटी खरी करत नाहीं। इत्यादिक तुममें अपार गुण हैं सो हम तुमसौं एक स्वामिनी भावसों प्रसिद्ध होय रही हो। तासों तुम ब्रजरत्ना सुखेन रहो और श्रीठाकुरजी सों विहार करो हमारी कोई सों ईर्षा नाहीं है। या प्रकार श्रीस्वामिनी

जी के वचन सब सुनिकें निष्कपट सबरी ब्रज की श्रीस्वामिनी जी प्रसन्न भईं, तथा श्रीठाकुरजी के स्वरूप को सुन्दर श्यामघन रूप है। सो तहाँ श्रीठाकुरजी श्रीस्वामिनी के भावतें गौर स्वरूप हैं। सो जैसो तप्तवरण सो तैसो झलमलात हैं तो तहाँ अङ्ग में अधिक दैविक हीरा मणीन के आभूषण धरे हैं। मोतीन की माला पहरत हैं, सो जैसे आभूषण हैं, तैसे ही निकुंज भवन मंदिर हू प्रगट भये हैं सो या भाँतिसों कहूँ—सोनेके कहूँ रूपे के कहूँ हीरा के कहूँ मोती माणिक पन्ना मूंगा इत्यादिक के अपार कुंज प्रगट भये तासों श्रीस्वामिनीजी के सुख के अर्थ सगरे स्थल प्रगट किये हैं। सो निकुंज चेतनीय चलायमान है, सो जहाँ जहाँ युगल स्वरूप पधारें, तहाँ इच्छानुसार यह निकुंजहू संग चलें और श्रीस्वामिनीजी चोकी पहिरें हैं सोई निकुंज मन्दिर की एक फिरकी जाली प्रगट होत भई सो श्रीठाकुरजी श्रीस्वामिनीजी मोतीन की माला तथा मणि-कान्ति की माला पहिरें हैं। सोई निकुंज मन्दिर के द्वार ऊपर ठौर ठौर बंदनवार शोभित हैं, सो अनेक स्वामिनीजी के अंचल की किनारी झालरी युक्त बयार तें झलमलात, फहरात हैं। सोई सब निकुंज में ध्वजा पताका ठौर ठौर शोभायमान हैं सो श्रीस्वामिनी

जी की नासिकातें ब्यार करत हैं सो ताहीतें निकुंज मन्दिर में शीतल व्यार मंद सुगंध चलत हैं, सो फूलन के आभूषण जुगल स्वरूप पहिरे हैं। तिनते नाना प्रकार के फूलन के निकुंज प्रगट भये हैं। ताहीसों शुक आदि पक्षी नासिकातें प्रगट भये हैं।

* निकुंज की भावना *

सो हंसादिक पक्षी श्रीस्वामिनी के चरणन तें प्रगट भये हैं । और सिंह आदि श्रीस्वामिनीजी के अङ्गतें प्रगट भये हैं और भ्रमर मानों खंजन मृग आदि श्रीस्वामिनीजी के नेत्रनतें प्रगट भये हैं। सो सब श्रीस्वामिनीजी को प्रगट जानि स्वरूप सों कहे विना सगरी श्रीस्वामिनीजी निकुंज में जात भईं । सो निकुंज मन्दिर के भाँति-भाँति के दर्शन पाये परन्तु निकुंज को द्वार काहू को मिल्यो नाँहिं। सो सगरी श्रीस्वामिनीजी के द्वार कूँ ढूंढिकें निरास होयके फिर आईं सो जुगल स्वरूप रत्नजटित कुंज में विराजे जहाँ हैं। तहाँ आयकें श्रीस्वामिनीजी के चरणकमल कों नमस्कार करिकें, ता पाछै श्रीठाकुरजी के चरणकमल को नमस्कार करत भईं ता पाछै वीनती करत भईं, जो हम तिहारी हैं। तिहारी आज्ञा विना निकुंज की रचना

देखन को गईं, बहुत प्रकार ढूँढ्यौ परन्तु निकुंज द्वार पायो नहीं। सो ताहीतें सब तिहारी शरण आईं हैं। तब श्रीस्वामिनीजी श्रीठाकुरजी सों प्रसन्न होयकें कहें, जो तिहारी प्यारी हैं, ताते मोकों हू अत्यन्त प्रिय हैं। ताहीते इनको न्यारी न्यारी निकुंज दियो चाहिये। तब तुमसों विहार होय। तब श्रीठाकुरजी कहें जो सगरी मेरी प्यारी हैं, और तिहारे अङ्गते प्रगट भई हैं, सो ताहीतें तिहारे सम्बन्धतें बहुत ही हमको प्रिय हैं। सो यह बात तुमको बहुत ही उचित है जो अपनो होय ताको ठिकानो दीयो चाहिये । तब श्रीठाकुरजी और श्रीस्वामिनीजी उठिकें ठाडे भये सो परस्पर गलबाँही दिये हैं, सो प्रेम सो मत्त होयकें दोऊन के नेत्र कमल घूमि रहे हैं, सो मंद मंद गजराज की चाल करिकै निकुंज के द्वार आवत भये । सो तहाँ पुलिंदी आदि उनके दर्शन पाय नयन सफल किये सो वनमें श्रीगिरिराज के आसपास सों पुलिंदी को श्रीठाकुरजी के सङ्ग अङ्ग की शोभा देखिकें साक्षात् मन्मथ के मन्मथ हैं सो अलौकिक कामदेव उत्पन्न होत भयो । तब युगल स्वरूप के चरण कमल को कुमकुम ठौर ठौर देखिकें सो रस कुमकुम की पुलिंदी अपने मुखमें लगात भईं ता करिकें सगरे जनकी ताप दूरि भई, सो श्रीठाकुरजी

के मिलन को सुख होत भयो या मार्ग में भगवदीय
को संग निश्चय कर्त्तव्य है। जो श्रीगिरिराज जी पुष्टि-
मार्ग में मुख्य भक्त हैं। तिनको कियौ सब पदार्थ
अङ्गीकार करत हैं। शिलान पर वैठत हैं कन्दरा में
पौढ़त हैं, सो सिद्धाधर रूप जहाँ जैसो कार्य होय तहाँ
तैसो रूप धारन करि सेवा करत हैं। सो तहाँ युगल
स्वरूप ठाड़े होंय सो सकल श्रीस्वामिनीजी को स्वरूपा-
नन्द को अनुभव कराय जुगल स्वरूप सगरी श्रीस्वामिनी
जी के अङ्ग में जो कुसुम की सुगंध हती सो तिनको
ताही निकुंज में रहन की आज्ञा दिये। सो जिनके
अङ्ग में रूपे की सुगंध हती सो तिनको ताही निकुंज
में रहन की आज्ञा दिये। सो जिनके अङ्ग में चम्पा की
सुगन्ध हती तिनके चम्पा के फूलन की निकुंज चम्पा
को वन तहाँ सगरे चम्पा के फूलन की शोभा है। सो
तिन स्वामिनीन को चम्पकलता नाम हू है, सो या प्रकार
सगरे कुंजन के नाम श्रीस्वामिनीजी कहें हैं। सो तैसे
ही कुसमन की सुगन्ध श्रीस्वामिनीजी के अङ्ग में है।
वैसे ही कुसुमन के निकुंज में वास दियो है, सो ताही
भाव की श्रीस्वामिनीजी हैं। और ताही भाव के श्री
ठाकुरजी पधराये हैं। या प्रकार कुसुम सम्बन्धी श्री
स्वामिनीजी कोटानिकोटि हैं। सो तिन सबन की

निकुंज बताये हैं। और आगे धातु के निकुंज हैं
लोहा-पीतर-काँसी-भरत-रांग-सीसा-जस्ता इत्यादिक के
सो तामस निकुंज हैं। फूल की सात्विकी
निकुंज हैं। तथा धातु के तामसी निकुंज
तामें श्रीस्वामिनीजी कोटानिकोटि हैं सो जिनको जैसो
भाव है। उनकूं वैसोई निकुंज दियो है। सो तहाँ
तहाँ श्रीस्वामिनीजी के भाव के श्रीठाकुरजी पधराये
तिनके मनोरथ पूर्ण किये हैं। सो या प्रकार धातु के
सम्बन्धी श्रीस्वामिनीजी मनोरथ पूर्ण किये हैं, ता पाछें
राजसी निकुंज मणि मुक्तान की अपार है। सो तहाँ
राजसी भक्त कोटानिकोटि हैं। सो तिनको तहाँ तैसो
भाव राजसी निकुंज में सुखिया किये हैं। सो तहाँ
तैसो वन, तहाँ तैसे ही भावके श्रीठाकुरजी पधराये हैं।
या प्रकार सगरे भक्त राजसी, तामसी, सात्विकी को
राखिके पाछैं श्रीचन्द्रावलीजी, श्रीयमुनाजी, श्रीकुमारि-
काजी ये तीनों यूथपतिन को संग लेकें, श्रीठाकुरजी
भीतर पधारत भये। तहाँ प्रथम श्रीयमुनाजी को
निकुंज दिये, सो काहेतें जो चारों यूथपति के निकुंज
में श्रीयमुनाजी की कृपा होयगी, तब तहाँ श्रीस्वामिनी
जी के भावतें श्रीठाकुरजी पधराये हैं। सो ऊपर राजसी
तामसी सात्विकी के निकुंज हैं। अब ये चारों यूथ-

पति के निकुंज निर्गुण हैं । सो तासों इन चारोंन के निकुंज में इतनो अधिक भाव है, सो जब इच्छा कुसनन की होय सो तब माणिक हीरा मणि मोती आदि काचादिक की भाँति भाँति की रचना होय, और श्रीस्वामिनीजी की निकुंज में नहीं होय । सो या प्रकार श्रीयमुनाजी की निकुंज के आगे श्रीकुमारिकान की निकुंज किये हैं। तहाँ कुमारिकान के भावतें श्रीठाकुरजी पधराये हैं और तिनके आगें चलिके श्रीस्वामिनीजी प्रसन्न होंय सो अपने ऊपर श्रीचन्द्रावलीजी की निकुंज दियौ सो तहाँ श्रीचन्द्रावली के भावतें श्री ठाकुरजी पधराये हैं। और श्रुतिरूपा कामिनी कोटानिकोटि हैं । सो तिनको निकुंज में राजसी, तामसी, सात्विकी निकुंज थे सब आय गईं सो अकेली श्री चन्द्रावलीजी की निकुंज भीतर है। सो तैसे ही सोरह हजार अग्निकुमारिका हैं। सो तिनकी निकुंज राजसी तामसी, सात्विक हैं ।

सो तहाँ अकेली रहत भई विहार करत हैं । श्रीचन्द्रावलीजी के भाव की श्रीचन्द्रावलीजी की आज्ञानुसार कोटानिकोटि सखी हैं, सो सगरी श्रीस्वामिनीजी की सब सेवा करत हैं । ऐसे ही कुमारिका के भावानुसार अनेक दासी हैं। अनेक सखी हैं सों अपनी

श्रीस्वामिनीजी जानि कुमारिकान की सेवा करत हैं । सो या प्रकार तीनों यूथपति श्रीस्वामिनीजी को निकुंज दिये हैं। पाछें मुख्य श्रीस्वामिनीजी को निकुंज दिये हैं। पाछें मुख्य श्रीस्वामिनीजी और श्रीगोवर्द्धनधरजी आगे पधारे, तहाँ अनिर्वचनीय निकुंज है। तहाँ ये श्रीपुरुषोत्तम भाव नाहीं है। वहाँ तो सब मात्र पशुपक्षी सगरे स्त्री रूप हैं। तहाँ निकुंज मन तथा वाणी के अगोचर है, सो कह्यो नहीं जात है, तहाँ अनेक अङ्गके अपने भावानुसार ते सखी प्रगट किये हैं, सो तिनके नाम ललिता, विशाखा आदि हैं। सो जगत में प्रसिद्ध ललिता विशाखा हैं, सो गोपन की बेटी हैं, तिनको निकुंज राजसी, तामसी सात्विकी आदि में हैं। तहाँ अनेक निकुंज हैं, तिनको सगरो जगत भजन करत हैं। अब भीतर के सबके जो श्रीस्वामिनीजी और श्रीगोवर्द्धनधर कहें हैं । स्वरूप मन-वाणी के अगोचर हैं ।

तहाँ श्रीस्वामिनीजी अपने अङ्गतें कोटानिकोटि सखी प्रगट कीनी हैं । तिनके नाम ललिता विशाखा आदि हैं, विहार में अत्यंत चतुर ललिता है । तासों नाम ललिता हैं, सो द्वै २ सखी जाकी रीत विपरीत में सबन में परम चतुर हैं । और विशाखा यह नाम कहत हैं, यहाँ भीतर को स्वरूप जब सारस्वत कल्प

आवे तब पूर्ण श्री गोवर्द्धन श्रीनन्दरायजी के घर प्रगट होय तब पूर्ण श्रीचन्द्रावलीजी पूर्ण श्रीयमुनाजी पूर्ण कुमारिका पूर्ण ललिता विशाखा आदि सखी सगरी बाहर के निकुंज को अग्निकुमारिका जो नित्य सगरे जगत में गावत हैं सो प्रसिद्धि मात्र हैं। सो प्रगट होय पूर्ण के अंश कलारूप लीला करत हैं।

जो सारस्वत कल्प में श्रीपूर्ण पुरुषोत्तम की आज्ञा प्रकाश को लीला अन्श कला में अवतार लीला है सो तहाँ ब्रह्मादिक शिवादिक इन्द्रादिक पुष्प वर्षावत हैं, और लीला को दर्शन करत हैं। श्रीपूर्ण पुरुषोत्तम लीला को दर्शन करत हैं। श्रीपूर्ण पुरुषोत्तम लीला में ब्रह्मादिक को ज्ञान होय नाहीं, सो उनही के मन वाणी के अगोचर सो तहाँ पूर्ण पुरुषोत्तम के अङ्ग रस रूप आदि दैविक हैं। सो ब्रह्मादिक शिवादिक प्रगट होय हैं। सो प्रभुन की स्तुति करिकें अलौकिक फूलन की वर्षा करत हैं सो तिनको लीलामन वाणी सों आवे नाहीं ताते अंशकला के अवतार की लीला सो तिनही को पूर्ण जानिकें भाव सहित भजन स्मरण करें सो श्रीपूर्ण पुरुषोत्तम की लीला की प्राप्ति होय।

जैसे श्रीयमुनाजी विराजें हैं, तिनकों पूर्ण जानि स्मरण करनों—सेवा करनो इनही की कृपा तें इनही

पूर्ण पुरुषोत्तम की लीला के योग्य होय, ऐसे ही श्री वृषभान कुँवरि ने श्री नंदनन्दन को भजन स्मरण किये सो सारस्वत कल्प के पूर्ण जानिके करे ॥ तो पूर्ण पुरुषोत्तम की लीला में प्राप्त हुई। सो या प्रकार श्री आचार्यजी महाप्रभुजी के निकुंज, श्री गुसाँईजी के निकुंज, सगरे निकुंजन के भीतर है। सो श्री आचार्य जी कहे हैं। (वृक्षे वृक्षे वेणुधारी पत्रे पत्रे चतुर्भुज) अपार निकुंज जो तहाँ अपार श्री ठाकुरजी हैं। तहाँ सगरे निकुंज में प्रभु न्यारे न्यारे भक्तन के संग दानलीला, विहारलीला, रासलीला, बाललीला आदि सबही करत हैं। या प्रकार सों सगरी निकुंज को भाव जाननो ॥

॥ इति निकुंज भावना सम्पूर्ण ॥

❀ श्री गिरिराज के आठद्वार तिनको भाव ❀

श्री गिरराज में आठ द्वार हैं। तहाँ अष्टसखा अष्ट सखी होय एक ही रूप लीला के साधक हैं, सो अष्ट प्रहर रहत हैं। सो अष्टछाप पुष्टिमार्ग में भगवदीय हैं, सो मुख्य हैं। सो सगरी लीला सारस्वत कल्प के श्री पूर्ण पुरुषोत्तम के अनुभव को गान किये हैं। सो चारों यूथपति मुख्य श्री स्वामिनीजी, श्रीयमुनाजी, श्रीचन्द्रा-

वली जी, श्री राधा सहचरी जी सो इनको भाव लीला बुद्धि अनुसार वर्णन करत हैं ॥

॥ इति श्री गिर्राज के आठ द्वारन को भाव सम्पूर्ण ॥

❀ श्री श्रुतिरूपा कुमारिका को भाव ❀

अब श्रुतिरूपा कुमारिका के साधन करिकें सिद्ध भईं, सो अष्ट प्रहर साधन में तत्पर रहत हैं। सो काहे तें जो तीतर रूप ऋषि होयंगे, और वेद में श्रुति दोय प्रकार की हैं, एक पुष्टि दूसरी मर्य्यादा । तिन दोऊ श्रुतिन में आपस में वाद भयौ, सो पुष्टि श्रुति कहै, जो अक्षर ब्रह्म के भीतर कछु भारी पदार्थ है। तब मर्यादा श्रुति ने कही जो सबतें परै अक्षर ब्रह्म है। ताके आगें नेति नेति हमारो ज्ञान नाहीं हैं। तातें और कछु न होयगो। या प्रकार दोऊ श्रुति आपस में वाद करिकै तीतर को स्वरूप धरिकें, उत्कंठित भईं, सो अनेक काल लों उड़ीं परन्तु कछु देख्यो नाहीं। तब मर्यादा श्रुति को अधिकार नांहीं श्री पुरुषोत्तम की लीला में तातें हार मानिकें पाछी फिर आईं। और पुष्टिश्रुति नांहीं फिरी, तब आकाशवाणी द्वारा श्री पूर्ण पुरुषोत्तम बोलत भये। तुम इतनो श्रम करि क्यों उड़त हो। तब पुष्टिश्रुति नें कही जो महाराज अक्षर ब्रह्म के भीतर जो पदार्थ है, तिनके दर्शन की चाहन

करत हैं। तब दयाकर श्रीपूर्ण पुरुषोत्तम ने दर्शन दियो। और कहै जो हम व्यापी वैकुण्ठ हैं, तहाँ विराजें हैं। वहाँ तोकों हमारी लीला को दर्शन होयगो।

तब पुष्टिश्रुति हती ब्रज नदी श्री यमुनाजी हैं। तिनके किनारे बैठत भईं, इतने में ब्रजभक्त घर घर तें शृङ्गार करिकें कोई सोने को गागरि, कोऊ जड़ाऊ की भरन के मिस ब्रज नदी पै आईं, सो बड़ी भीर ता समय श्री ठाकुरजी आये। काहू की गागरि फोरी, काहू की ढोरी। काहू की नदी में डारि दीनी। काहू को आलिङ्गन दीयो। या प्रकार अनेक लीला कीनी। ता पाछै ब्रजभक्तन को अन्तर्ध्यान करिकै अकेले श्री ठाकुरजी पुष्टि श्रुति के निकट आवत भये, और कहत भये, जो तुमने मेरे भक्तन की लीला देखी या समान और कछु नाहीं है। तासों हों तिहारे ऊपर बहूत प्रसन्न भयो हूँ। तासों तुम कछु वर माँगो। यह बचन सुनिके पुष्टिश्रुति रोम रोम प्रफुल्लित भईं, तब बोली हे महाराज ! तिहारे भक्तन के संग लीला देखिकें हमको सामग्री भाव होत भयो, सो तासों हे प्रभु ! तुम हमपै प्रसन्न भये हो तो हमको यह बरदान दीजे जो जैसे ब्रजभक्तन के संग लीला विस्तारि उनको सुख दीनों तैसें हमहूँ को मिलिकें रमण करो। यह सुनिके श्री

ठाकुरजी ने कही जो तुमको अबही लीला की योग्यता नाहीं है। काहे तें तुम ब्रज भक्तन के बराबरि सुख माँग्यो तासौं उनकी बराबरि तो मैं हूँ नाहीं, सो तुमको यह अन्तराय भयौ, सो ब्रजभक्तन के चरण की दासी होय मांगते तो अबही लीला की प्राप्ति होती तासों हौं तिहारे ऊपर बहुत प्रसन्न भयो हूँ। अब मैं कहुँ सो तुम उपाय करो। मैं सारस्वत कल्प में अपने भक्तन सहित ब्रज में प्रकट होउँगो। सो तहाँ तुमहू गोपन की भार्य्या होओगी तहाँ शरदऋतु में रास श्री वृन्दावन में करेंगे। तब तुमहू को मुरली द्वारा बुलावेंगे। सो तुम अब तपस्या करो। या प्रकार कहिकें श्रीठाकुरजी अन्तर्ध्यान भये। तब पुष्टि श्रुति हृदय में बड़ी ताप कियो जी हम महा अभागी हैं। जो ब्रज भक्तन की बराबरि सुख माँगे, अब ब्रजभक्तन के चरणकमल को ध्यान करि तपस्या करन लगीं। जब सारस्वत कल्प आयो तब पुष्टिश्रुति गोप भार्या भई, तिनको रास में श्री ठाकुरजी नें अङ्गीकार कियो, और मर्यादाश्रुति भई तिनसों श्री बलदेवजी रास रमण किये। या प्रकार श्रुतिरूपा साधन करिकें सिद्ध भईं।

॥ इति श्रुतिरूपा कुमारिकान को भाव ॥

❀ अथ अग्नि कुमारिकान को भाव ❀

अग्नि कुमारिका को यह भाव है, जब ब्रह्मा बेटी के पीछै दोर्‌यो तब वीर्य गिर्‌यौ, तासों अग्निकुमारिका की यह रीति है। जो सोलह हजार ऋषि प्रगट होत भये। सो श्री ठाकुरजी के मिलिवे के लिये तपस्या बहुत काल पर्यन्त कीनी। सो श्री रामचन्द्रजी वन में पिता की आज्ञा तें पधारे, तब सोलह हजार ऋषिन को दर्शन दिये, और आज्ञा दिये जो तुमने तपस्या बहुत भारी कीनी है। तासों तुम वांछित वर माँगि लेहु। तब ऋषि बोले जो महाराज! हमको तिहारे श्रीअङ्ग की शोभा देखिकें रमण करिवे की इच्छा भई है। सो हमसों रमण करो यह माँगत हैं। कामिनी भाव प्रगट होंय, तासों, हम स्त्री होंय और तुम हमारे पति होउ और हमसों रमण करौ। यह सुनिकें श्री रामचन्द्र जी बोले, जो यह हमारो अवतार मर्यादा को है, तासों एक पत्नीव्रत धारण कियो है। जब सारस्वत कल्प होयगो तब तुम गौड़ देश में कन्या रूप सों प्रगट होउगी, तब तुम श्री नंदरायजी के घर जाय अपनो मनोरथ पूर्ण करोगी। या प्रकार श्री रामचन्द्र जी के बचन सुनि ऋषि फेरि तपस्या करन लागे।

सारस्वत कल्प में गौड़ देश में कन्या प्रगट होय तब प्रभुन के अर्थ कात्यायनी देवी के मिस श्री यमुना जी को पूजन कियो सो प्रभु विचारि लीला करि वरदान दिये, जो हम तुमको रास में अङ्गीकार करेंगे। या प्रकार अग्नि कुमारकान को अङ्गीकार भयो सो यह पुष्टिमार्गीय अन्तरङ्गी भक्तन के अर्थ नित्य सेवा को प्रकार वर्णन कियो।

॥इति श्रीगोकुलनाथजी कृत अग्निकुमारिकान को भाव सम्पूर्णम्॥

❀ आभरण की भावना ❀

कुलह उत्सव पाग श्रीस्वामिनीजी को मनोरथ मुकुट रसदान करणार्थ, टोपी श्रीयशोदाजी को मनोरथ चीरा श्री यमुनाजी को मनोरथ, तनियाँ परदनी धोती सूथन छिपो सोरख पिछोडा सो श्री स्वामिनीजी को उत्तरो काछिनी को लहंगा उपरतें कसूमल लहंगा ताके ऊपर सूथन श्री स्वामिनी जी की चोली। उत्सव के दिन अभ्यंग शृङ्गार सामग्री श्री स्वामिनीजी के मनोरथ की नित्य नूतन और श्री स्वामिनीजी सखी को मनोरथ, सो श्री स्वामिनी जी पधराये सो युगल स्वरूप के शृङ्गार में श्री चन्द्रावली जी कुमारिका सखी आदि श्री सबमें, शाकघर श्री यमुना जी की कन्दरा, शाकघर

के द्वार पै श्री पुलिन्द्री जी को स्मरण। शाकघर फूलतें प्रगट्यो सो फूल श्री स्वामिनीजी की नासिका के सुगन्ध तें प्रगटयो। खासा भंडार श्री ललिताजी के कुण्ड उपरतें प्रगट्यौ। रसोई घर सखड़ी के ठिकाने श्रुतिरूपा, अनसखड़ी कुमारिका, ततैहरा श्री यमुनाजी रत्न कुंज के मध्य में कमलचौक ब्रजमध्य श्री यमुना जी की पुलिन, पान श्री राधिका जी को कपोल सुपारी श्री कुमारिका के कुच, चूना श्रुतिरूपान के दन्त, खैर श्री यमुना जी को अधर।

॥ इति आभरण को भावना सम्पूर्ण ॥

❀ पंजीरी को भाव तथा सामग्री को भावना ❀

जीरा श्रुतिरूपा, सोंठ कुमारिका अजवाइन ललिता, धनियां विशाखा, समस्त सखी श्री यमुना जी को स्नेह घृत बूरा अधरामृत तथा श्री यमुनाजी मिरच छोटी, बून्दी कुमारिका के कुच, बून्दी के लडुवा श्री स्वामिनी के कुच, ताते उत्सव में मुख्य सेव के लडुवा॥ चून के मगद के सो दोऊ श्री चन्द्रावली जी के वेसन के, धांस के श्री यमुनाजी के वेसन के श्री ललिताजी के चौरीठा के दूतोजन के, मूंग के श्री चन्द्रावली के खोवा के श्री यमुनाजी के मनोहर श्रुतिरूपा के, घी स्नेह,

बूरा अधरामृत सों बांधे। सुगन्ध श्रीअङ्ग घेवर श्रुतिरूपा को उरस्थल, जलेबी श्रुतिरूपा को अधर गूंजा श्रीस्वामिनी जी की मूठी, कंगूरा दन्तरूप तथा कंठ कंगूरा आभूषण में, गूंझा श्री यमुना जी को कुच, खरमण्डा श्रीस्वामिनीजी को उदर पपची कुमारिका के कुच।

❀ षट् ऋतु को भाव ❀

सो वसन्त और धेनु की अरुणाई। कुंज में फूली तासों गुलाल प्रगट भयौ। सो कमल श्रीहस्त की झांई वसन्तरूप नवपल्लव भयो, नखक्षत तें केशु के फूल खूब भये। सो कंकन की झांई ते चित्र विचित्र झारी प्रगटी। सो नेत्रन के अरुण स्वेत श्याम कटाच तें तथा श्रीयमुनाजी तें चोवा वसन्त में हास्य विनोद उद्दीपन भाव करि पाछैं विहार या प्रकार युगल स्वरूप कुंज में लीला करत हैं। सो क्षण हू न्यारे नाहीं होत। कबहू निंद्रा तें दोऊ स्वरूप झलकत हैं। और दूसरो स्वरूप कहाँ है, जहाँ लों दूसरे स्वरूप की स्थिति को ज्ञान होय इतने में विरह ताप होत है।

तासों कुंज में ग्रीष्म ऋतु फैलत है। सो अत्यन्त ताप के उपयोगी है। चंदन, अर्गजा, गुलाब जल सों सखीजन शीतलता करत हैं। सो अर्गजा चंदन केशरि अङ्ग के रूप गुलाब जल सों सुरति श्रम ले छिरकत हैं। याहू करिके दूसरे स्वरूप को ज्ञान होय। ताप मिटे। दन्तावलीन सों मोतीन की माला प्रगटी। अनेक रङ्ग के महल चौवारे आभरण तें प्रगटे। सो लीलारस के आधिक्यतें ग्रीष्म मेंहू श्रम रूप झरना झरत हैं। सो पन अधरामृत को पान, विरह स्वांस के लू ते कुंज-सगरी तप्त होत हैं। सो वृक्षन के पात सगरे सूकि जात हैं। सो सगरी वस्तु में उष्णता होत है। और वर्षा ऋतु को फल है, सो विरह पाछैं रस बहुत है, सो नीलमेघश्याम प्रभुके स्वरूप की आभा श्रीस्वामिनीजी के अङ्गसों विद्युत् मुक्तावली तें वक पंक्ति मुरली के नाद तथा श्रीस्वामिनीजी के राग तथा सखीजन के गानतें कोयल मोर दादुर झींगुर अनेक ध्वनि प्रगट भईं, प्रभु को नृत्य देखि मोर नृत्य करत हैं। सो सगरी सखीन पर तथा सगरे वनमें युगल-स्वरूप अमृतकटाक्ष करत हैं। सो वर्षा वर्षावत हैं। ता पाछैं अनेक फुलवारी व्रज-भक्तन की शोभा रूप फूलत है। सो सगरी वन विरह रूपी ग्रीष्म ते सूखे हते सो रसपान करि हरित होत भये। ता करिकैं श्रीस्वामिनीजी रूपवसी प्रभु को स्वरूप तमालरूप तहाँ वेष्टित भईं। सो यह वर्षा ऋतु को प्रकार कहत हैं। सो कहुँ युगल स्वरूप महल के ऊपर विराजत हैं।

सो श्रीस्वामिनीजी के मुखारविन्द रूप चन्द्रमा की उजियारी दशों दिशान में महारसरूप फैलत है ।

तैसे ही श्री आचार्यजी कृति अनेक किरण रूपता करिकें निर्मल आकाश भयी । सो प्रभुन को अङ्ग महाश्यामघन आकाश है । परन्तु श्रीस्वामिनीजी के मुखचन्द्र करिकें आकाश श्रीअङ्ग प्रभुन को होत है। सो जैसे शरद् ऋतु के अनुसार श्रीस्वामिनीजी के केश हू आकाश रूप हैं। ता करिके परम शोभायमान रात्रि होय रही है। सो शरद की तहाँ वेणु फूलन सों गुही है। तहाँ अनेक मोती हीरा हार आभूषण अनेक प्रकार सों छोटे बड़े तारा मण्डल शोभा देत हैं। सो श्रीमुखते नासिका में स्वांस चलत हैं। तासों शीतल सुगन्ध वायु चलत है। सो अलौकिक चन्द्रमा पायके कमल कमोदनी सखी अनेक स्वामिनीजी फूल रहीं हैं। सो मोतीन की माला सोई सुन्दर सरोवर भरि रहे हैं। तथा अनेक यूथपतिन को रासमण्डल ब्रज में होत है। सो भाव करिकै भोग धरत हैं। ताते शीतकाल में सामग्री नाना प्रकार की मन्दिर में होत हैं।

॥ इति षट् ऋतु को भाव सम्पूर्णम् ॥

श्रीगोवर्द्धन ग्रन्थमाला का उत्कृष्ट प्रकाशन

वार्ता साहित्य

	न्योछावर रु०–पै०
१—दोसौ बावन वैष्णवन की वार्ता सजिल्द	१०·००
२—भाव सिंधु की वार्ता	४·००
३—निजवार्ता घरू वार्ता	२·००
४—खटऋतु वार्ता	१·००
५—श्री विट्ठलेश चरितामृत	००·७५
६—सूआ की वार्ता	००·२५

सिद्धान्त साहित्य

१—श्री गिरिधरलालजी महाराज के १२० वचनामृत	१०·००
२—पुष्टि मार्गीय सार संग्रह	१·५०
३—रहस्य भावना निकुंज भावना	१·२५
४—श्री गोकुलनाथजी के २४ वचनामृत	१·००
५—अष्टाक्षर मन्त्रमाला कीर्तन ध्वनि सहित	००·४०
६—पुष्टिदृढ़ाव	००·५०
७—श्री स्वामिन्याष्टक (सटीक) श्रीगुसाँईजी कृत	१·२५

कीर्तन साहित्य

१—लघु कीर्तन कुसुमाकर, भाग–१, २ व ३, पद संख्या ६२१, नित्य, वर्षोत्सव, बसंत, धमार, हिलग, दीनता आश्रय के पद, पुष्टिमार्ग के पाँच तत्व, रासलीलामृत तथा धौल,	मू० ४·००
२—वसंतधमार, कीर्तन, होरी रसिया अदि	१·२५
३—श्री हरिरायजी कुम्भनदासजी कृत दानलीला	२० पैसा

—:❀ स्तोत्र पाठ आदि ❀:—

१—वैष्णवोपयोगी नित्य पाठ संग्रह जिसमें, रासपंचाध्यायी, भ्रमरगीत, वल्लभाख्यान, मूलपुरुष, यमुनाष्टक भावार्थ सहित, श्री यमुनाजी के ४१ पद, गोवर्द्धनवासी सूर पच्चीसी, चिन्तनु के धौल, सर्वोत्तमजी के धौल, श्रीनाथजी तथा सात स्वरूप के धौल तथा आश्रय के पद, पुष्टिमार्ग के पाँच तत्व सहित– न्यो० २=००

२—वैष्णवों के नित्य नियम के ५६ पाठ गुटका जामें षोडश ग्रन्थ, पुरुषोत्तम सहस्त्रनाम, त्रिविधनामावली, चारों गीत, समस्त अष्टकों सहित ५६ पाठ सजिल्द .... न्यौ० १·५०

३—वल्लभाख्यान मूल पुरुष .... न्यौ ००·३५

४—यमुनाष्टक भावार्थ सहित, श्री यमुनाजी के ४१ पद नित्य लीला सहित .... न्यो० ००·३५

५—रास पंचाध्यायी ... ... ००·३५

६—भ्रमर गीत ... ... ००·२५

७—गोवर्द्धनवाही सूर पच्चीसी ... ... ००·१२

८—नित्यपाठ ब्रजयात्रा ... — ००·२५

९—श्री रमनलालजी की नित्य कृति .... ००·२५

१०–पुरुषोत्तम सहस्त्रनाम .... ००·३५

११–त्रिविध नामावली चारों गीत ... ... ००·३५

१२–षोडश ग्रन्थ २९ पाठ .... ००·७५

१३–सुदर्शन कवच ... . ००·१२

१४–श्री सर्वोत्तम स्तोत्र सटीक ... . ००·४०

विशेष जानकारी को बड़ा सूचीपत्र मुफ्त मँगावें—

श्रीगोवर्द्धन ग्रन्थमाला कार्यालय
दाऊजी घाट, मथुरा. (उ० प्र०)

केवल आवरण-अजन्ता फाइन आर्ट प्रिन्टर्स, मथुरा द्वारा मुद्रित।

❀ श्री हरि ❀

भाव भावना

याद रखिये !

संस्कृत • ब्रजभाषा • हिन्दी • गुजराती तथा
अंग्रेजी में सम्पूर्ण भारत में प्रकाशित होने वाला

■ **पुष्टिमार्गीय साहित्य**
एवं
'माध्वगौडेश्वर' तथा हित हरिवंश एवं
'निम्बार्क सम्प्रदाय' के ग्रन्थ
तथा अन्य सभी गद्य तथा पद्यमय

■ **ब्रजभाषा - साहित्य**
और
समस्त धार्मिक ग्रन्थों
का एक मात्र प्राप्ति संस्थान :—

पुष्टिमार्गीय पुस्तकों का केन्द्र :—

श्री बजरंग पुस्तकालय
दाऊजी घाट, मथुरा [उ० प्र०]

प्रकाशक :—
श्री गोवर्द्धन ग्रन्थमाला कार्यालय, मथुरा

● विशेष जानकारी के लिये बड़ा सूचीपत्र निःशुल्क मँगायें ।

॥ श्री गोवर्द्धननाथो विजयते ॥

श्री गोवर्द्धन ग्रन्थमाला का सत्तावनवाँ--पुष्प

श्रीद्वारिकेशजीमहाराजकृत

भावभावना

नित्यसेवा प्रकार, याकी भावना, सातों स्वरूपकी
भावना, लीलाभावना, उत्सवभावना आदि
अनेक सेवाविषयक मननीय तत्त्वविचार

*

सम्पादक—श्रीद्वारकादासजी परीख

*

प्रकाशक :—

श्री गोवर्द्धन ग्रन्थमाला कार्यालय,
दाऊजी घाट. मथुरा.

[प्रथम संस्करण ५००] जन्माष्टमी सं० २०२१ [न्यौछावर [illegible]) ५० पैसे

...र्द्धन ग्रन्थमाला ... 3

* श्री कृष्णः शरणं मम् *

दयासागर प्रभू श्रीगोवर्द्धननाथजी हम सेवक यह सत्ता-
वनवीं पुष्पाँजलि चरणारविंदमें समर्पण करने लाये हैं
इस गोवर्द्धन ग्रन्थमाला रूपी वाटिका में सदैव
नवीन-नवीन पुष्प विकसित होते रहें
हम सेवकों की यही भावना है ।

--::हम हैं आपके दासानुदास::--

निरंजनदेव शर्मा गौड़
व्यवथापक

सोहनलाल शर्मा ग
संचालक
हरीश कुमार शर्मा
प्रचारक

❀ श्री गोवर्द्धन ग्रन्थ माला समिति ❀

सर्वाधिकार प्रकाशक के आधीन है ।

प्रथमवार १०००] [न्यौछावर [redacted]

याद रखिये—पुष्टिमार्गीय एवं ब्रजभाषा साहित्य और
समस्त प्रकार की धार्मिक पुस्तकें मिलने का
एक मात्र—संस्थान :—
पुष्टि मार्गीय पुस्तकों का केन्द्र :—
श्री बजरंग पुस्तकालय, दाऊजी घाट, मथुरा.
व्यवथापक--निरंजनदेव शर्मा का सादर भगवद् स्मरण ।

❀ प्रास्ताविक ❀

⁂

यह ग्रन्थके कर्ता 'भावनावारे श्री द्वारिकेशजी' यह
मसूं संप्रदाय में अति प्रसिद्ध हैं । यों तो श्रीगोकुलनाथजी
र श्रीहरिरायजीकी हू भावना प्रचलित हैं और वाके
ड़े बड़े ग्र थ विद्यमान भी हैं, परन्तु श्रीगोकुलनाथजीकृत
जभाषा की भावना तथा श्रीहरिरायजीकृत संस्कृत सहस्री
ावना और व्रजभाषा की भावना आदि ग्रन्थ भगवत्कृपा-
शेषसंपन्न उच्चाधिकारवारे भगवदीयनके ही अवगाहन-
ोग्य हैं । श्रीद्वारिकेशजीकृत यह भावभावना तो सेवामार्ग
विष्ट प्रत्येक वैष्णवको मननीय और अभ्यासयोग्य है ।
ह ग्रन्थ मन्दिरनके मुखिया भीतरीयानको हू आवश्यक
ौर पठनीय है । या ग्रन्थमें प्रमेय नहीं है, यह बात नहीं ।
मेय भी खूब प्रकट है, परंतु प्रमाणावेष्टित, यातें विपरीत-
ावना और असंभावनाकी वासको रोक दें हैं । यासूं यह
न्थ मुद्रित कियो है ।

ग्रन्थकर्ता श्रीद्वारिकेशजी श्रीविट्ठलेश्वर के पंचमकुमार
ीरघुनाथजीके वंश में प्रकट भये हैं । आपकी वंशपरंपरा
ा प्रकार है:—

१	श्रीमद्वल्लभाचार्यजी	१५३५	वैशाख वदी
२	श्रीविट्ठलेश्वरजी	१५७२	मार्गशीर्ष वदी
३	श्रीरघुनाथजी	१६११	कार्तिक सुदी
४	श्रीदेवकीनन्दनजी	१६३४	मार्गशीर्ष सुदी
५	श्रीवल्लभजी	१६७३	माघ सुदी
६	श्रीविठ्ठलरायजी	१६९८	श्रावण वदी
७	श्रीगिरिधरजी	१७२५	आषाढ सुदी
८	श्रीद्वारिकेशजी	१७५१	चैत्र सुदी

भावनासूं अतिरिक्त मूलपुरुष और अनेक कीर्तन ग्रन्थकर्ता ने प्रकट किये हैं। मूल पुरुष तो अतीव प्रसिद्ध और लाखों वैष्णवनके नित्य नियम के पाठ के अन्तर्ग है।

—द्वारकादास परी

* * *

॥ श्रीहरि ॥
॥ श्रीमद्वल्लभाधीश्वरा विजयन्तान्तमाम् ॥
श्रीकाम्यवन––पञ्चमपीठान्वयप्रादुर्भूत नित्य-
लीलास्थ गोस्वामी श्री ६ श्रीद्वारिकेशजी
महाराजकृत

❋ भावभावना ❋

प्रातःस्मरण––प्रातःकाल ऊठि माला यज्ञोपवीत समारनो। दर्शन करे। माला है सो दास्यधर्म है वैष्णव है। जनेऊ वैदिक धर्म है। जनेऊ को अधिकार न होय तो माला सम्हारे। पाछें श्रीमदाचार्यजी महाप्रभूनको, श्रीगुसांईजीको, श्रीजीको, सातों स्वरूपन को, स्मरणपूर्वक नाम लेइ दंडवत् करिये। तातें मानसिक, वाचिक, कायिक, यह तीनों ? सिद्ध भये।

आचार विचार अंग

देहकृत्य–पाछें बहार आय देहकृत्य करें। घरसों नैऋत कोने जाय, जनेऊको दक्षिण कर्ण राखि देहकृत्य करिये। मृत्तिकाको प्रमाण।

"एका लिंगे गुदे पञ्च तथा वामे करे दश ॥
उभयोः सप्त दातव्याः पादयोस्तु त्रिभिस्त्रिभिः ॥"

(गुह्येन्द्रियमें १, गुदामे ५, वाम हाथमें १० औ
दोनों हाथ में ७ और दोनों पग में तीन-तीनवार मृत्तिका
प्रमाण है ।) पाछे कुल्ला करिये । ताको प्रमाणः–

"मूत्रे पुरीषे भुक्तांते रेतःप्रस्रवणे तथा ।।
चतुरष्टद्विषट्द्वयष्टगण्डूषैः शुद्धिमाप्नुयात् ।।"

(मूत्र पाछें ४ खरचु पाछें ८, भोजनांते १२, विषयां
१६) दंतधावन सूर्योदय पहेले करिये । मुख धोय, पोंछि
श्रीजी, सातों स्वरूपनको चरणामृत (उठ गयो होय त
और मृत्तिका उत्तमस्थलनकी मंगाय, छांनि, भिजोय, वा
शेषपात्र चरणामृत होय सो मिलाय देनो, थेपलीं बा
राखनी, वामें तें) नित्य लेनो । पाछें तेल लगाय, स्ना
करि, अपरस वस्त्र पहेर के आसन पर बैठे ।

तिलकमुद्रा—श्रीयमुनाजीकी रेणु मुखमें मेलि, ह
आंखिनसों लगावें । तिलक करनो सो हरिमंदिर भगवत्प
कृति (चरणाकार) करनो । इतने तिलक भगवत्पदाकृ
नहीं, तैसे न करिये ।

वर्तुलं तिर्यगच्छिद्रं ह्रस्वं दीर्घतरं तनु ।।
वक्रं विरूपं बद्धाग्रं भिन्नमूलं पदच्युतम् ।।"

(गोल, टेडो, छिद्ररहित, ह्रसव, अतिलांबो, छो
बांको, बेडोल, बंध्योभयो है अग्रभाग जाको मूल भिन्न

पदभ्रष्ट, एसें तिलक निषिद्ध हैं ।) इन विन ऊर्ध्वपुण्ड्र तिलक करि, मुद्रा धारण करिये ।

पंचमहाभूतनकी अन्तःशुद्धि । चरणामृत करि पार्थिवांशकी शुद्धि (पृथ्वी) जलचरुणामृत करि जलांशकी शुद्धि (जल) । प्रसादी तुलसी करि तैजसांशकी शुद्धि (तेज) । भगवद्-भगवदीयजनको संग करि वायुकी शुद्धि (वायु) । भगवद्-दर्शन तथा गुरुदर्शन करि आकाशांशकी शुद्धि (आकाश) । "या वै लसच्छ्रीतुलसी" याकी श्रीसुबोधिनीजी में वर्णन किये हैं तेसैं बाह्यशुद्धि । पद्मधारणतें पृथ्वीकी शुद्धि । शंखधारणतें जलकी शुद्धि । चक्रधारणतें तेजकी शुद्धि । गदाधारणतें वायुकी शुद्धि । नाममुद्रातें आकाशकी शुद्धि । संप्रदायमुद्रातें भक्तिकी शुद्धि । यह संप्रदायमुद्रा तो भावे तबही दें, याको कछु अटकाव नहीं है, सदा ही हैं । "यथारुच्याथवा धार्या" इति वचनात् । मुद्रा धोइ जल मुखमें मेले ।

सेवाप्रकार

पाछें मन्दिरके द्वार जाय दंडवत् करिये । यह श्लोक पढ़नोः––

"नमो नमस्तेस्त्वृषभाय सात्त्वतां विदूरकाष्ठाय मुहुः कुयोगिनाम् ।। निरस्तसाम्यातिशयेन राधसा स्वधामनि ब्रह्मणि रंस्यते नमः ।।"

यह श्लोक न आवे तो यों ही दंडवत् करिये । पाछे भीतर जायके खासा जलसुं मृत्तिका बा खली लेके हाथ धोवने । शीतकालमें वेगि होय तो दीवा करने । सब ठोर बुहारी मंदिर वस्त्र करि भीतर शय्यानिकट जाय के रात्रि के झारी, बंटा बीड़ा, त्रष्टो लायके प्रसादी ठोर धरनें। प्रसादी मथनो में झारी ठलावनो । बंटा के ठोर बंटा ठलावनो । सब पात्र मांज के धोय राखे । (गच्च ? वा पाषाण की भूमि होय तो गजीको हाथ एकको टूक मंदिर वस्त्रके तांइ करि राखिये । वाको भीजोय सबठोर पोतना फिराइये ।) पाछें हाथ धोंय सिहासन झटकि बिछाबनों । मुख वस्त्र चिनके धरनों ऋतु अनुसार ओढवेको सिद्ध करि राखनों । (झारी दोय मांजे, तामें झारी एक भरि राखे, दूसरी झारी तो राजभोग आयवेके समे भरिये । एक झारी निबरा पहेराय सिघासनपर तवकडीमें धरिये ।) मंगलभोग सिद्ध करि साज ढांक राखनों । जापें भोग धरत होय सो चोकी अथवा पडगी सिहासन आगें लाय धरनी ।

श्रीपादुकाजी विराजत होइ तो जगाय के दंडवत् करिये। पाछे वंटा तथा फुलेलको बंसला पास धरि वेठिये । बंटामें तें अंगवस्त्र लेइ श्रीपादुकाजीको करिये । पाछें अंगवस्त्र, रात्रिकी ओढवेकी ओढनी घडी करि बंटामें धरिये । एक पीढा पर वस्त्र बिछाय तापें श्रीपादुकाजी पधरावें । शय्या झटकि फेर बिछावें । श्रीपादुकाजीकों फुलेल लगाय शय्या पर पधराइये । समयानुसार ओढावें । बँटा, बांसला, पीढा ठिकाने धरिये ।

और जो श्रीहस्ताक्षर बिराजत होय तो वसना बदलोये । जो चंदन के चरणाविंद तथा वस्त्रसेवा होय तो थेली पहिराइते ।

श्रीपादुकाजी के स्नानकी विधि–बरस एकमें पांच बेर अभ्यंगस्नान होय । १ जन्माष्टमी, २ रूपचतुर्दशी, ३ श्रीआचार्यजीको जन्मोत्सव, ४ श्रीगुसांईजीको जन्मोत्सव, ५ जिनके श्रीपादुकाजी होइ तिनको जन्मोत्सव । संस्कृत (अधिवासन कियो भयो) जलसों स्नान स्नानयात्रा के दिन । शुद्धोदकतें स्नान डोलके दूसरे दिन, वा ग्रहणकोउ गृहणस्नान, श्री ठाकुरजी स्नान करि चुके तापाछें करावें ।

पाछें घंटा तीन बेर बजाय, हाथ धोय-पोंछ, (सोत सोय तो अग्निकी निकट सेक) शय्यानिकट जाय । ठाड़े होय के या भांत कहे—"जय जय जय महाराजाधिराज, महाप्रभो, महामंगलरूप, कोटिकंदर्पलावण्य, श्रीआचार्यजीके अन्तःकरणभूषण, श्रीगुसांईजीके लाडिले, श्रीयशोदोत्संगलालित, ब्रजजनके सर्वस्व, राजीवदललोचन, अशरणशरण, शरणागतवत्सल, जय जय जय" या भांति भावसों कहि चादर उघारि के श्रीमुख देखि, सिंघासन पर गादीपर

पधराय वस्त्र समयानुसार ओढावें । पाछें दूसरे स्वरूपनको पधराइये । दोय स्वामिनी होय तो बड़े वाम भाग ओर छोटे दक्षिण भाग पधराइये । समयानुसार वस्त्र ओढावें । पाछे मंगलभोग धरि दंडवत् करि, टेरा दे निकसिये । हाथ धोय शय्यामंदिरमें जाइये ।

शय्यासेवा—ओढवेकी चादर धरी करि राखे और वस्त्रसों ढांक धरिये, जो दिनमें कबहू न ओढ़ें तातें । दो बलस्त गिरदा, कसना ४ खोलि, और ठिकाने धरि, बिछायवेकी चादर सफेदी वा पर धरि, शय्या ऊपर नीचे झटक और ठौर धरिये । पडपाइयां उठाय बुहारीसों मंदिरमार्ज करिये । मंदिरवस्त्र देइ हाथ धोइ, पोंछि, शय्या बिछाइये समयानुसार ओढाइये । अक्षयतृतीयातें लेके प्रारंभ हींडो बिराजे ताके पहिले दिनमें शय्यापर कछु न ओढ़ें । हिंडोल बिराजें ता दिनतें रंगीन चादर ओढ़ें । जो हिंडोले बैठवे सौकर्य न होइ तो हू श्रावणतें रंगीन चादर ओढ़ें । पा कछु सीत होइ तब खोलि, तातें अधिक सीत होय त रजाई । दोवारीतें शय्यापर सुफेती एक बिछे । प्रबोधिनी दोय सुफेती । श्रीगुसाँईजीके उत्सवतें तीन सुफेती और ए रजाई ओढ़ें । यह ओढवे की परमावधि है पाछें शय ढांकना तें ढांके । शय्या के नीचे रुईकी तह बिछे सो प्र धिनीतें लेके बसंतपंचमीके पहेले दिन तांइ । या प्रका

शय्या सिद्ध करि ढांक राखे । दुपहर कों शय्या–भोग प्रभून की ओर शय्या पास रहे । तहाँ नीचे झारी तथा बीडा तथा त्रीष्टी शय्याकी दूसरी ओर रहे । उष्णकाल होय तो बामभाग सबतें नीचे पंखा रहे ॥

मंगलार्ती—पाछें समय विचारिके, आरती साजके, खलोमु हाथ धायके, आचमन कीं झारी ले, (सीतकाल होय तो उष्णजल लेनो) बीडा लेके भीतर जानो । त्रीष्टो में आचमन कराय, मुखवस्त्र करि, बीड़ा दक्षिण दिस धरनों । भोग प्रसादी पात्रमें ठलावें । पात्र तथा पडगी धोय, सिंहासन आगे मंदिर वस्त्र दे, दर्शन के किंवाड खोलके आरतो करनो । दंडवत् करि, भीर सरकाय, टेरा देके हाथ धोय पोंछि, सिंघासन आगे सींगारकी चोकी लाय धरिये । आभरणकी पेटी, वागा, पीछोडाकी झांपी, साड़ा, पाग, कुलह, टीपारा, फेंटा, चंद्रिका, मेन, कतरनी, शलका, बेणु, वेत्र, अंगवस्त्र धरिये ॥

स्नान—स्नानकी परात, तामें पीढ़ा, तापर दुहेरो वस्त्र बिछाइये । स्नानके लिये उष्णजल हाथको सुहातो कसेंडी में भरि पास धरिये सीत होय तो अंगोठी पास रखिये या प्रकार सब सिद्ध करि प्रभूनको चौकी पर पधरावें । रात्रि को श्रृङ्गार वडो करिये । अंजन पहेरत होय तो एक महीन वस्त्रतें पोंछि वह वस्त्र श्रृङ्गारको पेटीमें धरिये । वस्त्र कूं

रज लागे नहीं तातें। पाछें स्नान के पीढा पर पधराय स्नान करावें। अंगवस्त्र करि चौकीपर पधरावें।

श्रृङ्गार—समयानुसार श्रृङ्गार धरावें। गोर स्वरूप होय तो अंजन वा अलंकार धरत होय सो धराइये। श्यामस्वरूप होय तो अलंकार मेनका गोली देह धरावे, अंजन नहीं। पाछें दूसरे स्वरूपको श्रृङ्गार। श्री स्वामिनी बिराजत होय तो पहिले वामभाग श्रृङ्गार, पाछे दक्षिणभाग। श्रीठाकुरजी एक हरो वागा पहरें तब दोउ ठौर इकहरी चादर ओढें। जब दुहेरो वागा पहरें तब दुहेरी चादर ओढें। प्रबोधिनी तें रजाई ओढें। वसंतपंचमीतें उपर स्वेत चादर ओढें, कबहु केसरी। गरमी चातुर्मास में अकेली साडी अंतरीय। अभ्यंतरीय चादर नहीं।

श्रीगोवर्धनशिला तथा शालिग्रामजीकूं स्नान कराइये। अंगवस्त्र करि ठिकाने पधराय, समयानुसार ओढावें।

प्रभूनका माला पहिराय, दर्पन दिखाय के झारी फेरि भरिये। श्रृङ्गार चौकी प्रभृति आगेतें सब उठाय के सिंवासन आगें मंदिरवस्त्र दे श्रृङ्गारभोग धरिये। टेरा दे, बहार आय, स्नानको वस्त्र तथा अंगवस्त्र यह दोउ भिजोय, निचोड के सुखाय दीजे। चरणामृत तुलसी में ठलाय, परात पीडा धोय धरिये। समे भये आचमन मुखवस्त्र कराय, बीडा धरि, भोग प्रसादी ठौर ठलाय, भोग के ठिकाने हाथ फेरिये।

ग्वालभोग धरनों। झारी बीडा काढि बीडा सिखोरी में धरिये। झारी दोय फेरि भरिये। समय भये भोग सराय, आचमन मुखवस्त्र कराय बीडा धरिये। ग्वालको डबरा प्रसादी में ठलाय, डबरा धोय ठिकाने धरे, वा ठौर हाथ फेरि मंदिरवस्त्र देनों।

जो पालने बैठायवे को मनोरथ होय तब प्रभून को पालने में पधरावें। पहले पालनो झार, वामें सुपेती बिछाय, चादर बिछाय, बलस्ती गिरदा धरि पाछें प्रभून को पधराइये। बांई ओर पड़गीपर एक तबकडी में झारी धरिये। दाहिनी ओर पडगी पर एक तबकडी में कछु सामग्री तथा ग्वाल को बीडा धरि वस्त्र सों ढांकिये। आगे चोकी पर तबकडी में खिलौना खिलायवे के धरिये, झुलाइये, खिलाइये, पालने के कीर्तन गाइये।

राजभोग—राजभोगकी सामग्री सिद्ध जानि, सिंघासन आगे मंदिर वस्त्र दे, हाथ धोय राजभोग की चौकी मांडिये। चौकी डिगत होय तो चीली लगाइए। कटोरी में जल भरि चौकी पर धरिये। सीत होय तो उष्णजल भर धरिये। अनसखडी सामग्री बांई ओर चौकी पर धरिये। सखडी सामग्री आगे चौकीपर धरिये। भोग सब आय चुके पाछें प्रभून कों पधराइये। दोउ झारी आसपास दाउ ओर धरिये। थार संवारि (छांनि) रसीली वस्तून में चिमचा धरिये। तुलसी

सब सामग्री में धरिये। शंखोदक कीजिये, या प्रकार--हाथमें शंखमें तें जल लेइ सामग्री पर छिरकिये। धूपदीप करि श्री आचार्यजी, श्री गुसांईजीको स्मरण करि, 'इनकी कानितें अंगीकार करोगे' यह विज्ञप्ति करि, टेरा देइ, बाहिर आइये। जो मंदिर में राजभोग धरिवेको सौकर्य न होय तो रसोई घर में सामग्री (भोग) साजि छोटे सिंघासन पर वहांही पधराइये।

पालनो ढांकि, तबकडी प्रसादी पात्रमें ठलाय, बीडा सिखोरीमें धरि, तबकडी धोइये। राजभोग के बीडा साजि आचमन की झारी पास धरिये। शय्या के बीडा साजि शय्या पास धरिये। सब भोग में बीडा को सौकर्य न होय तो सुपारी कुटि लवंगचूर इलायची मिलाय एक बंटा भरि राखिये। वामेंतें एक कटोरी में थोरो थोरो प्रतिभोग धरिये। प्रसादी में एक बंटा करि राखीये, वामें ठलावत जाइये। राजभोग में बीडा बनि आवे तो आछो। उष्णकाल होय तो मृत्तिका को कुंजा भरि, वस्त्र लपेट राखिये। पाछे संध्या जपपाठ नित्य कर्म करिये।

समय भये आचमन को झारी भरि, हाथ मे लेइ, बीडा लेइ, टेरा खुलाय मंदिर में जाइय। आचमन मुखवस्त्र कराय, बीडा धरि, झारी दोय फेरि भरिये। एक झारी सिंघासन पर तबकडी पर अथवा पास पडगी होय तापर वाम भाग धरिये। एक झारी शय्या पास धरिये। भोग सराय, मंदिर दोय बेर धोय, मंदिर वस्त्र करिये।

राजभोग दर्शन--प्रभून को माला फूलको पहिराय, आरसी दिखाय, ठिकाने धरिये। गरमी के दिन होय तो कुंजा दाहिनी दिस धरिये। बीडा के पास पंखा सिंघासन पर धरिये। चन्दन को कटोरी एक प्रभु पास, कटोरो एक शय्या के पास बीडा के निकट धरिये। चदन तो अक्षय-तृतीया सों एक मेह बरसे हूंफ मिटे तहां तांई। कूंजा करवा जन्माष्टमी के पहिले दिन तांई। सिंघासन पर पंखा दशहरा तांई। शैया के पंखा दीवारी की रात्रि तांई। सिंघासन आगे खंड बिछाइ, ऊपर लंबी गादी बिछावें। तापर हाथी दांत के खिलौना वाम भाग, काष्ठ के लाल खिलौना दक्षिण भाग पडगी पर धरे। प्रबोधिनी तें सिंघासन आगे तह बिछें सो वसंतपंचमी के पहले दिन तांई। और बेर तो खंड के आगे तें शय्या तांई पेंडो बिछे। एक गादी खंड आगे, एक गादी शय्या आगे धरिये। चौपड को चौकी तथा आसपास की चौकी तथा आसपास की चौकी सब धरे। चौपड के दोउ ओर गादी बिछावें। जो तह बिछे तो शय्या पास धरिये। जब पेंडो बिछे तो सिंघासनके खंड आगें धरिये। गेंद दो वा तीन धरे। तैसे ही चौगान धरे। किवाड खुलाय आरती करिये। दंडवत् करि, हाथ धोइ, आरसी दिखाइ

ठिकाने धरि, भीर सरकाइ माला बड़ो करि, पास धरि, किवाड मंगल करि, ताला अटकाइ, प्रसादी बोडा, माला, वा सुपारी गोद में लेंइ, पाछे मंदिर आगे दंडवत् करि बाहिर आवें।

ब्राह्मण तथा वैष्णव को सन्मान करि आपुन महाप्रसाद लेनों। बिगर्यो संवर्यो होय सो कहिये। तो दूसरो बेर सामग्री भली भांति करें। अचवाय के मुखशुद्ध्यर्थ बीडा खाइ, आलस्याभावार्थं थोडो सोवनों। फेरि उठ देहकृत्य करि, शुद्धयाचमन करि पुस्तकावलोकन करनों। भगवत्सेवोपयोगी जानि व्यापार करनों।

उत्थापन--पाछें समे विचार (छै घड़ी दिन रहे) पूर्व रीतिसों स्नान करि, फलफूल सामग्री सिद्ध करि, मंदिर में जाय घंटा तीन बेर बजाइ, खलीसों हाथ धोइ, उत्थापन के किवाड़ खोल। दंडवत् करि दर्शन करावें। पहिले सिघासन नीचे को तह वा पेंडो वा चरणगादी उठाय ठिकाने धरिये। पाछें हाथ धोयके झारी भरि प्रभु पास धरिये। पाछें भीड सरकाइ उत्थापन भोग धरिये। पाछें शय्यामंदिरमें जाइ, बंटा झारी शय्याभोग प्रसादी पात्रन में ठलाइ, बंटा धोइ पोंछ रात्रि का शय्याभोग बंटा में धरि ढांकिये। झारी ठलाय जलपान की मथनियां पास धरिये। त्रष्टी धोय धरिये। बोडा होय तो सिखोरी में ठलाइये। सुपारी होय तो बंटीमें ठलाइये। पाछें आचमन की झारी भरिये। कुंजा के दिन होइ तो कुंजा भरिये। चंदन प्रसादी निकस्यो होइ तो एक थरीमें ठलाइये, कटोरी धोय के रात्रि को अंगराग सिद्ध करिये। बालस्ती उठाय, शय्या ढंकनां तें ढांकिये। कसना प्रबोधिनी तें लेके डोल के दिन तांई न बंधे। शय्याभोग को बंटा बांई ओर, ता नीचे झारी, कुंजा के दिन होइ तो बंटा के उपली ओर कुंजा रहे। सब तें नीचे पंखा। दक्षिण दिस झारी। ता नीचे बीडा वा सुपारी। ता पास संध्या आरती भये पाछें माला बडी होइ सो तथा शयन आरती पाछें माला बडी होय सो धरिये।

भोग—पाछें बाहिर आइ आचमन की झारी तथा बीडा त्रष्टी हाथ में लेकें टेरा खोलि भीतर जाय। आचमन मुखवस्त्र कराइ, बीडा धरि, त्रष्टी ठलाइ धोइ चौपड की चौकी पास धरिये। माला पहिराइये। खंड के आगें चौपड़ की चौकी तथा आसपास की चौकी न मांडी होइ तो मांडीये। भोग सर्यो होय सो पात्रमें ठलाइ, पात्र धोय धरिये। दर्शन के किवाड खोलिये। श्री पादुकाजी हाथ में पधराय, शय्या हाथसों झटकि, तापर फेरि पधराय समयानुसार उढाइये। दंडवत् करि हाथ आंखिन सों लगाइये। हाथ धोय पाछें टेरा दे, संध्याभोग धरीये। समे भये पाछें भोग सराय, आचमन मुखवस्त्र कराय, बीडा धरिये। पाछें घड़ी एक दिन

रहे तब वेत्र श्रीहस्त में धराय संध्या आरती करिये। दंडवत् करि, भीड चलाइ, किवाड देइ, हाथ धोइ, त्रष्टी धोइ धरिये । खिलौनांको तबकडी ठिकाने धरिये । खंड उठाय, खंडको वस्त्र तथा गादी घड़ीं करि धरिये । चौपड़ एक कोथली में धरिये । आस पास की चौकी, चौपड़ की चौकी सब साज ठिकाने धरिये । श्रृङ्गार चौकी आगें लाय धरिये । प्रभून को पधराय श्रृङ्गार बडो करिये । प्रौढ स्वरूप होइ तो इतनों राखनों । पाग, तिलक, अलकावली, छोटे कर्णफूल, कंठाभरण, फुंदना विनाकी पहुँची बेसर, नूपुर, तनिया । सूक्ष्मस्वरूप होइ तो पागमात्र रहे । और जो मुख्य वेही स्वरूप विराजत होइ तो वाम भाग दक्षिणा भाग के बडे हार क्षुद्र–घंटिका बडी करिये । और सब रहें । पाछें छोटे सिंघासन वा बडे सिंघासन पर पधराइये ।

ग्वाल को सौकर्य होय तो प्रातःकाल की रीति सों ग्वाल भोग धरिये । झारी बीडा काढ़ि ठिकाने धरिये । बीडा सिखोरी में धर झारी दोउ भरी सिद्ध करि राखिये । समे भये ग्वाल भोग सराय, आचमन मुखवस्त्र कराय, बीडा धरे । डबरा प्रसादी में ठलाय धोय धरिये । त्रष्टी धोय, बीडा ठिकाने धरि, मन्दिरवस्त्र दे हाथ धोवें ।

सेनभोग—सखडी को विचार होइ तो झारी आसपास धरिये । जो अ सखड़ी सेनभोगको विचार होइ तो

झारी एक धरिये । एक झारी होइ तो सदा वामभाग धरिये । बीडा सुपारी दक्षिणा भाग धरिये । भोग समपिके धूपदीप करिये । पौन समे होइ तब दूसरो भोग आवे । पाछें समय भये आचमन मुखवस्त्र कराय, त्रष्टो धोय धरिये । मंदिरवस्त्र दे झारी भरि शय्यामंदिर में शय्यापास धरिये । उष्णकाल में तिवारी में सांगामाची पे आवे । माला पहिराइ किवाड खोलिये । सैन आरती करि, दंडवत् करि भीड चलाइ, किवाड देइ हाथ धोइये । माला बडी करि शय्यापास धरिये । जो उष्णकाल होय तो सिराहने की बालस्ती के आसपास धरिये । शयनार्तीकी माला वाम-भाग धरे । संध्याआर्ती की माला दक्षिण भाग धरे । जो सीत होय तो बीडा की तबकडी में दक्षिण भाग धरे । शय्या ऊपर की चादर उघाडि आवें । पाछें प्रभून को पधरावें। शय्या पर पधराय वाम भाग दक्षिण भाग को स्वरूप पधरावें । चादर उढाय दें । पाछें श्रीपादुकाजी कों पौढाइये । सिंघासन की पास आय मुखवस्त्र वडी करिये । ओढवे को वस्त्र घडी करे । सिंघासन वस्त्र उलटावे । शय्या ढकना तें सिंघासन ढांकनों । किवाड दे, ताला मंगल करि कूंची हाथ में लै के प्रसादी बीडा वा सुपारी लै के बाहिर आइ, मंदिर को दंडवत् करे । कूंची ठिकाने धरे ।

प्रसाद ले, अचवाय, मुखशुद्ध्यर्थ बीडा खानो ।

भगवदीयन सों मिलि भववद्वार्ता करनी । काम निवृत्यर्थ स्वस्त्री सों ही संग करि, भाव यह राखनो जो संतान होय तो सेवानुकूल होय । पाछें चरणामृत लै के सोवनो । तो दुःस्वप्न न आवे यह अवांतर फल है । मुख्य फल तो यह जो शरीर अनित्य है, कौन जाने जो स्वांस रहे के न रहे ? खाटही पे जीव निकस जाय तो ? चरणामृत लै कें सोये होंइ तो अवगति न होय । श्रीमहाप्रभुजी, श्रीगुसांईजी, और जा घर को सेवक होय तिनके सेव्यस्वरूपन को स्मरण करि निद्रा करिये । या विधि व्यसनांत भक्तिवर्धिनी रीति सों सेवा करे तो कृतार्थ होय ।

॥ इति श्रीद्वरिकेशजीकृत नित्यकृत्य सम्पूर्ण ॥

❀ मार्गकी रीत ❀

यातें पुष्टिमार्ग में भक्ति निर्गुणा है, ब्यासीमी है । (सत्त्व, रजः और तमः, यह तीनों गुण हैं । तीनों गुण परस्पर मिलवेंसूं तीन तीन नव भये । यह नव भेद नवधा भक्ति में मिलायवे सूं नव नव गुणन एक्यासी भये । और ब्यासीमी भक्ति निर्गुणा हैं ।) तातें मार्गकी रीति सेवा करे तो सेवाफलोक्त फल तीन होंइ । या प्रकार सेवा न करे तो सेवाफलोक्त प्रतिबंध तीन होंइ, जन्मांतर होइ, तातें मार्ग रीति सों चलिये । पहिले शरणमंत्र लेइ । ११ ग्यारह दिन

को होय तबतें योग्यता । या मंत्रतें हृदय शुद्ध होइ और निवेदनमंत्रकी योग्यता होइ । श्रवणतें प्रारम्भ दास्य पर्यंत भक्ति ७ होंइ, सो निवेदनमंत्र वीज है । जैसे खेत खेडिये, पाछें बीज बोवे तो फलित होइ । तातें शरणमंत्र पाछें निवेदनमंत्र अवश्य लेनों । उपवासकी आवश्यकता नहीं ।

'अज्ञानादथवा ज्ञानात् कृतमात्मनिवेदनम्' इति वाक्यात् ।

(उपवास) पालवे को विचार होइ तो इन्द्रिय शुद्ध्यर्थ प्रथम दिवस उपवास करि, दूसरे दिन शुद्ध्यर्थ श्रीजी की भेट देइ, पाछें मुख्य भेट गुरुकी देइ, मंदिर में जाइ, चरनस्पर्श करि, वैष्णवनकों प्रसाद लिवाइ, तब तें पालिये । पाछें सर्वथा अन्याश्रय न करनो, असमर्पित न खाइये ।

और नामधारी के समर्पणी के ठाकुर एक ठौर न बिराजें । जो नामधारी के ठाकुर समर्पणी के यहाँ पधारे होंइ तो बाहर विराजें, मंदिर में नहीं । समर्पणी के ठाकुर को भोग सरे सो प्रसादी अरोगे । और समर्पण लियो होइ परंतु पालत न होइ तो वाके ठाकुर मंदिर में दूसरे सिंघासन पर बिराजें । जुदो भोग धरे । जो पालत होइ तो एक सिंघासन पर बिराजें । तब भोग जुदो नहीं, भेलो अरोगे । वैष्णव के ठाकुर अपने मंदिर पधारें होइ तो सामिग्री में अधिक न करिये । प्रभु की भूख को कछु प्रधान नही । जो होइ तों अन्नकूट की सामिग्री अधिक होइ, वैसें ही

अरोगें । वस्त्रादिक पहिराइये ।

अथ अभ्यंगको विचार लिख्यते—शनिवार के दिन रात्रि को शृङ्गार बडो करि, स्नान के पीढा पर पधराइ, फुलेल लगाइ, उबटनां लगाइये । उबटनां का प्रकार । अबीर कटोरीमें मेलि, भिजोइये । अथवा गहुँला नखलामें कपूरकाचरी में सुगन्ध होत है, वाकों कूटि छानि राखिये, वामेंतें थोडो लेइ के कटोरा में भिजोई देनो । सीतकाल होइ तो उष्णजलतें भिजोवे । पाछें श्रीअंगमें लगाइ उष्णजलतें स्नान कराइये । अङ्गवस्त्र करि चौकीपर पधराइये । और उत्सवके दिन दोइ वा तीन रहे होंइ तो ता शनिवार को कछु अवश्य नहीं । उत्सव के दिन अभ्यंग होइ । स्यामस्वरूप कों अभ्यंग पाछे फेरि फुलेल लगाइये । अङ्गवस्त्र करनों । नित्य हू स्नान पाछें अङ्गवस्त्र करि फुलेल लगाईकें, फेर अङ्गवस्त्र करनों । और गौर स्वरूप होंइ तो अभ्यंगके समे फुलेल लगाइ, पाछें उबटनां लगाइ, स्नान कराइ, अंगवस्त्र करे । फेर फुलेल नहीं । और नित्य हू फुलेल नहीं । अभ्यंगके दिन सिंघासन वस्त्र और बिछावनां । शय्या के वस्त्र तथा गादों तकीया के वस्त्र तथा मुखवस्त्र बदलिये । जो प्रति अभ्यंग न बदले तो एक अभ्यंग बीच दूसरे अभ्यंग को वस्त्र सब बदलिये । मुखवस्त्र तो प्रति अभ्यंग को बदलिये ।

सीतकाल में चंदौवा, पिछवाई, सिंघासन वस्त्र आदि सब लाल साज मखमल, मसरु खिमखाब आदि पाटके बिछे । गादीपर मखमल मात्र । वसंत तें स्वेत साज सो डोल तांई । डोलके दूसरे दिनतें सो अक्षयतृतीया के पहिले दिन-तांई छींटकी साज गादीपर । अक्षयतृतीया तें सो हिंडोला बैठे तहां तांई स्वेतसाज । चातुर्मास में रंगीन प्रति सबसाज बिछें । उत्सव कों तो सदा लाल साज गादी प्रभृति सब बिछें ।

❀ सेव्यस्वरूपको निर्णय ❀

वैष्णवन के घर स्वरूप विराजत हैं, ते यह भाव राखें । जा घरके सेवक, तिनके मुख्य सेव्य स्वरूप, तिनको आविर्भाव । स्वरूप मुख्य आठों समान ।

"षोडश गोपिकानां मध्ये अष्ट कृष्णा भवन्ति" इति वाक्यात् ।

श्रीजी तथा सातों स्वरूप, तहां इतनो भेद । वृन्दावनस्थित लीला केवल पुष्टि श्रीजीके यहां । नंदालयस्थित लीला बाह्य मर्यादा अन्तःपुष्टि सातों स्वरूप के यहां । स्मरणीय श्रीजी अरु सेवनीय सातों स्वरूप ।

'सदा सर्वात्मना सेव्यो भगवान् गोकुलेश्वरः ।
स्मर्तव्यो गोपिकावृन्दे क्रीडन् वृन्दावने स्थितः इति वाक्यात् ।

यातें सेवा करे सो अपने घरकी रीत की करनी । जा घर की जैसी रीत ता रीत सों करनी । तहाँ वैष्णव को

यह बिचारनो जो शृङ्गार तथा सकल सामिग्री अङ्गीकार करत हों, वहां स्वमार्गीय विधिपूर्वक, यहाँ यत् किंचित् में समर्पत हूँ, सो अंगीकार करोगे यह भाव राखे, तो जो समर्पों सो अंगीकार होइ । तब सकल सामिग्री अंगीकार होत है । तातें जा वैष्णवसों व्यवहार होइ, प्रसाद लेवे कों बुलावें, तहां जाइ, जो प्रसाद परोसे सो लेइ । आपु यथाशक्ति भोग धर्यो है, परंतु जाके भावसों बिराजत हैं, तहां सकल सामिग्री अरोगें । यातें समान राखिवे कों अवश्य जाइ, प्रसाद लेइ यामें बाधक नहीं । समाज रहे तो उत्सव कीर्तन चले, तब गुरुसेवा भगवत्सेवा सिद्ध होइ ।

"यस्य देवे परा भक्तिः यथा गुरौ" इति वाक्यात् ।

❀ भेटको प्रकार ❀

सेव्य स्वरूप को बरस एक में तीन बेर भेट करे ताको प्रकार । प्रथम पवित्रा के दिन प्रभून कों पवित्रा धराय, दूसरो पवित्रा गुरुके भावसों प्रभूनकों पहिराय भेट करिये । घर में जो होंई वेहू यथाशक्ति भेट धरें । इनहूँ को सेवा सिद्ध होइ तातें । दूसरी भेट जन्माष्टमी के दिन तिलक के समें तो श्रीफलमात्र भेट धरें । मुख्य भेट तो प्रभु पालने पधारे तब हाथ एकको कपड़ा रेशमी वस्त्र प्रभूनकों पलना में मांडि के उढावे । पाछें आप तथा घरके जे होंइ ते भेट

धरें । सो पालने के आगे खिलोनांकी तबकडोमें बंटी होइ तामें भेट धरिये । तामें भाव यह राखे जो श्रीनंदरायजी के सगेसंबंधी झगा, टोपी चूड़ाको लावें या समे, सो अधिकार श्रीमहाप्रभून की कृपा तें आपुन को हू भयो, यह भाग्य । तृतीय भेट दीवारी को रात्रिको प्रभु हटडी में पधारें, तब सब भेट बांटिके चौपड़ के चारो खाली खंड में धरे । सो चारों भाग सरखे करे, तामें जो बढ़े सो बीच के खंड में धरे । तामें यह भाव राखे जो प्रभु जूबा लगाइ खेलत हैं । सो न धरिये तो प्रभु जूबा न खेलें । और आपुन को इतनी सेवा सिद्ध न होई । तातें अवश्य बांटि चारों और धरिये । बढ़े सो मध्य में रहे । पाछे यह तीनों भेट गुरु के यहाँ अवश्य पहुँचावनो । पवित्रा की भेट तो गुरु की ही होई । यह हू दोउ भेट गुरु के सेव्य स्वरूप को हैं । तातें जहाँ उत्सव कीर्तन की भेट रहे तहाँ यहु तीनों भेट सुध करिके दई चहिये । तब सांग सेवा सिद्ध होइ ।

❀ जपको प्रकार ❀

वैष्णवको चार प्रकारकी माला जपनी । १ तुलसीकी, २ वर्णमाला, ३ करमाला, ४ शुद्धकाष्ठकी माला । मानिका १०८, सुमेरु जुदो । ताको आशय "शतायुर्वै पुरुष-" या श्रुतिमें शत आयुको शत मृत्यु विषे निवेश कह्यो है । एक

एक आयुको एक एक मृत्यु ले जाय। "अत्रात्र वै मृत्युर्जायते" "आयुर्हरति वै पुंसां" इति च, 'कृते लक्षं तु वर्षाणि त्रेतायामयुतं तथा। द्वापरे तु सहस्राणि कलौ वर्षशतं स्मृतम्॥ या वाक्य में सत्ययुग में लक्ष वर्ष की आयुष्य कही, तब एक आयुष्य सहस्र वर्ष भोगवें। त्रेतामें दश सहस्र की आयुष्य कही तब शत वर्ष भोगवें। द्वापरमें सहस्र वर्ष की आयुष्य कहीं तब दश वर्ष भोगवें। कलिमें शत वर्ष की आयुष्य कही तब एक वर्ष की आयुष्य भोगवें। कलिमें सौको नियम नहीं तब पचास होय तो छः महीना भोगवें। पच्चीस होय तो तीन महीना भोगवें। सूक्ष्म काल होय तो सौ पल करि भोगवें। अतिसूक्ष्म काल होय तो सौ क्षण करि भोगवें। तातें सिद्धान्त यह जो आयु भोगवें बिना प्राणोद्गमन न होय, यातें आयुको कालके मुखमें ग्रास होत है। ताको दोषनिवारण को शत मनिका करिके शत भगवन्नाम लेय तो कालके ग्रासके दोष निवृत्ति होय। भगवन्नाम करके हरण भयो। या भांति जाकी आयुष्य को भगवन्नाम करिके हरण भयो, ताको भगवत्स्वरूप श्रृङ्गाररस रूप संयोगवियोग भेद करिके धर्मी द्विविध तथा धर्म भगवान के (६) (ऐश्वर्य १ वीर्य २ यशः ३ श्री ४ ज्ञान ५ वैराग्य ६) ऐसे अष्टविध भगवत्स्वरूप हृदयारूढ़ होय। और सुमेरुवत्स्वरूप हृदयारूढ़ होय। और सुमेरु में माला को सूत्र बँध्यो है।

तैसे भगवच्चरणारविन्द में मनको सूत्र बँध्यो है तो अधःपात न होय, ऊर्ध्वगति होय। "पतंत्यधोनाहृतयुष्मदंघ्रयः" इति वाक्यात्। तुलसी की माला मुख्य यातें दिव्य गंध है। देवभोग्य है, 'पत्रं पुष्पं फलं तोयं' इत्यत्र पत्रं तुलस्यादि। अथ च भक्तिरूपा, 'गोविन्दचरणप्रिये' इतिवाक्यात्। यातें तुलसीकी माला मुख्य।१।

करमाला। अनामिकाके मध्यतें प्रारंभ तर्जनी के अन्त पर्यन्त दश होंय। तर्जनी के अन्त में प्रारंभ अनामिका के मध्य में समाप्ति। या भांति गिने। मध्यमाके मध्यको तथा अन्तको दोऊ पर्व सो सुमेरु। 'पुष्टि कायेन निश्चयः' या वाक्यतें पुष्टिसृष्टि को प्राकट्य श्री अंग ते है। या सृष्टि का सेवाको अधिकार है। सेवा तो करसों है। साक्षाद्विनियोग करको हो है। तातें करमाला मुख्य।

वर्णमाला—क ख ग घ ङ, च छ ज झ ञ, ट ठ ड ढ ण, त थ द ध न, प फ ब भ म य, क आदि (२५) स्पर्शाक्षर, अन्तः—स्थाक्षर (य र ल व) उष्माक्षर (श ष स ह) संयोगी अक्षर (क्ष) स्वराक्षर १६ (अ आ इ ई उ ऊ ऋ ॠ ऌ ॡ ए ऐ ओ औ अं अः) सब मिली ५० भये। व्युतक्रमसूं गिनिये तो ५० होय। मिली १०० भये। क च ट त प य श अ ये आठ और मिलें १०८ की माला भई।

लक्ष ये दोऊ अक्षर सुमेरु "स्पर्शस्तस्याभवज्जीव: स्वरो देह उदाहृत: ।। ऊष्माणमिंद्रियाण्याहुरंत:स्था बलमात्मन:" या वाक्यतें स्पर्शाक्षर २५ शब्द ब्रह्मको जीव। स्वराक्षर १६ शब्दब्रह्मकी इन्द्रिय। अंत: स्थाक्षर ४ शब्दब्रह्मको बल। संयोगी अक्षर ज्ञ सो तो जञोर्ज्ञ: ये दोऊ स्पर्शाक्षर ही हैं। या प्रकार ब्रह्मको संबध है। तातें वर्णमाला मुख्य है ।।३।।

शुद्ध काष्ठको माला यातें प्रशस्त है, जो जामें काहू देवताको भाग नहीं, तामें सर्वेश्वर श्रीकृष्णचन्द्र है। तिनको भाग जैसें काहूकी सत्ता नही तहाँ राजा की सत्ता तैसें। अथ च "वैष्णवा वै वनस्पतय:" इति श्रुते: काष्ठ वैष्णव है। तातें यह माला प्रशस्त है। यातें शरणमत्र निवेदनमंत्रके उपदेश के पीछे काष्टकी माला देत हैं। वैष्णवत्वात् भवदीयको संग किये ।।४।।

जप करिवेके मंत्र २। शरणमंत्र १ निवेदनमंत्र २। तहाँ अष्टाक्षर शरणमंत्र को अवांतर फल सो जो यह हृदय की शुद्धि तथा आसुरभाव की निवृत्ति। "तस्मात्सर्वात्मना नित्य श्रीकृष्ण: शरणं मम ।। वदद्भिरेव सततं स्थेयमित्येव मे मति: ।। एवं वदद्भिरिति च, "श्रीविष्णोर्नाम्नि मंत्रेऽखिलकलुषहरे शब्दसामान्यबुद्धिरिति" वाक्यात्। और

मुख्य फल तो श्रवण १ कीर्त्तन २ स्मरण ३ चरणसेवन ४ अर्चन ५ वंदन ६ दास्य ७ ये प्रकारको सात भक्ति सिद्ध होय, और निवेदनमंत्रकी योग्यता होय। शरणमंत्रमें श्रीपद है सो भक्तनकों बहिर्दर्शनार्थ जो आविर्भूत तिनको स्मरण है। "कदाचित्परमसौन्दर्यं स्वगतं करिष्यामीति साकारं प्रादुर्भूतं सत् श्रीकृष्ण:" इति निबंधे। तथा भगवत्स्वरूपविषें आर्ती होय, "स्मृतिमात्रार्तिनाशन:" "वदनदिदृक्षार्तितापो जनेषु" इति वाक्यात्। शरणमंत्र के दोय फल, मंत्रमें श्रीपद है ताके आशय दोय जाननें ।।

और पंचाक्षर निवेदन मंत्र बीज है। या मंत्रको अवतार फल सख्य तथा आत्मनिवेदन भक्ति दोउ। 'भगवानेव शरणं' यह रत्याख्य कोमल बीजभाव तथा सावरण सेवा साधनरूपा प्रेमासक्तिपर्यन्त। और मुख्यफल तो व्यसन सर्वात्मभावपर्यंत फलरूपा मानसी भक्ति। द्रुमसिद्धसेवा निरावृत सिद्ध तब जब मूर्तिबुद्धि निवृत्त होय। "शृङ्गारकल्पद्रुममिति वाक्यात्। सर्वात्मभावको स्वरूप सर्वेंद्रियसंबंधी आत्मा जो अंत:करण ताको भगवानविषे भाव। सो भाव साधनरूप आधुनिक भक्तन विषे "हरिमूर्त्ति: सदा ध्येया" इत्यादि निरोधलक्षण विषे निरूपण किये। फलरूप भाव तो लीलास्थभक्तनविषें 'भगवता सह संलापा:' इत्यादि कारिकान विषे "अक्षण्वतां फलमिदं" या श्लोक में निरूपण

किये हैं। अब फलरूपा मानसोके मध्य फल ३ है। अलौकिकसामर्थ्यं सो सर्वभोग्या सुधा धर्मिरूप आनन्द ॥१॥ सायुज्यं भगवद्भोग्या सुधा धर्मभूत आनन्द प्रभु अप्रधानीभूय भक्तपरवशतें ॥२॥ सेवोपयोगिदेहो वा वैकुण्ठादिषु, देवभोग्या सुधा धर्मभूत आनन्द प्रभु प्रधानीभूत स्ववश है ॥३॥ ये तीन फल। जैसो स्वर्गफल तामध्य अमृतपानादि तद्वत् मानसी फलरूपा ता मध्य ये तीन ३ फल होंय।

यह पूर्वपक्ष जो अंतर्यामीरूप करिके तो भगवान् सबन के हृदय में हेंइ। उपदेश लेवेको आशय कहा ? तहाँ कहत हैं। बहिश्चेत्प्रकटः स्वात्मा, वह्निवत्प्रविशेद्यदि ॥ तदैव सकलो बंधो नाशमेति न चान्यथा ॥१॥ स्वात्माबहिश्चेत्प्रकटः वह्निवत् यदि प्रविशेत् तदैव सकलो बंधो नाशमेति अन्यथा न। जैसे अरणो के काष्ठ में अग्नि है पर दाहक सामर्थ्य नहीं, जब मथन करिकें वा अग्निको स्पर्श अरणीकों करिये तब काष्टांश निवृत्त करि जैसो अग्निको स्वरूप है तैसो करे। ऐसेही अंतर्यामी रूप करिके यद्यपि अंतःकरण में है तोहू बंध निवर्त्तक सामर्थ्य नहीं, तो भक्ति देके भगवत्प्राप्ति कैसें होय ? यातें गुरुपदेश मुख्य है। गुरु तो या प्रकारको शिष्य के हृदयमें स्थापन करत हैं। अंतःप्रविष्टो भगवान्मुखाधुद्धृत्य कर्णयोः ॥ पुनर्निविशते सम्यक् तदा भवति सुस्थिरः ॥१॥ ताते गुरुपदेश आवश्यक है, बिना श्री

वैष्णवीं दीक्षां प्रसादं सद्गुरोर्विना ॥ विना श्रीवैष्णवं धर्मं कथं भागवते भवेत् ? उपदेश न लेइ तो बाधक है। अदीक्षितस्य वामोरु कृतं सर्वं निरर्थकम् ॥ पशुयोनिमवाप्नोति दीक्षाहीनो मृतो नरः ॥ गुरु हू वैष्णव होय ॥ "महाकुलप्रसूतोपि सर्वयज्ञेषु दीक्षितः ॥ सहस्रशाखाध्यायी च न गुरुः स्यादवैष्णवः ॥ १ ॥ दीक्षा लेवे में कालादिक हू बाधक नाही" । न तिथिर्न च नक्षत्रं न मासादिविचारणा ॥ दीक्षायाः कारणं तत्र स्वच्छाप्राप्ते च सद्गुरौ ॥ सद्गुरु चाहिये। "कृष्णसेवापरं वीक्ष्य दंभादिरहितं नरम् ॥ श्री भागवततत्वज्ञं भजेज्जिज्ञासुरादरात् ॥ इतनें लक्षण न होंय तो हू निष्कलंक श्रीआचार्यजी को कुल है तातें यह पुष्टि मार्ग के उपदेष्टा गुरु आप ही हैं और दूसरे गुरुसों पुरुषोत्तम की प्राप्ति नाहीं।" नमः पितृपदांभोजरेणुभ्यो यन्निवेदनात् ॥ अस्मत्कुलं निष्कलंकं श्रीकृष्णेनात्मसात्कृतम् ॥१॥ मंत्रोपदेश हू लीजिये सो शरणमंत्र पीछे निवेदनमंत्र। नवधा भक्ति ये दोऊ मन्त्रनकरिकें होत है। नवधा भक्ति बिना प्रेमलक्षणा भक्ति न होय। प्रेमलक्षणा बिना पुरुषोत्तम की प्राप्ति नहीं। विशिष्टरूपवेदार्थः फलं प्रेम च साधनम् ॥ तत्साधनं च नवधा भक्तिस्तत्प्रतिपादिकं, श्रीवल्लभाचार्यमते फलं तत्प्राकट्यं इत्यादि ॥

मन्त्रोपदेश पाछें भजन हू करिये सो श्रीकृष्णचन्द्र को

ही करिये । सारस्वतकल्प में प्राकट्य है तिनको पूर्ण वेही हैं । “कल्पं सारस्वतं प्राप्य ब्रजे गोप्यो भविष्यथ । और कल्पमें श्रीकृष्णावतार पूर्ण नहीं । हरेरंशाविहागतौ । सितकृष्णकेशौ इति च । और श्वेतवाराहकल्पमें अर्जुनको गीताको उपदेश किये वा समें संकर्षणव्यूहमें पूर्ण पुरुषोत्तम को आविर्भाव हो । कालोस्मि लोकक्षयकृत्प्रवृद्धो लोकान्समाहर्त्तुमिह प्रवृत्तः इति वाक्यात् । गीता सर्वदा तो मोक्ष के लिये हैं, भक्तिके लिय नहीं । कल्पेस्मिन्सर्वमुक्त्यर्थमवतीर्णस्तु सर्वशः । इति वाक्यात् । तातें निष्कर्ष यह जो सेवनीय कथनीय भजनीय श्रीकृष्णचन्द्र ही हैं । जे सारस्वत कल्पमें पूर्ण का प्राकट्य हे तेही । श्रीभागवत में लोला पूर्ण कियें है और गीता उपदेश में हू ५७४ वाक्य कहे हैं, सोऊ पूर्ण के आवेश सों कहे हें तातें भक्तिशास्त्र सो गीता श्रीभागवत हैं । श्रीकृष्ण फलरूप के वाक्यतें गीता फलरूप और गीताको विस्तार श्रीभागवत सो हू फलरूप है । गायत्री बीजं वेदो वृक्षः श्रीभागवतं फलमिति वाक्यात् । श्रीगीता श्रीभागवत तें प्रगट भयो ऐसो जो पुष्टिमार्ग सो हू फलरूप है । पुष्टिको आविर्भाव श्रीअङ्गते है । पुष्टि कायेन निश्चयः इति वाक्यात् । पुष्टि हू फलरूप है ताते फलप्रकरणमें ‘षोडशगोपिकानां मध्ये अष्ट कृष्णा भवंति’ यातें अष्ट स्वरूप को ध्यान आवश्यक है स्वरूपभावना तें फलप्रकरणमें, प्रमाण

प्रमेय साधन फल ये च्यारों प्रकरणकी लीला फलप्रकरणमें है। कस्याश्चित्पूतनायत्या इत्यादि ॥

तहां यह पूर्वपक्ष होय जो भक्तकृत लीला है भगवत्कृत नहीं । ताको समाधान यह जो कृति भक्तनको है सो सब भगवत्कृत ही है । “तन्मनस्कास्तदालापास्तद्विचेष्टास्तदात्मिकाः ॥ तद्गुणानेव गायंत्यो नात्मागाराणि सस्मरुः ॥ इत्यादि. तच्छब्दकरिके भगवल्लीला जानिये ॥

तहाँ प्रथम स्वरूपभावना पाछें लीलाभावना पाछें भावभावना करिये । स्वरूप भावना लीलाभावना भावभावना, चेति वाक्यात् ॥

❀ श्रीनाथजी की भावना ❀

प्रथम स्वरूपभावनाको अर्थ स्वरूपस्थितिभावना । तहाँ श्रीजी स्वरूपात्मक, श्रीभागवत पूस्तक नामलीलात्मक । श्रीभागवत प्रथमस्कंध द्वितीयस्कंध दोऊ चरणारविन्द हैं । तृतीयस्कंध चतुर्थस्कंध दोऊ बाहु । पंचमस्कंध षष्ठस्कंध दोऊ जङ्घा । सप्तमस्कंध दक्षिण श्रीहस्त । अष्टमस्कंध नवमस्कंध दोऊ स्तन । दशमस्कंध हृदय । एकादशस्कंध श्रीमस्तक । द्वादशस्कंध वाम श्रीहस्त । तहां दक्षिण श्रीहस्तकी मुट्ठी-बाँधि अंगुष्ठको प्रदर्शन करावत हैं । यातें भक्तन के मन को आकर्षण करिके वामहस्त उन्नत करिकें भक्तन को आकर्षण करत हैं ।

उक्षिप्तहस्तः पुरुषो भक्तमाकारयत्युत ॥
दक्षिणेन करेणासौ मुष्टीकृत्य मनांसि नः ॥
वामं करं समुद्धृत्य ह्नुते पश्य चातुरीम् ॥१॥ इति च।

और आकारणार्थ ही निकुंजमंदिर के द्वार ठाड़े हैं। उभय विभाग के आच्छादनार्थ ओढ़नी ओढे हैं। याही तें पीठक चौखुटी है। पंचदृष्टि में सम्मुख दृष्टि हैं।

❀ अथ श्रीनवनीतप्रियजी को स्वरूप ❀

यहां बालभाव मुख्य है। तातें प्रमाणप्रकरण की लीला प्रगट हैं। और प्रकरण की लीला गुप्त हैं। अतएव गुप्तरस को प्रकार बालभाव विषे हैं। निरावृत स्वरूप रसाधायक हैं। याही तें तनीया धोती सूथन काछनी न पहिरें।

जानातं परमं तत्त्वं यशोदोत्संगलालितम् ॥
तदन्यदिति ये प्राहुरासुरांस्तानहो बुधाः ॥

श्रीहस्तविषे नवनीत हैं, सोई गायन विषें सुधा को जो दान हैं, सो सारभूत नवनीत हैं। श्रीहस्त में राखवे को तात्पर्य यह है कि जो स्वधा संबंध बिना भगवद्भोगयोग्य नहीं।

यद्यंगनादर्शनीयकुमारलीला इत्यत्र अंगं नयतीत्यंगना।

भक्त सेवानुकूल है। प्रभु कुमार हैं। कुत्सितो मारो यस्मात् अतएव मदनगोपाल नाम याहीतें हैं॥

❀ अथ श्रीमथुरानाथजी को स्वरूप ❀

प्रमेयप्रकरण प्रथमाध्यायकी लीला प्रगट, और प्रकरण को लीला गुप्त है। अतएव ब्रज में चतुर्भुज स्वरूप कौन प्रकार ? नंदकुमार तो द्विभुज हैं। परंतु पुष्टिस्वरूप में हूँ चतुर्भुज हैं। ताको आशय। पुष्टिकार्य रूप क्रियाचतुष्टय हैं, स्वानंद दान १, स्वानंददानविषे जो प्रतिबंध ताकों निवारण २, स्वसेवा ३, आधिदैविक भाव को परम्परा उद्‌वोधन ४। तहां स्वानंददान तो ब्रज में ही पधारत हैं तब श्रीमुखांमृत लावण्य को पान करावत हैं ॥ १ ॥ प्रतिबन्ध को निवारण सो विरहजन्य जो ताप ताको शमन ॥ २ ॥ स्वसेवा सन्ध्या भोगादिक को स्वीकार ॥ ३ ॥ आधिदैविक भावको परम्परा उद्‌बोधन सो वन में चतुर्दश रसको लोला किये सो स्थायो भाव प्रत्येक रसन के प्रगट करि व्रजीयन विषें उद्बोधन करनों ॥ ४ ॥ नवरस के स्थायी भाव तो नव होंय। भक्तिरसको स्थायी भाव रति है। चतुर्विध पुरुषार्थ के स्थायी भाव अलक हैं। च्यारों अलक में हैं, "गारजश्छुरितकुन्तलं इति।" या प्रकार १४ चौदह रसके स्थायी भाव जानीये। और आयुध धारण को आशय। शङ्ख, चक्र, गदा, पद्म, या क्रम सों धरें। सो मधुसूदन स्वरूप कहावें। तंत्र में कहे हैं। पुष्टि में तो :'मधुसूदनरूपत्वं गजराजविहारिणः" इति वाक्यात्। गजवत् विहारलीला है। निचले दक्षिण

श्रीहस्तमें शंख है ताको अवांतार भाव आसुरगर्वनिवृत्ति ।

विष्णोर्मुखोत्थानिलपूरितस्य यस्य ध्वनिर्दानवदर्पहता इति

शंख कहे हैं तातें आयुध । आयुधको मुख्य भाव त ग्रीवा की आकृति । ऊपर दक्षिण श्रीहस्तमें पद्म है ता अवांतर भाव तो जापर धरें तापर चौदह भुवनको भार पर्यो तब दबि जाय, "भुवनात्मकं कमलं" इति वाक्यात् । जैं काहूपर एक भीति परे तो दबि जाय ताकी कौन व्यवस्था तैसे चौदह भुवन पडे तो कहा कहबे में आवें ? तातें प आयुध है । मुख्य भाव तो श्रीमुख की आकृति । ऊपर वा श्रीहस्त में गदा है ताको अवांतर भाव तो अस्त्र को तेज निवारण करत है । "अस्त्रतेज: स्वगदया" इति । मुख्य भा तो भुजाश्लेष है । अवष्टंभ है निचले वाम श्रीहस्त में च है ताको अवांतर भाव तो जाकों मुक्ति देनी होय ताको च सों मारें । "ये ये हता: चक्रधरेण राजन् इति ।" औ मुख्य भाव तो कङ्कणाकृति है ।

प्रियाभुजाश्लिष्टभुज: कङ्कणाकृतिचक्रक: ।
कम्बुकण्ठोद्धृतभुजो लीलाकमलवेत्रधृक् ॥

मुख्य भावके आशय को प्रमाण लिखे हैं । दिवस मै वन गमन तब होत है जब ये पदार्थ भाव सूचक हैं । याही तें आयुध के स्वरूप मूर्त्तिमन्त भगवद्भावाविष्ट पुरुष रू च्यार हैं । और मर्यादापुष्टिभेद करिकें ऐश्वर्यादिक के स्वरू

मिलि ६ है । याही तें पीठक गोल है । मुकुट पर ओढनी है ।

❀ अथ श्रीविट्ठलेशराय जी को स्वरूप ❀

फलप्रकरण के दितीयाध्याय की लीला प्रकट है और प्रकरण की लीला गुप्त है ।

पुन: पुयिनमागत्य कालिद्या: कृष्णभावना: इति वाक्यात् ।

कालिंदी स्व स्वरूपको दर्शन कराये तब भक्तन कों भाव स्फूर्ति भई ।

भगवान् विरहं दत्वा भाव वृद्धि करोति हि ।
तथैव यमुना स्वामिस्मरणात् स्वीयदर्शनात् इति च ।

प्रथम मुख्य स्वामिनी विषें आसक्ति भर करिकें तद्रूप करिकें गौर तो हते ही, फिरि श्रीयमुनाजोको भगवद्भावाविष्ट स्वरूप देखिकें मोहित भये । तदनन्तर सात्त्विक भावाविष्ट कमल सदृश जो नेत्र तिनके कटाक्ष करिकें श्यामता हू स्वस्वरूप त्रिषें प्रदर्शित होत हैं, तातें गौरश्याम हैं ।

स्वामिनीभावगौरस्य स्वस्वरूपं प्रपश्यत: ।
कटाक्षैर्विट्ठलेशस्य श्यामताचित्रितं बपु: इति ।

शृङ्गाररसात्मक भगवत्स्वरूप संयोग वियोग भेद करिके उभयात्मक । विरुद्धर्मश्रिय ब्रह्म तें हू गौरश्याम है ।

रसस्य द्विविधस्यापि स्वरूपे बोधयन् स्थितम् ।
ऐक्यं विरुद्धधर्मत्वाद्गौरश्यामः कृपानिधिः ॥

रस परवश तें ही कटिभाग पर दोऊ श्रीहस्त हैं ।

समधादाम्बुजं सूक्ष्मं कटिलग्नभुजद्वयम् ।
किरीटिनं लसद्वक्त्रं विट्ठलेशमहं भजे ॥

अतएव वाम श्रीहस्त में सच्छिद्र शंख हैं । ध्वनि तें बिरुद्धधर्माश्रय भगवत्स्वरूप है यह द्योतित करत हैं । और भक्तवृन्दमें जो निजांगीकृत हैं तिनको उभय भाव करि गौर श्याम हैं यह द्योतित करत हैं। अतएव एक चरणारविन्द में आभरण हैं एक में नहीं ॥

❀ अथ श्रीद्वारिकानाथजी को स्वरूप ❀

प्रमेयप्रकरण की सप्तमाध्याय की लीला प्रकट है। और प्रकरण की लीला गुप्त है। अतएव चतुर्भुज ब्रज में प्रमेय बल करि हैं । रहस्यलीला विषें सखीबृन्द में मुख्य स्वामिनी बिराजत हैं । तहां भगवत्संबंधी सखी मुख्य बैठी हैं। इतने में प्रभु पधारे । तब स्वकीय सखी को समस्या सों वरजिकें । पीछेतें पधारें । दोऊ श्रीहस्त सों नेत्र निमीलन किये । दूसरे दोय श्रीहस्त सों वेणुकूजन करि भाषण किये जो कौन हैं ? यों जताये तो वेणुकूजनतें प्रेमोपत्ति है। 'चुकूज वेणुम्' इति वाक्यात् ।

भ्रूवल्लीसंज्ञयादौ सहचरिनिकरं बर्ज्जयित्वा स्वकीयं ।
पश्चादागत्य तूष्णीमथ नयनयुगं स्वप्रियाया निमील्य ॥
कोस्मीत्येतद्वचनमसकृद्वेणुना भाषमाणः ।
पातु क्रीडारसपरिचयस्त्वां चतुर्बाहुरुच्चैः ।।१।।

याहातें आयुधधारणको हू प्रकार यहाँ या भांति । निचले दक्षिण श्रीहस्तमें पद्म सो प्रिया पाणि है । नेत्र निमीलन छुड़ावत हैं । ऊपर दक्षिण श्रीहस्त में गदा है सो प्रिया अद्भुतलीला देखि आश्लेष करत हैं । ऊपर वाम श्रीहस्त में चक्र है सो प्रिया के कंकणादिक के स्पर्श तें क्षत सूचित होत हैं । निचले वाम श्रीहस्त में शंख है सो प्रिया के सन्मुख तें ग्रीवाको स्पर्श होत हैं । याही तें यहाँ आयुध के स्वरूप मूर्तिमय चार हैं । प्रिया के आविर्भाव विशिष्ट स्त्रीरूप है । अतएव पीठक चौखूँटो हैं । प्रिया विशिष्ट है ॥

❀ अथ श्रीगोवर्धनधर को स्वरूप ❀

साधनप्रकरण की लीला प्रगट है और प्रकरण की लीला गुप्त है । श्रीगोवर्द्धनाथजी के उद्धरण को स्वरूप, आपु तो हरिदासवय हैं । जब प्रभु पधारें तब आपतें ठाडे हाय रहें । तो दास्यधर्मत्वात् । और डांडी चाहियें सो

कबहू प्रभु वाम श्रीहस्त में ऊँची करें । जब प्रभु वेणुनाद करें । तब आलंबन सो आश्लेष है । तब इन्हीं को दक्षिन श्रीहस्त ऊँचो होत है । इनके वाम श्रीहस्त में शंख है सो अच्छिद्र है, ताको आशय । जो शंख है सो जल को तात्त्विक रूप है । 'अपां तत्त्वं दरवरमिति वाक्यात् ।' जितनी वृष्टि भई सो ता जलको आधिदैविक यह शंख है, तामें सब वृष्टि के जल को आकर्षण करें । जलको आधिदैविक संबंध भयो, तब भोग योग्य भयो । तातें याको पान कियो । अतएव शंख वाम श्रीहस्तमें हैं । झारी बांई ओर ही रहे । याही तें इन्द्रको अपराध क्षमाकर प्रसन्न भये । नंदादि प्रभृति भोग सामग्री समर्पे । इन्द्र जल की सेवा कीये, और परिकर सब एकत्र किये । 'न तु ब्रह्मा ।' जैसे प्रक्षिप्ताध्याय में वत्सहरणलीलाविषे परिकर भगवान तें जुदो किये । तातें अप्रसन्न भये । और इन्द्र परिकर इकठौरो किये तथा जल की सेवा किये । तातें प्रसन्न भये । कमल पर ठाडे हैं ताको आशय । जैसे जल को अनुभव करिके कमल बाहर आयो तब विकास १, आमोद २, लक्ष्मीनिवास ३, ये तीन गुणकों आरंभ भयो, तैसे ब्रह्मानंद को अनुभव करिकें बाहिर जब आये तब भजनानंद को अनुभव भयो । तहां इनके अवयव को विकास और वाको रूप जो हैं पुष्प, तिनमें अर्थ सो आमोद, तब प्रभु उत्तरीय पर बिराजें । यह लक्ष्मी निवास ।।

❀ अथ श्रीगोकुलचन्द्रमाजी को स्वरूप ❀

फलप्रकरण के चतुर्थाध्याय की लीला प्रगट और प्रकरण की लीला गुप्त है । 'साक्षान्मन्मथमन्मथः इति वाक्यात् ।' अपने स्वरूपमात्र करिकें कंदर्प जो कामदेव है ताकों जीते ।

सालिकुलं कमलकुलं जितं निजाकारमात्रतो जगति ।
प्रकटातिगूढरसभरजितोऽभवत्कुसुमशरकोटिः इति ।।

त्रिमंगललित ग्रन्थ है सो इन्हीं स्वरूप को वर्णन है, तहां त्रिभंग सो तीन अङ्ग वक्र हैं । पद, कटि, ग्रीवा, ये तीन अंग । तहाँ पद तो वाम चरण को स्थापन सो पुष्टि को स्थापन है । दक्षिण उन्नत है सो मर्यादा को उल्लङ्घन है । यत्किंचित् अंगुलिन की स्थिति है ताको आशय जो मर्यादा की रीति हैं सो पुष्टि को आशय करत है ।

पुष्टिभक्तिस्थितिं कृत्वा मर्यादां च तदाश्रितां इति वाक्यात् ।

कटि तथा ग्रीवा नमित हैं, यातें जो और पात्र में रस स्थापतों होय तो भरित पात्र नमित होय तब और पात्र में आवें ।

रसभरभरितं पात्रं नामितमन्तत्र तं रसं कर्तुम् ।

वेणुके रंध्र ७ सातको स्वरूप—धर्म ६, विशिष्ट धर्मी १ दक्षिण श्रीहस्त अभय करत हैं । भजन विषें ३ प्रश्नको

उत्तर देय । भक्तन के भजन की स्तुति किये । ऐसो भजन किये जो बहुत काल पर्यंत भजन तुम्हारो करिये तोहू पार न आवे । “न पारयेहं निरवद्य ेति ।” तर्जनी को अंगुष्ठ को स्पर्श है । मध्यमा अनामिका कनिष्टिका ये ऊर्ध्व हैं । ये नृत्य को भाव है ।

यतो हस्तस्ततो दृष्टिर्यतो दृष्टिस्ततो मनः ।
यतो मनस्ततो भावो यतो भावस्ततो रसः ॥

यह नृत्य सामयिक (नृत्यसमयको) स्वरूप है यातें रासोत्सवको प्रकार यहां ही जानिये । वेणुस्थिति दोऊ श्रीहस्त के अवयव मध्य में होय । दृष्टि दक्षिण परावृत्त होय, भूमिपर कृपाअवलोकन हैं । वेणुनाद ५ प्रकार को है, तामें यहां दक्षिण हैं । स्त्रीपुरुष सबन को भावोद्‍बोधक है ।

देवांगना उच्चैरधरितरश्चां वामपरावृत्तो देवस्त्रीणाम् ।
स्त्रीणां पुरुषाणां च दक्षिणः समतया सर्वेषामचेतनानाम् ॥

या भांत पांच प्रकारको वेणुनाद पंचदृष्टिसंयुक्त है । जैसे वेणुनाद पंचदृष्टि युक्त है तैसे पृथिव्यादिक की तन्मात्रा हू प्रिय है । तिनको स्वरूप कहा ? (ताको अभिप्राय रूप, रस, गंध, स्पर्श, शब्द, यह तन्मात्रा तेज, जल, पृथ्वी, वायु, आकाश की है) ताको स्वरूप, रूप, नील प्रिय है, शृङ्गाररूपत्वात् ।

रसो नवनीतस्य सुधासंबंधत्वात् । गंधस्तुलस्या दिव्यगंधत्वात् । स्पर्शःस्त्रीणां सुधाधारत्वात् । शब्द वेणुको प्रथमसुधाधारत्वात् ॥ ५ ॥

मल्लकाछको स्वीकार है सो गायनको आह्वान सुधादानार्थ है ।

बर्हिगस्तवकधातुपलाशैर्बद्धमल्लपरिवर्विडंवः ।
कर्हिचित् सबल आलि सगोपैर्गाः समाह्वयति
यत्र मुकुंदः ॥ १ ॥

यह अलौकिक वेष देखिकें नदीनकों हू स्पृहा भई । तर्हि भग्नगतयः सरितो वै इति । वेणुनाद वामाश्रित होय तो करत हैं । ताहींतें दक्षिण श्रीबाहूमें बाजूबंद नहीं । सिंहासनपर ठाडे हैं । द्विशिखि तकिया है । सो कटितांई को स्पर्श कियो है । सो तकिया नहीं, किंतु आलंबन उद्दीपन दोऊ विभाग है । किंतु ललितत्रिभंग ग्रन्थ के मंगलाचरण में आत्मनिवेदन कह्यो है, ताको आशय । जो श्रीमदाचार्यजी को श्रीगोकुल में ब्रह्म संबंध की आज्ञा भई है, सो याही स्वरूप करिके हैं ।

नमः पितृपदांभोजरेणुभ्यो यन्निवेदनात् ।
अस्मत्कुलं निष्कलंकं श्रीकृष्णेनात्मसात्कृतम् ॥

और श्रीमधुराष्टक को हू प्रागट्य याही समय के स्वरूपको है । पधारत ही ब्रह्मसम्बन्ध को आज्ञा किये सो श्रीमुख को दर्शन पहले ही भयो, यातें ।

"अधरं मधुरं बदनं मधुरं नयनं मधुरं हसितं मधुरम्।
हृदयं मधुरं गमनं मधुरं मधुराधिपतेरखिलं मधुरम् ।१।"

तातें मधुराधिपति हू यहां स्वरुप जानिये ।

❀ अथ श्रीमदनमोहनजी को स्वरूप ❀

फलप्रकरण की प्रथमाध्याय की लीला प्रगट और प्रकरण की लीला गुप्त है । वेणुनाद करिकें भक्तन को आकर्षण किये तब भक्तन प्रति जो कहें ।

स्वागतं बो महाभागाः प्रियं किं करवाणि वः ।
व्रजस्यानामयं कच्चिद्व्रजतागमनकारणम् ॥
रजन्येषा घोररूपा घोरसत्त्वनिषेविता ।
प्रतियात व्रजं नेह स्थेयं स्त्राभिः सुमध्यमाः ॥

ये गमनवाक्य है सो याही स्वरूपकरिके हैं । दक्षिण श्रीहस्तको अंगुरी मध्यमा तथा अनामिका इन दोऊन सों करतल को स्पर्श है तातें गमन । अभय करत होय तो करतल को दर्शन होय, तब आगम सूचित होय । यह वाक्य श्रवण करि भक्तन को एक वेर तो महाचिन्ता भई । प्रभु कहा त्याग किये ? फिरि वाक्य विचारे, तव सुमध्यमा यह पद है । ता करिकें भक्तन के भाव देखि मोहित भये यह जाने । तब श्रीमुख देखत ही संपूर्ण श्रीअङ्ग गौर देखे, तब तन्मयता निश्चय भई । ता पीछे चरणारविन्द में

पादुका को प्रदर्शन भयो । यह अन्तराल है । भूमि को स्पर्श नहीं जो अन्तराय होय ताको स्पर्श समान है । जैसें मोजा । अङ्गराग लगाये होय चरणारविन्दकों,तब जो स्पर्श करिये तो स्पर्श को चन्दन को भयो । पर वह अङ्गराग चरणारविन्द ही है। यह अन्तरायमात्र ही है पर अन्तराल नहीं । कांहेतें ? मध्य आकाश नहीं । तातें पादुका अन्तराल हैं तातें यह वाक्य व्यङ्ग है । "वाक्यपर्यवसायी मत हो यह निष्कर्ष" वाक्य मर्यादा है । चरणारविन्द साधनभक्तिरूप है । तातें मर्यादा जो हैं सा भक्तिसंवलित होय तो भक्त स्वीकार करे हैं और भक्तिसंवलित मर्यादा न होय तब स्वीकार नहीं । तातें यह वाक्य जब श्रीअङ्ग को सुखद होय तब स्वीकार करिये । अतएव दक्षिण चरणारविन्द की अंगुरीको स्पर्श मात्र पादुका को है । ऐसे चरणारविन्द के दर्शन तें दास्य की स्फुर्ति भई । तब फलरूप जो भक्ति श्रीमुख ताको दर्शन भयो । तब दास्यरूप जो धर्म ताके आगे चतुर्विध जो मुक्ति सो तुच्छ है । अलकावृत श्रीमुख देखिकें सारुप्य मुक्ति को प्राप्त जो अलक, सो भक्ति को आश्रय करत हैं । तब सारुप्यमुक्ति करिके कहा ? दोऊ कुंडल यागसांख्यरूप होय समीप्यमुक्ति को प्राप्त है । यद्यपि अत्यन्त नैकट्य है, भक्ति को आश्रित है, तब सामीप्य मुक्ति तें कहा ? सालोक्य मुक्ति में अक्षरानंदानुभव है, सो गंडस्थलयुक्त जो अधर

ता रस के आगे अन्यरस तुच्छ है । तब सालोक्यमुक्ति करिकें कहा ? सायुज्यमुक्ति में ब्रह्मानन्दानुभव है । सो हास्यपूर्वक जो अवलोकन तामें भक्तिरस है । याके आगे ब्रह्मानंद तुच्छ है । जले निमग्नस्य

जलपानवत् तब सायुज्यमुक्तिसों कहा ?
वीक्ष्यालकावृतमुखं तव कुंडलश्री ।
गंडस्थलाधरसुधं हसितावलोकम् इति वाक्यात् ।।

जब ऐसो भक्तन को भाव देखें हैं, आत्माराम तो हू रमण किये । "आत्मारामोप्यरीरमत इति ।।"

यह अष्ट स्वरुप को निरूपण किये हैं । यह आठों स्वरूप धर्मी जानिये ।। और गोदके ६ छ स्वरूप हैं । तहाँ दशमके सप्तमाध्यायमें—

यच्छृण्वतोपैत्य रतिर्वितृष्णा सत्त्वं च शुध्यत्यचिरेण पुंसः । भत्तिर्हरौ तत्पुरुषे च सख्यं तदेव हारं वद मन्यसे यदि ।।

यहां राजाके पाँच प्रश्न हैं । तहाँ शुकदेवजीजी कहे, इन लीला के श्रवण पहिलें श्रीमातृचरण को निरोध किये हैं । सो लीला कहत हैं । सो शकटभंजन लीला है । तीन महीना के भये तब औत्थानिक लीला है । यह लीला श्रीद्वारकानाथजी के पास के ठाकुर जी श्रीबालकृष्णजी हैं तहाँ यह लीला प्रगट है, और लीला गुप्ता है ।

और श्रीमथुरानाथजी के पास के श्रीनटवर जी हैं । तहाँ तृष्णावर्त्त के प्रसङ्ग की लीला प्रगट है । वर्ष एक के भये हैं । या लीला के श्रवण तें आर्ति को निवृत्ति होय ।।

और श्रीनवनीतप्रियजी के पास श्रीबालकृष्ण जी तथा श्रीमदनमोहन जी हैं । तहाँ जृंभालीला तथा सत्वशुद्ध यह लीला प्रगट है । या लीला के श्रवण तें भक्ति होय, वितृष्णा निवृत्त होय, सत्त्व जो अन्तःकरण ताकी शुद्धि होय ।।

और श्रीगोकुलचन्द्रमाजी के पास श्रीबालकृष्ण जी तथा श्रीमदनमोहन जी हैं । तहाँ उलूखल बन्धन तथा नलकूबर मणिग्रीव को उद्धार किये, यह लीला प्रगट है । या लीलाके श्रवणतें भक्ति होय तथा भगवदीयन को सङ्ग होय ।

या प्रकार ६ स्वरूप गोद के हैं, तिनके स्वरूप को निरूपण किये । भगवल्लीला नित्य है, स्वरूपात्मक है, तातें ये ६ लीला के ६ स्वरूप कहे । ये लीला प्रमाणप्रकरण के अन्तार्भूत है । तातें ये ६ स्वरूप गोद के कहवाये । तातें ये ६ स्वरूप लीला कों विषद करिकें "यच्छृज्वतोपैत्य रतिर्वितृष्णा" या श्लोकको सुबोधिनीमें कहे हैं । यहां विस्तार के लिये नहीं लिखे हैं । तातें ये अष्ट स्वरूप तथा गोद के छः स्वरूप दत्तदृष्टि होय के भावना करिये । यहां

तांई स्वरूपभावना कहे। जैसी स्वरूप की स्थिति हैं ता प्रकार कहे ॥

❀ अब लीला भावना लिखत हैं ❀

लीलाभावना जो, लीलास्थ जो भक्त तिनकी भावना। तहां प्रथम वामभागस्थ श्रीस्वामिनीजी विराजत हैं तिनको स्वरूप। शृङ्गाररस भगवत्स्वरूपको आलम्बन विभाव। गौर स्वरूप है सो शृङ्गाररस को उद्बोधक है। शृङ्गार श्याम है गौर उद्बोधक है। "श्यामं हिरण्यपरिधि' या श्लोक की सुबोधिनी में शृङ्गार श्याम है, गौर उद्बोधक है यह कह्यो है। अवतारलीला विषे श्रीवृषभानुजा है सो मुख्य सुधाकार है ताको आधार है। भगवत्प्रादुर्भाव के दोय वर्ष पहिले प्रागट्य है। प्रादुर्भावानन्तर जब दूसरो उत्सव आयो तब सुधा को आविर्भाव भयो। तातें कहें 'जो सुख नन्दभवन में उमग्यो तातें दूनो होयरी।' और 'पाँच वरसके श्याम मनोहर सात वरसकी वाला' इन दोऊ कीर्त्तनकी या भांति एकवाक्यता है। प्रागट्य दोय वर्ष पहिले है। भगवत्प्रादुर्भावानन्तर सुधाविर्भाव है सो शृंगाररसात्मक जो भगवत्स्वरूप तिनकी सारभूत सुधा है। और शृंगार श्याम हैं तातें नीलांबर प्रिय है। दक्षिणभागस्थ श्रीस्वामिनीजी बिराजत हैं। तिनको स्वरूप। शृङ्गार रस स्वरूप जो

भगवत्स्वरूप है तिनको उद्दीपन विभाव है। आरक्त स्वरूप है सो रसको उद्बोधन है। गौर स्वरूप शृङ्गार को उद्बोधक है। अतएव हाथी दांतके खिलौना वाम भाग रहें, लाल खिलौना दक्षिण भाग रहें। श्याम गौरको जौ उभयत्र प्रीति है सो मूर्तिमंत यह स्वरूप है। कीर्त्तन में हू कहे हैं। 'तटतरंगिनी निकट तरनिक तट मृदुल चंपकवरनी दक्षिन प्रोति वामभाग जोरी कर्वरी।' प्रीतिको कथन शब्दात्मक है। शब्दको मूल तौ वेद, वेदमूल गायत्री। सो गायत्री रूप ब्रह्म आपही होत भये।

'श्रीकृष्णः स्वात्मना सर्वमुत्पाद्य विविधं जगत्।
तदासक्तावबोधाय शब्दब्रह्माभवत्स्वयम् ॥
तत्र सर्गादिभिः क्रीडन् नित्यानंदरसात्मकः।
निजभावप्रकाशाय गायत्रीरूप उद्वभौ' इतिवाक्यात् ॥

तातें गायत्रीरूप हू यही है। अतएव नाम श्रीचन्द्रावली जी चन्द्र में नियत श्याम कला हैं, गौरकला हैं यातें नाम यह है। और नाम अपर श्रीस्वामिनीजी है, सखी नहीं, तातें दक्षिण भाग में सदा ही विराजें। पोढेऊ ऐसें। शृङ्गार हू दोऊ भाग को एक भांतिको होय।

❀ अब श्रीयमुनाजी को स्वरूप ❀

कहत हैं। तुर्य प्रिया, सो चतुर्थप्रिया, सो या प्रकार। कितनेक भक्तनको व्रजलीला में अंगीकार है, जैसें नन्दादिक

प्रभृतिनको। कितनेक भक्तनको राजलीला में अंगीकार हैं, जैसे वसुदेव प्रभृतिनको। कितनेक भक्तन को उभय लीला में अंगोकार है, जैसें कुमारिकान को। उत्तरार्ध में 'बलभद्रप्रियः कृष्णः' या अध्यायको सुबोधिनी में कुमारिकान को पुराणांतर संमति देयके द्वारकानयन लिखें हैं। याही तें वहां गोपींचन्दन तो तब भया जब कुमारिकान को नयत है। तैसे कालिंदी चतुर्थप्रिया है और व्रजलीला में श्रीयमुनाजीं हैं। या प्रकार उभयलीलाविशिष्ट हैं, तातें तुर्यप्रिया है। कदाचित् या प्रकार कहिये जो नित्यसिद्धा को एक यूथ १ श्रुतिरूपा को एक यूथ १ कुमारिका को एक यूथ १ श्रीयमुनाजीं को एक यूथ १ या प्रकार तुर्यप्रिया जो कहिये तो श्रीयमुनाजी को अंगीकार पहिले, श्रुतिरूपा कुमारिका को नहीं। श्रीयमुनाजीं व्यापि वैकुण्ठ में हैं, इनकीं रेणुका की प्रतिनिधि कात्यायनी किये, तब कुमारिकान कों साधन सिद्ध भयो, और श्रुतिन को हू दर्शन भयो है। तहां कहत हैं "यत्र निर्मलपानीया कालिंदीं सरितांवरा।" तातें प्रथम प्रकार सोई तुर्यप्रियातें सिद्ध होत है।

और अष्टसिद्धि है सो प्रभु श्रीयमुनाजी को दिये हैं। साक्षात्सेवोपयोगीदेहाप्ति १ तल्लींलाऽवलोकन २ तद्रसानुभव ३ सर्वात्मभाव ४ भगवद्वशींकरणत्व ५ भगवत्प्रियत्व भगवत्तात्पर्यज्ञत्व ६ भक्तिदातृत्व ७ भगवद्रसपोषकत्व ८ यह अष्ट सिद्धि श्रीयमुनाष्टकके प्रत्येक आठों श्लोक करि तिरूपित हैं।

तच्चैश्वर्यमष्टविधम् बस्तुतस्तु अष्टविधानां।
सिद्धीनामैश्वर्यं स्वामित्वं तद्दातृत्वं चेत्यर्थः॥

मूलस्थसकलसिद्धिपदस्यार्थेयम् तथा च सकलानामष्टविधानामपि। सिद्धीनां हेतुः, तद्दात्रींति मूलार्थंः ताः सिद्धिराहुः साक्षादिति॥

तत्र प्रथमश्लोके रेणूनामुत्कटत्वोक्त्वा आद्या सिद्धिरुक्ता।
द्वितीये व्रजजनानुगत्युक्त्या लोलाबलोकनमित्युक्तम्।
तृतीये तुरीयप्रियात्वकथनेन तृतीयोक्ता॥
चतुर्थे समानधर्मकथनेन चतुर्थसिद्धिरुक्ता।
एतादृशः सर्वात्मभावो येन तादृूप्यमेव सम्पन्नमित्यर्थः॥

पञ्चमे भगवतो वशीकरणं यया, तत्त्वमेतादृशं येन।
चरणपद्मजाप्येतत्समागमनात् प्रिया जातेति पंचमसिद्धिरुक्ता॥
षष्ठे स्वपयःपानमात्रेण यमयातनाभावरूपं।
स्वसेवनेन भगवत्प्रियत्वकरणरूपं यच्चाद्भुतचरित्रं॥
भगवत्तात्पर्यं ज्ञात्वैगं करोतीति षष्ठी सिद्धिरुक्ता।
सप्तमे तनुनवत्वोक्त्या भक्तिदातृत्वाख्या सप्तमी सिद्धिः॥
अष्टमे श्रमजलसंगमकथनेन भगवद्भावबोधकत्वरूपा।
भगवद्रसपोषकत्वमष्टमी सिद्धिरुक्तापड्गुण विशिष्टधर्मी॥

यह सप्त विधत्व हू है। 'अनंतगुणभूषिते' यामें कहे हैं। जलतें यमयातनानिवृत्ति, रेणुतें तनुनवत्व, जलरेणु अधिक

फलसंपादक है। स्मरणश्रमजलाणुभिः यह जलरेणु हू तें अधिक। जलादपि रजः पुण्यं रजसोपि जलं वरम् ॥ "यत्र वृन्दावनं तत्र स्नातास्नातकथा कुतः ॥" यह अष्टसिद्धि श्री यमुनाजीको दान किये है इतनोही नहीं, किंतु यह अष्टसिद्धि के दाता हू आप हैं। पहिले श्रीगङ्गाजी में दर्शनमात्र तें ब्रह्महत्यादिक पातक निवृत्ति को सामर्थ्य हतो चरणस्पर्श तें, श्रीगङ्गा जी दर्शन ते 'ब्रह्महत्यापहारिणी' इति। और श्रीयमुनाजी के स्मरणमात्र तें पातकमात्र को निवृत्ति होय। "दूरस्थोपि स पापेभ्यो महद्भयोपि विमुच्यते" इति। अब इनके संगतें 'मुररिपोः प्रियंभावुका' भई तथा सकलसिद्धि दाता भई। याहीतें अलौकिक आभरण कहें।

तरंगभुजकंकणप्रकटमुक्तिकावालुका ।
नितम्बतटसुन्दरी नमत कृष्णतुर्यप्रियां ॥

ये हू स्वामिनीजी हैं सखी नही। श्यामरूप है सो शृङ्गाररूप है इनको हू यूथ पृथक् कहें। जैसे श्रीवासुदेव के मूलभूत श्रीकृष्णचन्द्र तैसें कालिन्दी के मूलभूत श्री यमुनाजी ॥

❀ अथ श्रीमदाचार्यजी को स्वरूप ❀

श्रीकृष्णचन्द्र के आस्य हैं। प्रभु विचारे जो स्वकी नि माहात्म्य हैं सो भूमिविषें दैवीप्रति तुम्हारे प्राकटय बि प्रकट न होइ, तातें तीन प्रकारसों प्रगट होऊ। यह आज्ञा

भई। प्रथम तो सन्मनुष्याकृति ऐसो स्वरूप देखिके प्रेमपूर्वक दैवी जीव शरण आवेंगे। और दूसरी आज्ञा अतिकरुणावंत होऊ, तब दैवी जीवन सूं निकट आयो जाय, तब उपदेश लेइ। और तीसरी आज्ञा हुताश होउ, जे शरण आवें, उपदेश लेत हैं तब उनके पाप निकसि के गुरुके सन्मुख आवत हैं, जो गुरु तेजस्वी होय, तो दाह करे, यातें हुताश जो अग्नि तद्रूप होय जनके पाप दाह करो। या प्रकार दैवी में जे पुष्टिसृष्टि है तिनको आसुरभाव भयो है। सृष्टि प्रक्रिया के प्रारम्भ ही दैवी जीव तें आसुरी जीव जब जुदे भये, तैसें इन्द्रिय हू दैवी तथा आसुरी भई। तब आसुर जीव हतो सो दैवी जीव पास आयके कह्यो, जो मेरो हू गान करो। तब दैवी जीव कह्यो यो "यदंशः स तं भजेत्, में भगवदंश हू, भगवद्गान करूंगो। तब दैवी जीवको पाप वेध न भयो। तब आसुरी जीव दैवी इन्द्रिय पास गयो। उनको भयत्रस्त करिके कह्यो, जो मेरो गान करो। तब देह तो दैवी जीव की नहीं, जो इन्द्रिय प्रविष्ट हो जाय। तब इन्द्रिय समय होय आसुर जीवको गुनगान कियो, तब दैवी इन्द्रियनको पाप वेध भयो।। यातें दैवी जीव शुद्ध तथा देह शुद्ध। इन्द्रियन में द्वैविध्य। आप दैवी, आसुरके गानतें आसुरभाव सहित। यह मूलदोष है। यह निरूपण "द्वयाह प्राजापत्याः" या श्रुति में कह्यो है। द्वैवा ह्यर्थभेदात्, या सूत्रमें व्यासजी

निरूपण किये है। ऐसें सूत्रमें दोषग्रस्त है। यह दोष निवारण तब होय जब तुम्हारो प्राकटय होय।

और उद्धारक हू वेई, जिनके अलौकिक आभरण होंय। सो अलौकिक आभरण तीन ठौर हैं। श्रीकृष्णचन्द्र विषें हैं। "उद्दामकाँच्यंगदकंकणादिभिः" उद्दाम जो डोरा तद्रहित कांचा रहें क्यों ? जो यातें लौकिकसूत्राभाव कहे। श्री यमुनाजी विषें कहें।

तरंगभुजकंकणप्रकटमुक्तिकावालुका ।
नितंबतटसुन्दरी नमत कृष्णतुर्य्यप्रियाम् ॥

यह दोऊ सिद्धसाधन जे लीलास्थ भक्त है तिनके उद्धार श्रीमदाचार्यजीविषें हैं।

अप्रकृताखिलाकल्पभूषितः ।
श्रीभागवतप्रतिपदमणिवरभावांशुभूषिता मूर्तिः ।
साधनरहित जे दैवी जीव आधुनिक तिनके उद्धारक है।
भगवान्विरहं दत्वा भाववृद्धिं करोति वै ।
तथैव यमुना स्वामिस्मारणात् स्वीयदर्शनात् ॥
अस्मदाचार्यवर्य्यस्तु ब्रह्मसंबंधकारणात् ।
तापक्लेशप्रदानेन निजानां भाववर्द्धकाः ॥
त्रयाणां सजातीयत्वं सिद्धम् ।

आधुनिक भक्तन को उद्धार तब ही होय जब श्रीमदाचार्यजी को दृढ आश्रय होय। श्रीमदाचार्य जी भूलोक

प्रगट होय विचारें। भगवदाज्ञा यों है जो दैवोजीवन को उद्धार करो। नवधा भक्ति बिना प्रेमलक्षणा भक्ति नही होय। प्रेमलक्षणा भक्ति बिना पुरुषोत्तम की प्राप्ति नहीं होय। नवधा तो एक एक कठिन है। राजा परीक्षित सरीखो होय तब मर्यादामार्गीय श्रवण भक्ति होय। पुष्टिमार्गीय श्रवण भक्ति तो याहूतें आगे है। तहाँ श्रवणादि सात भक्ति तो भक्तनिष्ठ हैं। दोय भक्ति भगवन्निष्ठ हैं। सात भक्ति तो शरणमन्त्र तें सिद्ध हैं। "सर्वधर्मान्परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज। "तस्मात्सर्वात्मना नित्यं इति वाक्यात्। दोय भक्तिकी चिन्ता भई। तब श्रावण शुक्ल पक्षकी ११ एकादशीको अर्द्ध रात्रि को श्रीगोकुलमें साक्षादाज्ञा भई।

ब्रह्मसम्बन्धकरणात्सर्वेषां देहजीवयोः ।
सर्वदोषनिवृत्तिर्हि दोषाः पञ्चविधाः स्मृताः ॥

या करिकें दोय भक्ति सिद्ध भई। भगवद्वाक्यमें तीन चरण हैं सो त्रिपदा गायत्री। तातें गायत्रीको दृष्टान्त दिये। "यथा द्विजस्य वैदिककर्मणि गायत्र्युपदेशजसंस्कारवत्।' या दृष्टान्ततें यह अर्थ सिद्ध भयो—गायत्रीमन्त्र वैदिक कर्म है। याही सों पहिले दिन उपवास नहीं, तो निवेदनमन्त्र तो भक्तिबीज है ताको उपवास है कहाँ ? या पोंन श्लोकमेंतें निवेदनमन्त्रको आविर्भाव है। देहपदको विवरण है। "दारागारपुत्राप्तवित्तेहापराणि इत्यादि। देहपद कहे सो सतासमर्पणार्थ। श्रावण के देवता विष्णु हैं। तातें महीना

वैष्णव कहें। शुक्लपक्ष छोड़ अमल पक्ष कहे सो भगवत्सम्बन्ध जिनको भयो ते मलरहित भये, नाम निर्दोष भये। एकादशी कहैं सो एकादशेन्द्रियशोधिका है। ताते देहेंद्रिय तो जा दिन आज्ञा भई ताहीतें शुद्ध भई।

अब याको मन्त्रोपदेश तें पहिले उपवास करिके मन्त्र लेनां यह विधि नहीं, किन्तु।

> एकं शास्त्रं देवकीपुत्रगीतमेको देवो देवकीपुत्र एव।
> मन्त्रोप्येकस्तस्य नामानि यानि कर्माप्येकं तस्य देवस्य सेवा।

याके व्याख्यान में लिख्यो है तस्य देवस्य सेवा में पूर्व परामर्श को हो तो देवपद क्यों कहे? ताको आशय, न मनुष्यत्वेन ज्ञातव्य इति देवमिति। जैसे मनुष्य के छुए सें देवकी सेवा न करीये, अपरस होय तो करीये॥

याको यह निष्कर्ष। समर्पण मन्त्र तो बाल्य तें हीं लेइ, "अज्ञानादथवा ज्ञानात्" या वाक्यतें। परन्तु अपने गुरु न पधारे होंय तो एकांश समपण तो हाथ चुक्यो है। दारागारपुत्राप्त पद है। तातें एकांश संबंध तों भयो। तातें गुरु जब पधारे तब ही शरण मंत्र तथा निवेदन मंत्र लेइ, न पधारें तहां ताईं न लेइ। तो दीक्षारहित को दोष नहीं। "एकांशसंबंध" तो है। अपने गुरु छोडि और बालक पास उपदेश लेइ तो अपने घर में जे प्रभु विराजत होंय तो, सो तो जहां को उपदेश है तिनके मुख्य

सेव्य सातों स्वरूपन में हैं। लड़का प्रभृति को और ठौर उपदेश लिवावें तब मंदिर में कौन सें स्वरूप की सेवा तथा भावना करे? यह अपराध पड़े। और गुरु न पधारें तो सेवोपयोगी कुटुम्ब को उपदेश लिवावें तो और बालक पास लिवावें। तब वाकें यहां प्रभु इन गुरुन के मुख्य सेव्य स्वरूप तिनके भाव सों विराजें। तब वाही प्रकार की सेवा की रीति सेवा करें। मुख्य तो जब गुरु पधारें तब ज्ञान भये पीछे लेइ। समर्पण लिये पीछें ज्ञाति में भोजन कियो है ताके लिये उपवास करिक सेवा में जाय। जब मर्यादा पाले तब उपवास करे। जैसे बाह्य स्नान तें शुद्ध, तैसें उपवास तें इंद्रिय शुद्ध। समर्पण पालवे को अंग उपवास है। मंत्रोपदेश को अंग उपवास नहीं इतने पर हू उपवास करिकै निवेदनमंत्र लेइ तो एकादशी के दिन जो आज्ञा भई, "एकादशेंद्रियशोधिका" यह विश्वास छूटि जाय।

किंच ब्रह्मसंबंध में तुलसी हाथ में देत हैं ताको आशय। यातें अन्य सम्बंध न होय, किंतु भगवत्संबंध ही होय। फेर वाके पासतें मांग लेत हैं। साक्षात्स्वरूप विराजत होंय तो चरणारविंद पर धरें। जो परोक्ष होंय तो भावना सों धरिये। "नान्यसमक्षमंज:" इति वाक्यात्।

> श्रीर्यत्पदांबुजरजश्चकमे तुलस्या लब्ध्वापि वक्षःस्थलं
> किल भृत्यजुष्टम्।

भोग में हू याही तें धरिये। अन्यदृष्टि सम्बन्ध न होय यातें॥

या भाँत, नवधा भक्ति साधन रूप तो दोऊ मंत्रन तें सिद्ध भई। परन्तु फलरूप तो न भई। "तातें श्रवणाद्दर्शनाद्धयानान्मयि भावानुकीर्त्तनात्" श्रवण, दर्शन, ध्यान, मयि भाव, मद्विषयाक जो भात्र रतिर्देवादि बिषया भाव "इत्यभिधीयते" भावसो रति, रति सो प्रेम, तामें ध्यान जो है सो तो दर्शन के और प्रेम के मध्य आयो, तातें फलमध्यपाती बन्यो रहे। तीन श्रवण १ दर्शन २ प्रेम ३ ऐसें नवधा में जानिये। कीर्तन १ दर्शन २ प्रेम ३ स्मरण ४ दर्शन प्रेम, ऐसें मध्य की भक्ति में। ऐसें आत्मनिवेदन आत्मनिवेदन सम्बन्धी दर्शन आत्म निवेदन सम्बन्धी प्रेम। स्वस्मिन् ज्ञानी प्रयश्यति यह आत्म निवेदन सम्बन्धी दर्शन और कृष्णमेव विचिन्तयेत् यह विचिन्तन रूप आत्म निवेदन सम्बन्धी प्रेम कहे। यातें जाको श्रवणादि नवमें दर्शनान्त भयो तहां तांई तो मर्यादा, जाको प्रेमान्त भयो तब पुष्टि। तातें दोय मन्त्र करि साधन रूप नवधा भई।

अब जो श्रवणादिक करने सो प्रेमान्त होय तो शुद्धि पुष्टि होय। न करे तो मिश्रभाव रहे। मर्यादापुष्टि १ तथा प्रवाहपुष्टि २ तथा पुष्टिपुष्टि ३ यह तीन मिश्र भाव हैं। पुष्ट्या विमिश्राः सर्वज्ञाः प्रवाहेण क्रियारताः ॥ मर्यादया गुणज्ञास्ते शुद्धाः प्रेम्णाति दुर्लभाः ॥ जे पुष्टिपुष्ट हैं तो सेवारत हैं, सर्वज्ञ हैं, सब जानत हैं। सब कहा ? सेवा, कथा,

स्मरण, यह तीनों आशय सहित जानें। प्रवाहपुष्ट हैं ते क्रियारत हैं। क्रिया सो सेवा, यह मार्गरीति सों करि जानें पर आशय न जाने। मर्यादापुष्टि हैं ते गुणज्ञ हैं, गुण सो कथा तामें रुचि, सेवा में नहीं। यह तीन मिश्र भाव। इनतें भिन्न सो शुद्धपुष्टि सो दुर्लभ है। मुद्ध पुष्टि भई तब निरावरण सेवा होय। अंशावतार के भजन में सबको अधिकार और पूर्ण पुरुषोत्तम के भजन में समर्पण मन्त्र लिये पीछे अधिकार। जैसे ब्राह्मण को गायत्रीमन्त्र पीछे वैदिक कर्म में अधिकार, या भांति दोय मन्त्र देकें दैवी जीवन ओ अङ्गीकार किये तब भगवन्माहात्म्यको स्फूर्ति भई। एक तो श्रीमदाचार्यजी को भूलोक में प्राकट्य, ताको यह आशय।

अब दूसरो आशय फलप्रकरण में भगवान कहें "न पारयेहं निरवद्यसँयुजां स्वसाधु कृत्यं विबुधायुपापि वः" देवता की आयुष्य लेके तुम्हारो भजन कीजिये तोहू पार न आवे। श्रीमुखतें आज्ञा किये, परि कृतिमें न आयो। श्रीमुखतें कहे हैं तातें श्रीमुखावतार होय तब्रही–वचन प्रतिपालन होय। यातें या अवतार में सेवा किये। सेवा के अधिकारी तो व्रजरत्ना, इनके भाव को अनुसरण करें। या प्रकार दास्यभाव किये। याहीतें कहैं–इति श्रीकृष्णदासस्य वल्लभस्य हितं वचः ॥ सेवा कृष्ण की, कृष्णसेवा सदा कार्या इति वाक्यात् पर। ब्रजभक्तनके भावपूर्वक करनी ॥ तातें

श्रीकृष्णदासस्य, श्रीयुत जे कृष्ण तिनके दास, जो लीलान की भावना करें, तब प्रभु हू लीलानुकूल बपु धरि वेई भक्त सहित प्रादुर्भूत होंय। "यद्यद्धिया त उरुगाय विभावयंति तत्तद्वपु:" प्रणयसे सदनुग्रहाय इति वाक्यात्। या प्रकार सेवा तथा भावना करत हैं। तातें श्रीकृष्णके दास और आस्यरूप हैं। तातें वैश्वानर अग्नि उभयरूप हैं। पूर्ण पुरुषोत्तमको यही लक्षण जो विरुद्धधर्माश्रय होंय। ईश होय सो दास क्यों ? दास होय सो ईश क्यों ? "यथा अपाणिपादो जवनो ग्रहीता तद्वत्।" याहीतें श्रीआचार्यनको श्री अंग नित्य। भौतिक नहीं। यातें दोय आज्ञा न मानें। देहदेशपरित्यागः। देह नित्य, देश व्रज, दोऊनको कैसें परित्याग होय ? यातें तीसरी आज्ञा किये। तामें पहली दोऊ आज्ञा सिद्ध भई। तृतीयो लोकगोचरः सो सन्यास लिये, तातें देहपरित्याग भयो। आसुरव्यामोहलीला समें दशाश्वमेध के घाटमें कटि भाग पर्यंत जलमें ठाढ़े रहे, तब सबको ये दृष्टि आयो जो तहाँताँई ऊँची दृष्टि जाय तहाँ तेजको स्तंभ दीस्यो, जैसे प्रभासलीलाविषे। तातें यह श्रीअंग नित्य हैं, भौतिक नहीं। या प्रकार श्रीमदाचार्यजी को भूलोक में प्रागटय किये ॥

दोय आशय ताको स्वरूप। एक तो शेषभाव, एक अशेषभाव। शेषभाव तो "नमामि हृदये शेषे" यामें दास्यभावको अनुभव करत हैं। "न पारयेहं" या श्लोकको

फलितार्थ सो शेषभाव, और अमेषभाव तो जनको उद्धरण रूप सो सब बालकत्वावच्छिन्नविषे स्थापन किये, भूमि विषे भक्ति जो भगवन्माहात्म्य ताके प्रचारार्थ। अब अशेष माहात्म्य तो बालकनमें स्थापन किये ई हैं। और शेष माहात्म्य जो हैं ताको सम्बन्ध जो होय सो भाग्य। यातें शेषमाहात्म्यकी कृपा करें ऐसो उपाय करिये ॥

ऐसो श्रीमदाचार्यजीको स्वरूप है। मुख्य सुधा पुरुषाकार। "बर्हापीडं नटवरवपु:" या श्लोकप्रतिपादित यह स्वरूप है। यहां देहभाव नहीं, रसस्वरूप है। जैसे देह में वीर्य मुख्य तैसें भगवत्स्वरूपमें सुधा। देहमें वीर्यसार मस्तक में रहे। यहां सुधा स्वरूप में सार है, 'आनन्दसारभूता' सो अधर में स्थित है। लोभात्मक अधर है, यथायोग्य दान करे, या प्रकार भावना करनी।

❀ श्रीगुसांईजी को स्वरूप ❀

"जीवय मृतमिव दासं" यह वाक्य भगवान् कहे, पर कृति में न आयो। जैसें श्रीमदाचार्यजी अग्निरूप होय वाक्पति हैं। तथा "न पारयेहं" या श्लोक के अनुभवार्थ दास्य करत हैं, तौमें यह अग्निकुमार हैं। इनहूविषे दोय धर्म हैं। वाक्पति हैं तातें दैवीको उद्धार करत हैं। यातें भगवत्त्व हैं। "जीवय मृतमिव दासम्" या रसके अनुभवार्थ वाक्य सत्यके लिये स्वामिनीदासीत्व हैं। "यावंति पदपद्मा-

नीति" वाक्यात् । जैसें "न पारयेहं" याके अनुभवार्थ मदाचार्यजी आज्ञा किये, "गोपिकानां तु यद्दुःखं तद्दुखं खं स्यान्मम क्वचित् । आप परत्व कहें, तैसे श्रीगुसांईजी किये" —विठ्ठलपदाभिधेये मय्येव प्रतिफलतु सर्वत्र सततम् । मय्येव यामें एकवार कहें, सो आप परत्व कहें । तातें मुख्य स्वामिनीको जो दास्यरस ताको अनुभव श्रीगुसांईजी करत हैं । याहीतें अष्टक तथा स्तोत्र प्रगट किये ।।

निष्कर्ष यह है जो सुधापुरुषाकार रूप श्रीआचार्यजी और सुधा की स्थिति वेणु कैसी है ? "वश्च इश्च वयौ" तौ अणू यस्मात् ऐसी वेणु । 'व' मोक्षानन्द 'इ' कामानन्द ये दोऊ यातें अणु हैं सो तुच्छ है । काहेतें ?

सवनशस्तदुपधार्य सुरेशाः शक्रशर्वपरमेष्ठिपुरोगाः ।
कवय आनतकंधरचित्ताः कश्मलं ययुरनिश्चिततत्त्वाः ।।

शक्र, इन्द्र, शर्व महादेव, परमेष्ठि ब्रह्मा, यह वेणुनाद श्रवणको आये हैं । पर "अनिश्चिततत्त्वाः कश्मलं ययुः ।" तत्त्वको निश्चय न भयो मोहकों प्राप्त भये । रागको ज्ञान न होयगो सो तो कवि आपही हैं । चित्त दे सुनें न होयंगे सो तो आनत कंधरचित्त हैं । तो आये काहेको ? महादेव तथा ब्रह्माको मोक्षानन्दको अनुभव है और इन्द्रको कामानंद को अनुभव है । यहां वेणु है, याके आगे जैसो मोक्षानन्द ऐसो कामानन्द सोऊ तुच्छ है । सो देखिवे को आये हैं।

जाके आगे दोऊ आनन्द तुच्छ भये सो पदार्थ कैसो है ? तथापि हू ज्ञान न भयो । तत्वज्ञान के बिना मोह भयो सुधा ऐसी वेणु में स्थापित है, तैसें श्रीगुसांईजीको स्वीकार । श्रीमदाचार्यजी तें उपदेश है तातें सुधास्थापन । वेणुस्थानापन्न श्रीगुसांईजी भये । तातें यहां वेणुवत् मोक्षानंद कामानंद तुच्छ ऐसी देहको स्वीकार । तातें यहाँ बीजं इतनो देहभाव है। परंतु वेणुमें शेष भाव को ही दान । अरु यह अग्निकुमार हैं, तातें देवभोग्या सुधा को दान । यातें भगत्त्व हैं अरु मन्त्रोपदेशकर्त्ता हैं ।यह तो भक्तकार्यार्थ आविर्भूत । और स्वकार्यार्थ तो दास्य रसानुभव करत हैं। सो यहाँ शेषभाव यह है" स्वामिनीदासत्वम्, यातें अशेष माहात्म्य जो जनको उद्धरणरूप सो तो सब बालकत्वावच्छिन्न में स्थापन किये, परि शेष माहात्म्य जो मुख्य स्वामिनी दासीत्व यह तो आप विषे हैं। "मय्येव प्रतिफलतु ।" तातें ऐसो उपाय करिये जो या शेष माहात्म्य की कृपा करें ।।

श्रीमदाचार्यजी पुष्टिमार्गको प्राकट्य करि स्थापन किये और श्रीगुसांईजी मार्ग को विस्तार किये । जैसें महाप्रभून के आगें श्रृङ्गार दोय हते । मुकुट तथा पाग । तैसें श्रीगुसांईजी मुकुट ही में तें सब श्रृङ्गार प्रगट किये । कुलही बांधिके तीन वा पांच चन्द्रका धरे; तब मुकुट हो हैं । बर्हिनृत्यानुकरण ऐसो मुकुट हू है तथा कुलही हू है । प्रभु के केश

बडे हैं सो मध्य के केश की शिखा बांधि आस पास के केश को मेंड करिये । तब गोटीपर भांति-भांति के फूल धरि वस्त्र मिहीं ऋतु प्रमाण लपेटे । और आसपास के केशकी मेंड हैं सोहू वापर फूल धरि वस्त्र लपेटे । दोय छेड़ाको पटुका लेइ बांई औरतें तुर्राके ठिकाने तुर्रा संवारि, पीछें की ओर दोय पेच देय दाहिनी और जेंवनी पास तुर्रा राखे सो, तब कुलही भई । गोटी लांबी करि देइ तो टिपारो होय । आगे पेच आवे गोटी रहें तो गोटीको दुमालो होय । गोटी न राखिये तो दुमालो गोटीबिनाको होय । एक तुर्रा राखिये तो फेंटा होय । गोटी तथा एक तुर्रा राखिये तो गोटी को फेंटा होय । गोटी न राखिये, बीचमें तुर्रा राखिये तो पगा होय । तुर्रा न राखिये गोल तथा **मेंड़** राखिये तो तुर्रा विनाकी कुलही होय । इत्यादि भेद सब कुलहीमेंके हैं । कुलही मुकुटको पर्याय है । यातें श्रीमदाचार्यजी संक्षेप सब प्रगट किये । श्रीगुसांईजी वाही संक्षेप को विस्तार या प्रकार किये । जैसें प्रभु गीताके वक्ता । संक्षेप हैं । विस्तार श्रीभागवत है । श्रीमदाचार्यजी सुधारूप हैं । वेणुमें आनन्द सारभूत सुधाको स्थापन है । "सुधात्रायधारत्वेन वेणुभावापन्न" श्रीगुसांईजी हैं । तातें वेणु हू पुष्टिमार्गीय षड्गुणैश्वर्यसंपन्न हैं । 'धन्यास्तोति' श्लोक यातें बालकनमें गुणको प्राकट्य किये । श्रीबिट्ठल या नामतें हू षड्गुणको प्राकट्य है ।

र्वेषामित रसाधनासाध्य भगवत्प्राप्ति संपादनमें ऐश्वर्यं १ । कर्मज्ञानोपासनादिजनितदेहादिक्लेशा भावसंपादनं वीर्यम् ।२। र्वोक्तं सर्वमनेनैव नाम्ना सर्वत्र प्रसिद्धमिति यशो निरू-पि म् ३ । श्रीस्तु वर्तत एव ४ । विद् ज्ञानं ५ । ठं शून्यं राग्यम् ६ । तानि लाति आदत्ते स्वीकरोतीत्यर्थः । इदं र्यादामार्गीयमैश्वर्यादिकं सो नामरत्नाख्य की टीका में निरूपण किये हैं । तातें भूमिविषे भक्ति भगवन्माहात्म्य ताके प्रचारार्थ वंश प्रगट किये ॥

❀ श्रीगिरिधरजीको स्वरूप ❀

१ प्रथम ऐश्वर्य गुणको प्राकट्य, अतएव श्रीनवनीतप्रियजी श्रीमथुरेशजी दोऊ स्वरूप बिराजत हैं ।

श्रीगोविंदरायजीको स्वरूप । २ वीर्य गुणको प्राकट्य । अतएव विद्वन्मंडनके प्राकट्यविषें श्रीगिरधरजी विज्ञप्ति किये । यह शब्द व्याकरणसिद्ध जान नहीं पडत । तब श्रीगुसांईजी श्रीगोविंदरायजीकों बुलायके कहें, यह शब्द कैसें होय ? तब व्याकरणमें सिद्ध हतो सो प्रयोग सावें । यातें आठों व्याकरण आवत हते ।

> "इन्द्रश्चन्द्रः काशकृत्स्नः पिप्पलो शाकटायनः ।
> पाणिन्यमरजैनेंद्रा इत्यष्टौ शाब्दिकाः स्मृताः " ॥

श्रीबालकृष्णजी को स्वरूप । ३ यश गुणको प्रागटय । ऐसो भक्ति मार्ग को आग्रह जो विवाहादिक बिषें कुलदेव्या-

दिको पूजन करनों ता ठिकाने श्रीभागवतकी पुस्तकको स्थापन किये ।

अथ श्रीगोकुलनाथजीको स्वरूप । ४ श्रीगुण प्राकट्य । जब जुदे भये तब जन्माष्टमी आई । स्वसेव्य श्रीगोवर्धनधरजी को पालने बैठाये । श्रीगुसांईजी को हार्द जानें । श्रीनवनीतप्रियजी पालने बैठे । डोल हिंडोला बैठें । बाललीला पालनो, प्रौढलीला डोल, जैसें बाल स्वरूप पालने बैठें तैसें प्रौढ स्वरूप पालने बैठें । यह श्रीगुसांईजी को हार्द न होय तो बालस्वरूप को पालनें बैठाये होते । प्रौढ स्वरूप को डोल बैठाये होते । एक ही स्वरूप सब लीलाविशिष्ट हैं ॥

अथ श्रीरघुनाथजीको स्वरूप । ५ धर्मीको प्रागट्य जैसें दशमस्कंध में तामसप्रकरणके फलप्रकरण में श्री पीछे धर्म अध्याय पाछे वैराग्य पीछे ज्ञान । तैसें पांचमें बालक हैं सो धर्मी और कर्मप्राप्त सो ज्ञानगुण को प्राकटय । ज्ञान स्वभाव परिवर्त्तन करे । याको प्रमाण यह जो इनके प्रभु श्रीगोकुलचन्द्रमा जी सो श्रीगुसांई जी मध्य पधराये । आगे श्रीनवनीतप्रिया जी १ । वामभाग श्रीमथुरेश जी २ । तिनके आगे श्रीविठ्ठलेशराय जी ३ । इनकी बराबर श्रीमदनमोहन जी ४ । दक्षिणभाग श्रीद्वारकानाथ जी ५ । आगें श्रीगोवर्द्धनधर जी ६ । इनकी बराबर श्रीबालकृष्ण जी । और ग्वालके समें श्रीगुसांईजी की आज्ञातें श्रीरघुनाथ जी पधारे तब श्रीआचार्यजी को साक्षात् दर्शन भयो ।

अब श्रीयदुनाथजीको स्वरूप । ६ वैराग्यगुण को प्राकट्य । फलप्रकरण की रीति वैद्यविद्या स्वीकार करि जगत को उपकार किये । देह नीरोग होय तो वैष्णवसों सेवा होय और जो कोऊ सत्कर्म हैं तामें निवेश होय । हरेश्चरणयोः प्रीति वैराग्यम् ॥

श्रीघनश्यामजीको स्वरूप । ७ ज्ञानगुण को प्राकटय, फल प्रकरणका रीति । श्रीगुसांईजी मधुराष्टक की टीका प्रगट करि श्रीगिरिधरजी कों सोंपे, जो श्रीघनश्यामजी अबही छोटे हैं, बड़े होंय तब दीजिये । जिनके लिये टीका का प्राकटय भयो सो स्वभावपरिवर्त्तन किये, न किये होंय तो विरहानुभव ही होंय संयोगानुभव न होय । यातें पहिले संयोगानुभव के लिये टीका प्रगट किये ॥

श्रीगुसांईजी विषें वेणु स्थापित ऐश्वर्यादिकन को प्राकट्य है तथा श्रीविट्ठल या नामको निरुक्ति में तें हू षड्गुणैश्वर्यादिक को प्राकटय है, यातें एक प्रकार तो सातों बालकन में निरूपण किये ॥

अब दूसरे प्रकार को बालकन विषे निरूपण करत हैं । श्रीगिरिधर जी विषें छहों गुण को प्राकटय । प्रथम ऐश्वर्य, तो यह जो सातों स्वरूप श्रीजी साथ अन्नकूट अरोगे यह विज्ञप्ति श्रीगुसांईजी सूं किये । पाछें पधराये । सज्ञान तो सराहेई पर मूढ हू पूजन लगे ।

ईश्वरः पूज्यते लोके मूढैरपि यदा तदा ।
निरुपाधिकैश्वर्यं वर्णयन्ति मनीषिणः । इति वाक्यात् ॥

वीर्य तो यह जो विद्वन्मण्डन के प्राकट्य में प्रतिद्वन्द्वी होय पूर्वपक्ष किये यश तो यह जो श्रीजी अपने श्रीहस्त सों हाथ पकड़े । श्री तो यह जो सब उत्सवन को शृङ्गारादिक येई करें । ज्ञान तो यह जो गोपालमन्त्र को स्वीकार किये । वैराग्य यह जो नवलक्ष रुपैया लाड़बाई धारबाई लाई पर आप त्याग किये । छहों गुण श्रीगिरिधर विषे प्रगट कहें । तब एक गुण छहों बालकन में प्रगट और पांच गुप्त ॥

श्रीगोविन्दराय जो विषे ऐश्वर्य । उत्थापन को सेवा नित्य आपु करते । जब स्वपुत्र को विवाह आयो तब इत तो व्याहिवे को चलिवे को समय, ता समें नेत्र भरि आये। तब श्रीगुसांईजी पूछे ऐसे क्यों ? तब कहे उत्थापन को समय है । तब आपु आज्ञा दिये सेवा करो । वा समे भक्ति की ऐसी उद्वेक दशा देखिकें आपु प्रसन्न भये ॥

श्रीबालकृष्णजी विषें वीर्य । जब श्रीगुसांईजी के पितृव्य चरण श्रीगोकुल में आयके कहें श्रीबालकृष्णजी को देऊ, तो में दक्षिण में ले जाऊँ, मेरी वृत्ति है सो लेहु, मोकूँ तो संन्यास है, नाहीं कहोगे तो ऋण होयगो । ऋणको स्वीकार किये पर चरणारविन्द न छोंड़े । तब श्रीगुसांईजी हू प्रसन्न

भये । यातें ऋण होयगो तो विदेश जायकें जीवन को उद्धार करेंगे । भूमि में भक्ति प्रचार के लिये ही पिता पुत्र या प्रकार को वंश प्रगट किये ॥

श्रीगोकुलनाथजी विषे यश है । चिद्रूप माला को प्रतिद्वन्द्वी भयो, तब माला स्थापन किये । यह यश प्रसिद्ध ही है ।

श्रीरघुनाथजी विषे श्री है । तुलसीदास श्रीगोकुलमें आये, तब श्रीगुसांईजी सों कहे, सीताजी सहित श्रीरामचन्द्रजी को दर्शन होय यह कृपा करो । तबही रघुनाथजी को व्याह भयो हतो, सो श्रीजानकी बहूजी पास ठाड़े हते । तब आपु आज्ञा दिये जो तुलसीदास कों दर्शन देउ । तब श्रीरघुनाथजी जानकी बहूजी वैसो ही दर्शन दिये । तब तुलसीदास जी कीर्त्तन कहे—

वरनों अवध श्रीगोकुल गाम ।
उहां सरजू इहां श्रीयमुना एकही लख ठाम ॥

ऐसो श्रीगुसांईजी को आज्ञा को विश्वास । "श्रियो हि परमा काष्ठा सेवकास्तादृशा यदि । तब आपु प्रसन्न होयकें श्रीजी के यहां की गद्दरजी की सेवा दिये । दिबारो के दिन श्रीजी के यहां शयन आरती भये पीछें आरती होय यथाक्रम सातों स्वरूप की ओर की, तब श्रीरघुनाथजी को वारो आर्ती को आवे तब पहलें गद्दर उढावें, परि रहे पीठक

के ऊपर, आगे तें थोड़ो दीसे । पीछें आर्ती करे यह रीति ।

श्रीयदुनाथ विषे ज्ञान है । मंदिर में जाय मंदिर वस्त्र देते । यह भक्ति मन्त्र को फल । आप श्रीगुसांईजी श्रीबालकृष्णजी पधरावत हते सो न लोये, यातें जो श्रीबालकृष्णजी गोद के ठाकुर हैं सात स्वरूप में नहीं । मुख्य स्वरूप आठ ही हैं । "षोडश गोपिकानां मध्ये अष्ट कृष्णा भवन्ति ।" यह ज्ञान हैं । जैसे नदीन में ज्ञान है । 'भग्नगतयः सरितो वै ।' तैसें इनको हू ज्ञान । ऐसो स्वरूप को बोध होय गयो । श्रीगुसांईजी हू सात स्वरूप में न पधराये । यातें यह, ज्ञा ज्ञानरूप हैं । ज्ञान में भक्ति कहां ? यह ज्ञान को फल ।

श्रीघनश्यामजी विषे वैराग्य । जबतें श्रीमदनमोहनजी अन्तर्हित भये तब तें विरहानुभव ही किये । श्रीअङ्गके प्रति चिन्ह लिखे ऐसी तन्मयता ।

श्रीमदाचार्यजी के बहूजी श्रीमहालक्ष्मी बहूजी श्रीगुसांईजी के बहूजी श्रीरुक्मिणीबहूजी और श्रीपद्मावती बहूजी । श्रीगिरिधरजी के बहूजी श्रीभामिनी बहूजी । श्रीगोविन्दजी के बहूजो श्रीराणीबहूजी । श्रीबालकृष्णजी के बहूजी श्रीकमलाबहूजी । श्रीगोकुलनाथजी के बहूजी श्रीपार्वतीबहूजी । श्रीरघुनाथजी के बहूजी श्रीजानकीबहूजी । श्रीयदुनाथजी के बहूजी श्रीराणीबहूजी । श्रीघनश्यामजी के श्रीकृष्णावतीबहूजी । यह जिन जिनके अर्धांग हैं तिन तिनके

तदात्मकस्वरूप जानिये । यह दश स्वरूप बहूजीनके हू अलौकिक जानिये ।।

❀ श्रीगोवर्द्धनपर्वत को स्वरूप ❀

इनको दास्यभक्ति सिद्ध, साधन रूप दास्य हनूमान को । फलरूप दास्य श्रीगोवर्द्धन को । यातें हरिदासवर्य श्रेष्ठ हैं । हनूमान को दास्योपयोगी और श्रीगोवर्द्धन को देह तथा देहसम्बन्धी सब पदार्थ भगवदुपयोगी हैं । कन्दरामें छहों ॠतु सानुकूल हैं । जा ॠतु में जैसो निजमन्दिर वा शय्यामन्दिर चाहिये तैसो ही होय । झिरना हैं सो जलपानके योग्य, तृण हैं सो आस्तरणार्थ । फल हैं सो पुलिन्दीद्वारा उत्थापनभोग की सामग्री सिद्ध होत हैं । इनके सङ्ग तें पुलिन्दी हू भगवदीय भई । पूर्णाः पुलिन्द्यः इति । ऐसें भगवदीय हैं । भक्त को लक्षण यह है । "आर्द्राद्रीकरणत्वं वैष्णवत्वं" जैसें भीजे कपड़ा को सूको कपड़ा लगे तो सूको हू भीजो होय । पुलिन्दी भीलन की स्त्री, येहू भगवदीय भई भगवत्स्पर्श करि पुलकित होय । यह दूसरो लक्षण भगवदीय को । अतएव श्रीगोवर्द्धन में श्रीचरणारविन्द तथा मुकुट तथा श्रीहस्त की अंगुरिन कोहू प्रतिफलन होत है, सो सात्त्विकाविर्भाव को लक्षण । श्रीगोवर्द्धन की स्थिति सिंहाकृति है । याही तें दण्डौती शिला सो चरण, स्नानशिला सो श्रीमुख ।।

श्रीगोवर्द्धन भगवद्रूप हैं । 'शैलोस्मीति ब्रुवन् इति

वाक्यात् ।" श्रीगोवर्द्धनशिला को हू सेवन आवश्यक है। जब श्रीगोवर्द्धनशिला पधरावें, तब श्रीगुसांईजी के बालक के श्रीहस्त सों पधरावें । शिला की जो निष्कर्ष भेट होय सो श्रीजी को भेट करें। श्रीगोवर्द्धन के नाथ ये ही हैं। श्रीगोवर्द्धन में धरें नहीं। भेटको प्रमाण नही । जो बनि आवे सो धरे। जैसें श्रीयमुनाजो को सेवा को मनोरथ होय तो घाट के ऊपर वस्त्र बिछाय, भावना सों पधराय, साडी चोली आभरण पहिराय, माला समर्पि भोग धरिये । भोग सराय प्रसाद आपु लीजिये औरकों बांटिये । साड़ी चोली आभरण होंय सो जहां मनोरथ होय तहां श्रीगुसांईजी के घर भेट करिये। या प्रसाद के अधिकारी वेई हैं। प्रवाह में बोरियो नहीं। शृङ्गार (प्रवाह) चलत में न होय। बैठें जब होय।

यहां सालग्राम होंय तहां उत्सव के जन्म के समै शामग्राम स्नान करै । श्रीगोवर्द्धनपूजा के समे श्रीगोवर्द्धनशिला स्नान कर, और यहां शालग्राम नहीं तहाँ जन्म के समय तथा श्रीगोवर्द्धनपूजा के समय सब बेर श्रीगोवर्धनशिला ही स्नान करे । व्यापिवैकुण्ठ में श्रीगोवर्धन रत्नधातुमय है। सारस्वतकल्पीय पूर्ण प्राकट्य समय जिनको नंदालय को दर्शन मणिमय स्तंभादिक को होय तिनकों श्रीगोवर्धनहू को ऐसो दर्शन होय । श्रीयमुनीजी की हू सीड़ी रत्नबद्धोमयतटी ऐसो दर्शन होय । और बेर सदा भौतिक दर्शन होंय। भौतिक में आध्यात्मिक भाव करे तो आधिदैविक को आविर्भाव होय । श्रीगोवर्द्धन ऐसे भगवदीय हैं । भगवत्सेवा करिकें प्रभून के साथ जे गाय गोप तिनहू को सन्मान करत हैं। "पानीयसुयवसकन्दरकन्द मूलैः" इति ।।

❀ अथ व्रजको स्वरूप ❀

वाराहपुराण में पृथ्वी वाराहजी सों पूछो । सर्वत्र भूमि है। तामें आपकों प्रिय भूमि कौनसी ? तब श्रीवाराहजी प्रयाग को प्रसंग कहें। वैकुण्ठनाथ प्रयागको जब तीर्थराज किये, तत्र तीर्थ सब प्रयाग पास आये। तीर्थन को देखि प्रयाग कहे । तुम यहाँ रहा, में प्रभून पास होय आऊं। तब वैकुण्ठ में जाय द्वारपालन सों कहे में आयो हूँ यह प्रभूनसों विज्ञप्ति करो । इतने में प्रभु आपुहीते पधारे तब दर्शन भयो । श्रीमुखतें आज्ञा भई आवो तीर्थराज । तब प्रयाग विज्ञप्ति किये । यही पूछिवे को आयो हूँ। जो तीर्थराज किये, सर्व तीर्थ आये परन्तु व्रज नही आयो । तब श्रीमुखतें आज्ञा किये जो हम तुमकों तीर्थन के राजा किये हैं। हमारे घरका राजा नहीं किये । व्रज तो हमारो घर है, या व्रज के वृक्ष वृक्ष प्रति वेणुधारी हूं पत्र पत्र विषे चतुर्भुज हूँ।

वृक्षे वृक्षे वेणुधारी पत्रे पत्रे चतुर्भुजः ।
यत्र वृन्दावनं तत्र लक्ष्यालक्ष्यकथा कुतः ।१। इति वाक्यात् ।

जा व्रज में भगवज्जन्म भयो ता करिकें व्रजदेश शोभामान भयो । लक्ष्मी सेवा के लिये निरन्तर व्रजदेशको आश्रय

करत हैं।

जयति तेधिकं जन्मना व्रजः श्रयत इन्दिरा शश्वदत्र हि, इति ।

पृथ्वी तो गोरूप है। जैसें गाय के रोम रोम पवित्र हैं, पर दूध चाहिये तब स्तन का आश्रय करत हैं तब मिलें। तैसें पृथ्वी में जितनें तीर्थ हैं तिनतें पापक्षय होय परन्तु भगवत्प्राप्ति की जब अपेक्षा होय तब ब्रज को आश्रय करे तब ही भगवत्प्राप्ति होय। श्रुतिनकों जब दर्शन भयो तब ये ही वर दियो। "कल्प सारस्वतं प्राप्य व्रजे गोप्यो भविष्यथ" ॥ व्रज कमलाकार है, यातें प्रभु जा स्थल का लीला करिवे के इच्छा किये तब वह पंखुरी संकुचित होय आगे आय गई, तब तात्कालिक पधारे। ऐसें न होय तो नंदगाम तें तालबन पधारें, वहाँ चतुर्विध पुरुषार्थ दर्शन की लीला करि धेनुकासुर को प्रसंग सब करि पाछें ब्रज को पधारे।

कृष्णः कमलपत्राक्षः पुण्यश्रवणकीर्त्तनः ।
स्तूयमानोऽनुगैर्गोपैः साग्रजो ब्रजमाव्रजत् ।१।

प्रभु सर्वकरणसमर्थ हैं। भक्त की भावना में आवे ऐसी लीला करत हैं। जैसें वृष्टि समें श्रीगोवर्द्धन पास पधारें, तब प्रभु कहा उठावें ? श्रीगोवर्द्धन आपुहातें उठे। दास का धर्म येही हैं। जो स्वामी पधारें तब उठें। यह अन्तरंग भक्त है जैसी प्रभु की इच्छा है सो जानत हैं। जा प्रकार की स्थिति की इच्छा है तहाँ तैसी ही होय। अब या प्रकार की इच्छा

है सो छत्राक होय गये। छत्रको डांडी चाहिये, तातें श्रीहस्त ऊँचो करत हैं। तातें व्रजहू लीलोपयोगी कमलाकर है। पूर्ण विकसित होय, अर्ध विकसित होय, संकुचित होय, एक पांखड़ी ही खुले, दोई खुलें। जब जैसी प्रभून की इच्छा, तैसें होय। ब्रज में वृक्षादिक हू ऐसें हैं जो ऋतु नहीं और भगवदिच्छा है तो पुष्पित फलित होंय, और ऋतु भगवदिच्छा नहीं तो पुष्पित फलित न होय। जैसें मल्लिका की ऋतु वसन्त, शरद में कैसें होय ? शरदोत्फुल्लमल्लिकाः। और ब्रज में व्यापिवैकुंठ को आविर्भाव हैं, तातें सब भूमितें ब्रज भूमि श्रेष्ठ है। या प्रकार लीलाभावना को प्रकार विचारिये ॥

❀ अथ भावभावना ❀

ब्रजभक्तन के भाव सों सेवा, ताकी भावना पहिलें मंदिर को स्वरूप। वेद में ताको गोलोकधाम कहे। यत्र गावो भूरिशृङ्गा अयासः इति श्रुतेः। पुराणमें व्यापिवैकुंठ कहें, गोलोकधामको। 'ब्रह्मानंदमयो गोलोको व्यापिवैकुंठसंज्ञकः' इति वाक्यात्। सो दोउ एक। और वेद में जाको व्यापि वैकुंठ कहें, पुराण में गोलोकधाम कहें सों रमा वैकुंठ, व्यापि वैकुंठ नाहीं। ब्रह्मवैवर्त्तमें गोलोकधाम को वर्णन भयो। बिरजा नदी कही है यह रमावैकुंठ। कावेरी में जल हैं सो विरजा को है।

कावेरी विरजातोयं वैकुंठं रंगमंदिरम् ।
स वासुदेवो रंगेशः प्रत्यक्षं परमं पदम् इति ॥

यातें वेद में जों गोलोकधाम हैं, सो पुराण में व्यापिवैकुंठ, तातें मंदिर सो व्यापिवैकुंठ । यह भौतिक अक्षर और सिंहासन यह आध्यात्मिक अक्षर। गादी वा चरण चौकी यह आधिदैविक अक्षर, व्यापिवैकुंठ आधिदैविक, यातें मंदिर को ऐसो स्वरूप जान पहिलें दंडौत करि पाछें भीतरि जाय ।

"नमो नमस्तेस्त्वृषभाय सात्त्वतां विदूरकाष्ठाय मुहुः कुयोगिनाम् । निरस्तसाम्यातिशयेन राधसा स्वधामनि ब्रह्मणि रंस्यते नमः ॥"

जसें मंदिर विषे ताप, रज, जल, इन तीन की निवृत्ति होत है, तैसें भगवन्मन्दिर गये तें प्रात रज को दर्शन भयो, यातें ताप जो अन्तः है ताकी निवृत्ति भई । बुहारी सों मंदिर मार्जन करत हैं । तब यह भाव राखें, प्रभु क्रीड़ा भक्तन सहित किये हैं, उन चरणारविंद की रज को स्पर्श या रज को भयो है, सो यह रज उड़िकें या देह को लगत है । तब तमोगुण की निवृत्ति भई । जब मंदिर धोईये तब जल जो सत्व तातें रजोगुण की निवृत्ति भई । फेर मंदिर-वस्त्र सों पोछिये, तब वस्त्र स्वच्छ भयो सो स्वच्छ सो निर्गुण, ता करिकें सत्व की निवृत्ति भई । ऐसी निर्गुण बुद्धि भई तब सेवा की योग्यता भई । ऐसी निर्गुण भक्ति बुद्धि

पूर्वक ब्रजभक्त भगवन्मंदिर में पधारत हैं, ऐसो मंदिर को भाव राखे । और ब्रजभक्तन को भाव पूर्ण पुरुषोत्तम विषे ही है । सरस्वत कल्प में श्रीनंदरायजी के यहां जिनको प्राकट्य है तिनमें ही, औरमें नहीं ।

'जानीत परमं तत्त्वं यशोदोत्संगलालितम् ।
तदन्यदिति ये प्राहुरासुरांस्तानहो बुधाः' इतिवाक्यात् ॥

❀ अथ प्राकट्यको विचार ❀

प्रथम श्रीवसुदेवजी के यहां प्रगटे, सो व्यूह त्रय विशिष्ट पुरुषोत्तम, व्यूह बाहिर, पुरुषोत्तम भीतर । दृष्टांत में पुरुषोत्तम प्राकट्य कहे "प्राच्यां दिशीन्दुरिव पुष्कलः" इति । "जायमानेऽजने तस्मिन्नेदुर्दुंभयो दिवि" यह अनिरुद्धको प्राकट्य । अनिरुद्ध धर्मस्वरूप है । धर्म सो दुंदुभि प्रभृति, सो बाजने लगी । और "निशीथे तम उद्भूते जायमाने जनार्दने" यह सकर्षण को प्राकट्य । तमकी निबृत्ति संकर्षण करिकें हैं, तातें द्वादशाध्यायमें कहेंगे "तमोपहत्यै तरुजन्म यत्कृतम्' । 'देवक्यां बिष्णुः प्रादुरासीत्' यह प्रद्युम्नप्राकट्य । भाद्रपद कृष्ण ८ बुधे अर्धरात्र जा समय रोहिणी को चन्द्रसम्बंध, ता समें वसुदेवजी के यहां प्राकट्य । फेर वसुदेव जो तथा देवकी जी स्तुति किये, भगवान सांत्वन किये—'जो तुम मेरे लिये देवता के बारह हजार वर्ष सूं मनुष्य की एक चौकरी पर्यंत अत्युग्र तपस्या किये, तब में

प्रगट होय वर दियो । मनुष्य को वर एक जन्म में फलित होय । देवता जो वर देइ सो दोय जन्म में फलित होय । भगवद्वर तीन जन्म ताँई फलित होय । तातें तीन जन्म में में ही प्रगट भयो । प्रथम जन्म सुतपा पृष्णि, तब पृष्णि गर्भ भये । दूसरे जन्म में कश्यप अदिति, तब बामन जन्म भये । और या जन्म में वसुदेव देवकी, तब यह प्राकट्य भयो । यों कहिकें वर दिये । या प्रकार तुम दोऊ पुत्र भाव करिकें तथा ब्रह्मभाव करिकें चिन्तन करोगे तो साक्षात् अनुभव करायकें व्यापिवैकुण्ठ की प्राप्ति करूँगो ।' यातें जब श्रीदेवकीजी पुत्रभावना करत हैं । तब स्तन्यकी उद्वेग दशा होत हैं । सो इनको अनुभव होत हैं । याहोतें उत्तरार्द्ध में जब देवकीजी के पुत्र ६ ल्याये तहां कहे श्रीशुकदेवजी, 'पीतशेषं गदाभृत: ।' या प्रकार सों पीतशेष है ।

पीछे वसुदेव देवकीजी के देखते ही प्राकृत होत भये । यह स्वरूप कौनसों ? ताको बिचार लिखत हैं । यह प्राकट्य श्रीनन्दरायजी के यहाँ प्रादुर्भूत भये तिनको जानिये । आपु तो श्रीयशोदाजी के हृदय में बिराजत हैं । वासुदेव तथा माया को श्रीनन्दरायजी को रेत:सम्बन्ध तथा श्रीयशोदाजी को गर्भसम्बन्ध है । पुरुषोत्तम को रेत:सम्बन्ध हू नहीं । जा समय आप प्रगट भये सो वासुदेव को ग्रहण करिके हीं प्रगटे । माया दूसरे क्षण में भई । भगवतप्रादुर्भाव को दूसरो क्षण, सो माया को जनन क्षण । ता समय श्रीयशोदाजी

को इतनों ज्ञान भयो जो कछू भयो । पर निश्चय न भयो पुत्र वा पुत्री । सामान्य ज्ञान भयो सो कहें ।

यशोदा नन्दपत्नी च जातं परमबुध्यत ।
न तल्लिगं परिश्रांता निद्रयापगतस्मृति:' इति ॥

भगवत्प्रादुर्भाव के तीसरे क्षण में विशेषज्ञान हो सो तो माया को दूसरो क्षण भयो, तातें सामान्य ज्ञान भयो । तीसरे क्षण में विशेष ज्ञान भयो । यह शास्त्र की रीति । पहले क्षण में उत्पत्ति, दूसरे में सामान्य ज्ञान, तीसरे क्षण में विशेष ज्ञान । तैसें माया के पहले क्षण में उत्पत्ति दूसरे क्षण में सामान्य ज्ञान तीसरे क्षण में विशेष ज्ञान । तातें या प्रकार भयो । श्रीवसुदेवजी को तो दोय घड़ी तांई चतुर्भुज स्वरूप को दर्शन भयो । तिनको अनुभव करि जा समें श्रीनन्दराय जी के यहाँ पाकट्य ताही क्षण विषें श्रीवसुदेवजीको दर्शन दिये—'बभूव पाकृत: शिशु:' । तब पधरायवे की इच्छा ता समें श्रीयशोदाजी के माया भई । मथुरा तें श्रीवसुदेव जो उत्तम पात्र में वस्त्र विछाय श्रीठाकुरको पधराय ले चले । पीछे श्रीयशोदाजी के पास पधराये । स्वरूप तो इहाँ प्रगट भयो, सो तो दर्शन मथुरा में दिये । उन्हीं को पधराय लाये । वस्तुत: एक ही है व्यापक तें मथुरा में दर्शन दिये । मथुरा में दर्शन देवे को प्रयोजन यह—चतुर्भुज स्वरूप कों आप विषे अन्तर्भाव करनी है, व्यूह को कार्य पड़े तब पगट करें । व्यूह त्रय विशिष्ट को पाकट्य मथुरा में, वासुदेव विशिष्ट को

प्राकट्य ब्रज में । यशोदाजी को स्तन्य भयो सो माया कृत तथा वासुदेव कृत है । प्रभु स्तन्यपान करत हैं सो पूतना द्वारा सोरह हजार बालक अपने उदर में आकर्षण किये हैं, उनके निमित्त माया जनित स्तन्य को पान करें हैं । तो बालक यह यौगिक अर्थ है । सो "आत्मनः सकाशाज्जातः" मुग्ध होय तब लीलारस की प्राप्ति न होय, तातें वासुदेवको मोह होन न दिये । यातें केवल पद धरे । केवल माया जन्यं स्तन्यं भगवान् न पिवेत् । और जो वासुदेव जन्य स्तन्य हो हो तो बालकन को मोक्ष होय, सो माया प्रतिबन्ध कोंनो । यातें मोह हू न भयो और मोक्ष हू न भयो । ऐसे भये, तब लीलारस कीं प्राप्ति भई ! और पूर्ण ब्रह्म को रेतःसम्बन्ध नहीं, तब 'नन्दस्त्वात्मज उत्पन्नो' यों क्यों कहे ? ताको निर्णय 'आत्मनः सकाशाज्जातः आत्मजः' यह यौगिक अर्थ है, सो वासुदेव परत्व श्रीनन्दरायजी की बुद्धि है, रेतःसम्बन्धत्वात्, और अर्थ जो श्रीनंदरायजी की बुद्धि है तो पुरुषोत्तम में रेतःसम्बन्धा भावत्वात्, तातें नन्द बुद्धि को भ्रांतत्त्व नहीं, सत्यत्व ही है । आत्मज शब्द को यौगिक वासुदेव विषे और गूढ पुरुषोत्तम विषे यह प्रकार जाननो । यातें ब्रजभक्तन को भाव तो पुरुषोत्तम विषे हीं है । फलरूप आत्मनिवेदन तो रासक्रीडा विषें करनो है । तातें 'आत्मानं भूषयांचक्रुः' । आत्मा को भूषण करें । जैसे आत्मा निर्विकार हैं, व्यापक हैं, तैसें इनकी देह हू निर्विकार व्यापक है ।

देह नित्य न होय तो जा देह सों ब्रह्मानन्दानुभव ताही देहसों भजनानन्दानुभव न होय । अनित्य देह होय तो ब्रह्मानन्द में लय हो जाय । जैसें इनकी देह निर्विकार है और नित्य है, तैसें इनको भाव हू निर्विकार है और नित्य है ।

❀ नित्य सेवा भावना ❀

नन्दालय में प्रातः भगवद्दर्शनार्थ पधारत हैं । तब मातृचरण प्रभुकों जगावत हैं । जो यहां प्रभु जगाये नहीं जागत तब सब ब्रजभक्त अपनें अपनें गृह आय भाव पूर्वक प्रबोध पढ़िकें जगावत हैं । यातें श्रीगुसाँईजी के बालक तें अतिरिक्त औरकों प्रबोध को अधिकार नहीं । मन्दिर में हू न पढ़े । जैसे ग्रन्थ पाठ करत हैं तैसें प्रबोध पाठ न करें । गोपीवल्लभ तथा सन्ध्या भोग ये दोऊ इनको ओर के भोग हैं तैसें येऊ भोग श्रीगुसाँईजी के घर में हैं और वैष्णव के यहाँ नहीं । गोपीवल्लभ के ठिकाने शृङ्गारोत्तर शृङ्गार भोग आवें, तथा सन्ध्याभोग के ठिकानें उत्थापन भोग आवें । सामग्री कदाचित धरे ऊपर, परिनाम तो शृङ्गारभोग तथा उत्थापनभोग कहे । कृति नन्दालय की करनी । "सदा सर्वात्मना सेव्यो भगवान् गोकुलेश्वर" इति । तातें कृति नन्दालय की करे । भावना ब्रजभक्तन की करे, इनकी कृति न करें । "स्मर्तव्यो गोपिकावृन्दे क्रीडन् वृन्दावने स्थितः" इति वाक्यात् । जितनी कृतिको अधिकार कृपा करिके दिये

हैं, तिननी करे । यथा डोल प्रभृति स्मरण हू को जितनो अधिकार कृपा करिके दिये हैं, तितनो स्मरण हू करे । विशेष भावना तो श्रीमदाचार्यजी स्वपरत्व हू आज्ञा किये हैं ।

"गोपिकानां तु यद् दुःखं तद् दुःखं स्यान्मम क्वचित् ।
गोकुले गोपिकांना तु सर्वेषां व्रजवासिनाम् ॥
यत्सुखं समभूत्तन्मे भगवान् किं विधास्यति ?
उद्धवागमने जात उत्सवः सुमहान् यथा ।
वृन्दावने गोकुले वा तथा मे मनसि क्वचित्" इति ॥

यातें निष्कर्ष जो भक्तिमार्गकी मर्यादा यह है जो कृति तथा भावना नन्दालय की ही करें । "यच्च दुःखं यशोदाया नन्दादीनां च गोकुले" यद् दुःखं यशोदायाः, नन्दआदिपदेन उपनन्दादयः, चकारेण अंतरंगगोपाः, तेषां यद् दुःखं, चकारात्सुखमपि, निरोधकार्यं । यह भावना करें, और गोपिकांना तु यद् दुःखं, शब्द करिकें पूर्वको व्यावर्तन किये तातें यशोदा प्रभृतिन को भावना करे, और गोपिका की न करे; और "उद्धवागमने जात उत्सव सुमहान् यथा" यह तो विप्रयोगकी है, सो तो यशोदादिप्रभृतीन कीं हू न करें, तो गोपिकादिक की कहा ? यातें आप परत्व दुर्लभत्वेन कहें। 'तथा मे मनसि क्वचित्' इति । यातें निष्कर्ष यह जो जितनी सेवा को अधिकार कृपा करिके दीये हैं, तितनी सेवा आशय पूर्वक करे । सेवक संपत्ति बिना विदेशादिक जाय तब सेवा

न होय । आवे तो सेवाको भावना आशय पूर्वक करनो ।

गायको सुधा संबंध है, यातें प्रभुको जागिवे को समय जानि, घंटा जो स्थापित बैकुंठ में है, ताकी ध्वनि करत है। गाय त्रिविध है, सत्त्व रज, तम भेद करिके है । तीन वेर घंटा बजावत हैं । प्रभु के जागे पहेलें फेरि गोप मंत्ररूप हैं, इनहू को यथाधिकार सुधा सम्बंध है, वे शंखनाद करत हैं । गोप हू त्रिविध हैं । तातें ये हू तीन वेर शंखनाद ध्वनि करत हैं । व्रजभक्त तो पहेले ही सर्वाभरण भूषित होइ, गृहमंडनादिक करि, उच्च स्वरसों गान करत, दधिमथन करि, नवनीतादिक सिद्धि करि, प्रभु के जागिवेको प्रतीक्षा करत हते । इतने में शंखनाद सुनि नंदालय में पधारत हैं । यहां श्रीमातृचरण जगावत हैं । तब व्रज भक्त प्रबोध पढ जगाबत हैं । सूर्योदय समय निद्रा निषिद्ध जानि, श्रीमातृचरण हू जगावत हैं । तब प्रभु जागि, मातृचरण की गोद में बैठत हैं। तहां ऋषिरूपा प्रभृति बालभोग धरत हैं, तब श्रुतिरूपा प्रभृति दर्शन करि, आप अपने घर आय, भावनापूर्वक बालभोग धरत हैं । पाछें मंगला आर्ती के दरशन कों पधारत हैं । यहां मंगला आरतो भये पाछें नित्य तो तप्तोदक सों स्नान, और अभ्यंग के दिन फुलेल उबटना लगाय के तप्तोदक सां स्नान कराय, फेर केसर लगाय, फेर तप्तोदक कों स्नान । हाथ को सुहातो उष्णजल राखीये । 'कहा ओछो व्हे जात' इत्यादि भावना । बालक हैं, ऊठि न भाजे तातें

कछु भोग पास राखत हैं । शृङ्गार भये पाछें गोपीवल्लभ भोग । ब्रजरत्ना को मनोरथ हैं । पाछे ग्वाल में तबकडी हैं सो भावात्मक है । पाछे डबरा को भोग आवे । श्रृङ्गार भोग आवे तो भावना पृथक् । जो पालने बैठे तों एक प्रकार यह् हैं । गोपीवल्लभ प्रभु की ओर को । राजभोग के ४ भेद हैं, १ घरको—'जेंवत नंद कहात इक ठोर' २ बनको—छकिहार चार पांच आवत मध्य ब्रजराज ललाको । ३ न्योतेको वृहद्-भोग को प्रकार ५६ भोग । ४ निकुंजको—'जेमत रंगमहल गिरिधारी' यह चार भेद कहें । बीड़ी, आरसी अनोसर उत्थापन भोग । श्रीगोवर्द्धन हरिदास वर्य को प्रेषित पुलिंदी फलादिक ल्याय अन्तरंग भक्तन को देत हैं । वा समे प्रतीक्षा करि, जगाय, भोग अंगोकार करावत हैं । गोपमंडल को पधरावत हैं । तब पुलिंदीनकों अलौकिक दर्शन तथा अनुभव भयो, श्रीगोवर्द्धन हरिदासवर्य भगवदीय श्रेष्ठ के संग तें । फिरि गोप मंढली में पधारि, श्रीबलदेव जी तथा बड़े गोप वे गायन के आगे, मध्य गाय पाछें प्रभु, तथा अंतरंग गोप, मार्ग में संध्याभोग स्वीकार करत हैं । तहां 'हांक, हटक, हटक' इत्यादि कीर्तन को भाव । काहू सों हाँ करी काहू सों ना करी' या उक्ति में दक्षिण नायकत्व में न्यूनता आवें, तातें यहां भक्त द्विविध हैं । दर्शनाभिलाषी हैं । तहाँ खंडिताद्योतक हैं । तहां दर्शनाभिलाषी को तो हां करि और खंडिता के द्योतक हैं वे कहें, कालि की रीति, ता प्रति ना करी, यह हां करी । सिवद्वार पधारे तब संध्या आरती मातृचरण करत हैं । मंदिर में पधार सिंगार बडो करि, रात्र को सिंगार स्वीकार करि, यह सेवा अधिकारी जे हैं तिन कृत ।

"गताध्वन: श्रमौ तत्र मज्जनोन्मर्दनाभि: ।
नीवीं वसित्वा रुचिरां दिव्यस्रग्गंधमंडितौ" ।।इति।।

फेरि ग्वाल स्वीकार करि तहां "निरखि मुख ठाडो हैंमे" इत्यादि भाव । फेरि शयनभोग । दूसरो भोग यह सेवा श्रीरोहिणीजा के कृत । श्रीमातृचरण अरोगावत हैं । आचमन मुखवस्त्र, पाछें श्री नन्दरायजी को चर्वित ताँबूल लेत हैं । जैसे मंत्ररूप गोप, तिनकी छाक समय झूठन बाधक नाहीं । तैसें विशुद्ध सत्त्व करि, पदार्थ सिद्धि होइ तो प्रभु अङ्गीकार करें । तैसें श्रीनंदरायजी विषे जानोये । शयन आर्ती पाछें पोढे । तहां झारी २ बंटा, सेनभोग को बीडा, पुष्पमाला पास रहे । और दुपहर की प्रसादी माला हाथ में लेइ आंखिन को लगावे । तब यह भाव राखें जो माला यश को प्रसारित करत हैं । जैसे पुष्पगन्ध, ताको दान भयो, तब यश को दान भयो । फेर आंख सों लगावे । तब ज्ञानेन्द्रिय के स्पर्श तें यश को ज्ञान होय । यश के दान तें लौकिक में जहां आसक्ति होय तहां तें छूटि भगवदासक्ति होय । "यशो य दि विमूढानां प्रत्यक्षासतिवारणात्" इति । या प्रकार प्रत्यूहको यत्किञ्चित् भाव लिखे ।

❀ जन्माष्टमीको भाव ❀

पंचामृतस्नान पीछें अभ्यंग स्नान । शृङ्गार में केसरी वस्त्र । लाल जडाव के आभरण, सुधा को आविर्भाव भयो है । वर्ण गौर है, सो शृङ्गार को उद्बोधक है तातें केसरी वस्त्र । उभयत्र प्रीति को हू आविर्भाव वाही दिन, तातें लाल आभरण । लाल वर्ण है, सो शृङ्गार में जो रस, ताको उद्बोधक है । 'श्यामं हिरण्यपरिधिं' याकी सुबोधिनी में निरूपित है । शृङ्गार भये पाछें तिलक भेट, आर्ती यह सो मार्कंडेयपूजावत है । याहीं ते शृङ्गारोत्तर भोग में ओट्यो मीठो दूध में गुड़ के टूक तथा सेत तिल डारने वामें कटोरी वा चमचा, ऐसो दूध भोग धरनो ऐसी रीत है ।

'सतिलं गुडसंमिश्रमंगुल्यर्धं शृतं पयः ।
मार्कंडेय महाबाहो पिबाम्यायुः समृद्धये' ।।

यह नन्दालय को भाव । यह लीला ताँई जन्मदिन की लीला कहें । फेरि नित्य विधि । अर्धरात्रि तें जन्मलीला । महाभोग आये पाछें छट्ठी पूजे । सो छट्ठे दिन मुहूर्त आछो न होय तो जन्म के दिन पूजे, तातें पूजत हैं । पालने बैठावने, तथा कपड़ा आवे सो खिलौना की तबकडी में बंटा में धरनें यातें जो श्रीनन्दरायजी के सगे संबंधी पालने बैठे ताके समय आवें । झगा टोपी को वस्त्र तथा हाथ पाँव के चूडा को रोक, यह सौभाग्य को प्रभु हमको अधिकार दीये हैं । यह भाग्य, या प्रकार कों मान सेवा करे तो । भगवत्प्रादुर्भाव साथही सुधाविर्भाव हैं, तातें नौमी के दिन पहलें दिनकों शृंगार रहें, और नन्दालय में प्राकट्य नवमी है, तब तो नवमी जन्म दिन भयो ही । इतने अस्वनक्षत्र में दशमी के दिन यह शृङ्गार होय । आभरण को नेम नही वस्त्र को नेम । और जन्माष्टमी के दिन उत्थापन भये, भाग धरि सज्या के वस्त्र घड़ी कर धरने । सज्जा और ठौर धरनी । रात्रि को सज्या न रहे । फिर नवमी के दिनहू दुपहर को बिछे । यातें 'अहीरन की जो, एहि रीति दोइ राति जागें'' जन्मदिन को, तथा देवकाज को दो । यह रीति जन्मदिन के राति जगे में जाको जन्मदिन ताको जगावनो । देवकार्य के रातिजगे में जो बडो होय सो जागे । यातें जो यह जन्मदिन को रातिजगो है, तातें शैया न रहे और प्रबोधिनी के दिन तुलसी के ब्याह को राति जगो है, सो देवकाज है, तातें वा दिन श्रीनन्दरायजी मुख्य जागें । प्रभु तो जागे हूँ पोढे हूँ, यातें शय्या रात्रिकों बिछी रहे तथा शय्याभाग प्रभृति हू रहे । और जन्माष्टमी कों शय्याभोग तथा रात्रि के बीडा सिंघासन पास रहें ।

दूसरो उत्सव । भगवत्प्रादुर्भाव तें दोय वर्ष पहले आविर्भाव । जब जन्माष्टमी भई पीछे उत्सव आयो, तब श्री वृषभानजी नन्दरायजी को निमन्त्रण करि बुलाये, तब सब आये । तहां प्रभु तो उत्सव को ही वागा पहिरे । जन्माष्टमी को सुधाविर्भाव भयो । यहां सुधाधार को आविर्भाव भयो ।

यहां सुधाधार को आविर्भाव भयो। तातें यहां केशरी वस्त्र नये हैं। प्रभु को कुलही मात्र नई होय तो आछी। तुर्र वेई रहें। गोटी तथा धारी को वस्त्र नयो होय। और जन्माष्टमी को श्वेत कुलह ही होय तहाँ तो दूसरे उत्सव को केशरी होय। जहाँ श्रृङ्गारोत्तर तिलक होय तहाँ जन्मदिन को भाव। जहाँ राजभोग आयवे के समें तिलक होय तहाँ सुधा स्थापन को प्रादुर्भाव। आधाराधेय एक भये। जहां राजभोग आर्ती पीछे तिलक तहाँ जन्मसमें को भाव। प्रहर दिन चढ़े प्रागट्य हैं तातें पञ्जीरी तथा दही भात तथा खाटो भात तो होय। अठमासा को भोग। महा भोगवत्। यह राजभोग के संग भोग आवें।

दानलीला। मुकुट काछनी को श्रृङ्गार, मुकुट उद्बोधक हैं, काछनी में घेर है, सो सबन को एकत्र करत हैं। श्रीहस् में वेत्र है सो यष्टिका है, यष्टिका ब्रह्मा है। "यष्टिका कयलासन:" इति। ब्रह्मातें उत्पत्ति है, तैसें बेत्र, सो दान के लेवे के अनेक प्रकार के जे तरंग तिनकी उत्पत्ति करत हैं। प्रभु सुधा सम्बन्ध बिना अंगीकार न करें तातें गौ में जो सुधा को स्थापन ताको दान माँगनो सो भक्तनके अवयवद्वारा अनुभावार्थ दानलीला है।

वामनद्वादशी। कटिमेखला जो क्षुद्रघण्टिका, ताको अवतार। भूरूप कटि है, ताको आभरण सो कर्मरूप है। कर्म को अधिकार भूमिपर ही है। क्रियाशक्ति को आविर्भाव है, याही तें क्रियाशक्ति जो चरण ताको विस्तार किये हैं।

भक्तिमार्ग में यह उत्सव मानत हैं ताको आशय वैष्णव को विष्णुपंचक व्रत करनें। पाद्मोत्तरखण्डे द्वारकामाहात्म्य समाप्तौ।

"गोविन्दं परमानन्दं माधवं मधुसूदनम्।
त्यक्त्वा नैव विजानाति पातिव्रत्यव्रत: शुचि:।१।
कृष्णजन्माष्टमीरामनवम्येकादशीव्रतम् ।
वामनद्वादशी तद्वन्नृहरेस्तु चतुर्दशी ।।२।।
विष्णपंचकमित्येवं व्रतं सर्वाघनाशनम्।
नित्यं नैमित्तिकं काम्यं विष्णुपंचकमेव हि।३।

न त्याज्यं सर्वथा प्राज्ञै रनित्यं सर्वथा वपुरिति" एकादशी २४ मिलि १, जन्माष्टमी १ रामनवमी १ नृसिंहचतुर्दशी १ वामनद्वादशी ये विष्णुपंचक व्रत करने। किंच, पुष्टि मार्ग में भक्त दुःख निवारणार्थ जो आविर्भाव सो मान्यो चाहिये। तहाँ मत्स्यावतार वेद के उद्धारार्थ प्रगट, कूर्मावतार चतुर्दश रत्नार्थ प्रगट। वराहवतार ब्रह्मा सृष्टि काहे पर करें तातें भूमि के उद्धारार्थ प्रगट। भूमि भक्त हैं तातें उद्धार यह कारण नहीं, किन्तु ब्रह्मा सृष्टि काहे पर करें? भूमि भक्त हैं तातें उद्धार तो पूर्णावतार विषें। नृसिंहावतार जो प्रहलाद सो भक्त तिनको क्लेश सह्यो न गयो तातें प्रगट। यह उत्सव मान्यो चाहिये। यह प्राकट्य भक्तोद्धारार्थ है। वामनावतार यद्यपि इन्द्र की स्थिरता कों बलि को छलिवे

कों पधारे, परन्तु राजा बलि कों आत्म-निवेदन भक्ति भई तातें यह हू भक्तार्थ प्राकट्य। यह उत्सव मान्यो चाहिये। परशुरामावतार दुष्टक्षत्रनाशार्थ प्रकट। श्रीरामावतार चतुर्व्यूह सहित प्रगट। व्यूहांतर्गत प्राकट्य, तातें मर्यादा पुरुषोत्तमावतार तें यह उत्सव मान्यो चाहिये। श्रीकृष्णचंद्र प्राकट्य में, व्यूह चार जुदे प्रगट। बलदेवावतार भूमिभारनिराकरणार्थ प्रकट। बुद्धावतार में कलिकालानुरूपतें पाषंड के वक्ता। कल्क्यवतार में तों दुष्ट म्लेच्छ विनाशार्थ प्रगट। यातें यह निष्कर्ष। श्रीराम तो मर्यादा पुरुषोत्तम हैं, तातें उत्सव मान्यो चाहिये। श्रीकृष्णावतार तो पुष्टि पुरुषोत्तम यातें मुख्य हैई। यह उत्सव तो सबको मूल है। यह उत्सव अवश्य माननो ही, जे सारस्वतकल्प में प्रगट भये तिनकों। ऐसे तो प्रति कलियुग कृष्णावतार है सो पूर्ण नहीं। इनको उत्सव माननों।

प्रसंग तें इनके व्रत को निर्णय लिखियत हैं। निबंधांतर्गत सर्व निर्णय:—

'अत्र वैष्णवमार्गे वेदमार्गविरोधो यत्र।
तन्न कर्त्तव्यं यद्ययमनित्यो धर्मो भवेत्॥
नित्येऽपि वेदविरोध: सोढव्य इत्याह।
'शंखचक्रादिक' मिति, सार्द्ध श्लोकद्वयमिति शेषः॥

निर्गुणभक्तियुक्त जो पुष्टिभक्तिमार्ग, ता विषे वेदविरोध न करिये। वेदविरोध सो वेद में नहीं कह्यो सो न करनो।

जो अनित्य धर्म होय तो। अनिन्य धर्म दोय, नक्षत्र के योग करके जयंति १ तथा सकाम १, ये दोऊ अनित्य धर्म वेद में नहीं कहें, ते न करने। और नित्य धर्म है, सो करनो। नित्य धर्म दोय उत्सव १ तथा निष्काम ये करनो। अढ़ाई श्लोक ताही को निर्णय—

"शंखचक्रादिकं धार्यं मृदा पूजाङ्गमेव तत्।
तुलसीकाष्ठजा माला तिलकं लिङ्गमेव तत्॥
एकादश्युपवासादि कर्त्तव्यं वेधवर्जितम्।
अन्यान्यपि तथा कुर्यादुत्सवो यत्र वै हरेः॥
वन्हिनैव तु संयुक्तं चक्रमादाय वैष्णवः।
धारयेत्सर्ववर्णानां हरिसालोक्यकाम्यया"॥

"तप्तमुद्राधारणं काम्यं, काम्य धारण करिये ते अनित्य धर्मको स्वीकार होय, तो वेदविरोध बाधक होय, यातें मृदा मुद्राधारण करिये। 'शंखचक्रादिकं धार्यं मृदा पूजाङ्गमेव तत्' इति वाक्यात्। मृदा धारण न करिये तो बाधक है। "शंखादिचिन्हरहितः पूजां यस्तु समाचरेत्॥ निष्फलं पूजनं तस्य हरिश्चापि न तुष्यति॥ शंखादिचिन्हधारणबिना पूजा में जाय तो पूजन हू निष्फल होय, तथा हरि हू प्रसन्न न होय यातें पूजा को अंग जानि अवश्य धारण कर्त्तव्य है।

अब कहत हैं, पूजाको अंग है, सेवा को तो अंग नहीं, पुष्टिमार्गीय को तो सेवा आवश्यक है। तहाँ कहत हैं, सेवा मुख्या, न तु पूजा, मन्त्रमात्रपूजापरो न भवेत्। सर्वपरिचर्या

सेवा। वस्त्र धोवे तहां ताई सेवा। अति बहिरंगता हि सेवा। तामें जा सेवा को काल को अनुरोध है सो पूजा। यह पुष्टि मार्ग में सेवा तथा पूजा को भेद। काल को रोध जा सेवा को सो पूजा। जैसें मंगल भोग, मंगला आरतो, यह प्रात ही होय। शयनभोग शयन आरती यह साँझ ही होय। यातें प्रधान भोग है। ताकी आवृत्ति होय तो अंग कौन है? आचमन, मुखवस्त्र, वीटिका ताहू की आवृत्ति होय। जों भोग नहीं तो आचमन वस्त्रमुख काहेको? "प्रधानावृत्तावंगान्यावर्त्तते" इति, प्रधान ही अंग है, 'मृदा पूजांगमेव' इति वृत्तौ हेतुमाह "एककालं द्विकालं वा त्रिकालं वापि पूजयेत्," तैसें शङ्ख-चक्रादिधारण पूजा को ही अंग है। 'मृदा पूजांगमेव च' इति एवकार कहें। जब मंदिर में जाय तब षट् मुद्रा धारण करे। जो सहज न्हानो होय वा विदेशादि में तब मुद्रा धारण सर्वथा न करे। परन्तु यों कह्यो है "ऊर्ध्वपुंड्ं त्रिपुंड्ं वा मध्ये शून्यं न कारयेत्" ताते ऊर्ध्वपुंड्ं शून्य न राखनो। संप्रदायमुद्रा धारण करे "संप्रदायप्रमुक्ता च मुद्रा शिष्टानुसारतः॥ यथारुच्यथवा धार्या न तत्र नियमो यतः।" संप्रदाय 'श्रीगोपीजनवल्लभाय' यह अवश्य धारण करनी। या उत्तमांग में धारण करे यह शिष्टानुसार है। हृदयपर्यंत उत्तमांग चक्रवत् मध्यमांग में नहीं। 'उच्चैश्चत्वारि चक्राणि इति च। ५ मुद्राको पूजामें धारण हैं, सो संप्रदाय मुद्रा को नेम नहीं। उत्तमांग में यथा रुचि धारण करे। 'यथारुचि

तथा धार्या,' यामें अथवा पद है, सो पक्षांतर है, तात या मुद्रा को नियम नहीं जो पूजा के ही अंग में धारण करे। जब स्नान करे तब धारण करे। तिलक शून्य न राखनों, तातें टीकी देनी याको वचन नहीं। और संप्रदायमुद्रा को तो अथवा पद करिके धारण है, यातें संप्रदाय मुद्रा तो सदा धारण करे। और षट् मुद्रा तो सेवा में जाय तब धारण करें। यातें सकाम तें सप्तमुद्रा को त्याग, निष्काम तें गोपीचंदन करिके धारण करे।

किंच और माला, वामें हू तुलसी की माला धारण करे। भगवान कों प्रिय हैं। वा शुद्धकाष्ठ को धारण करें, जामें काहू देवता को भाग नहीं। सो शुद्धकाष्ठ वैष्णव है "वैष्णवा वै वनस्पतयः" इति श्रुतेः। याते ये दोऊमाला निष्काम हैं, तातें धारण करें तथा जपहू करें। और माला रुद्राक्षभृति सकाम हैं तातों स्वीकार नहां। वेद विरोध बाधक होय, और तुलसी को तथा शुद्ध काष्ठ की माला धारण न करें तो बाधक है।

"धारयंति न ये मालां हैतुकाः पापबुद्धयः।
नरकान्न निवर्त्तते दग्धाः कोपाग्निना हरेः" ॥

याही तें आज्ञा किये 'तुलसीकाष्ठजा माला धार्या यज्ञोपवीतवत्" मालापि धार्या। यज्ञोपवीत माला में यह भेद, यज्ञोपवीत टूटि जाय तब और ही पहिरे, और माला टूटि जाय तो मणिका काढि गाँठि बाँधि लेइ वही माला काम आवे।

किंच तिलक ऊर्ध्वपुंड्र करे। भगवच्चरणारविंद की आकृति करे। यह निष्काम तिलक, और तिलक सकाम, यातें अनित्य धर्म सो वेदविरोध, यातें निष्काम सो हरि मंदिरं।

"ललाटे तिलकं यस्य हरिमंदिरसंज्ञकम्।
स वल्लभो हरेरव नीचो वाप्युत्तमोपि वा" इति॥

इतने तिलक भगवच्चरण च्युत भये तातें सो तिलक धारण न करिये।

"वर्तुलं तिर्यगच्छिद्रं ह्रस्वं दीर्घतरं तनु।
वक्रं विरूपं बद्धाग्रं भिन्नमूलं पदच्युतम्।"

वर्त्तुलं गोल १, तिर्यक् त्रिपुंड्र २, अच्छिद्रं ऊर्द्धपुंड्र चौरे बिना ३, ह्रस्वं छोटो ४, दीर्घतरं नासिकांतम् ५, तनु अति पतरो महीन ६, वक्रं बांको ७, विरूपं एक लकीर मोटी एक पतरी ८, बद्धाग्र ऊपर तें बंध्तो ९, भिन्न मूल भ्रोंह के मध्य दोऊ लकीर जुदी १०, इतनें तिलक भगवच्चरणारविंद तें छूटे याते यह तिलक सकाम, ते न करने। ऊर्ध्वपुंड्र निष्काम, यही तिलक करनो।

किंच एकादशी में दशमी को बेध न आवे ऐसी करनी। तहाँ बेध ४ चार प्रकार को। ४५ को एक, ५० को एक ५५ को एक ५६ को। एक प्रथम स्पर्शवेध १, द्वितीय संगवेध २ तृतीय शल्यवेध ३ चतुर्थ बेधबेध ४।

"पंचपंचाशता शल्यवेधः षट्पञ्चाशताः मता।
स्पर्शादिकचतुरो बेधान् वर्जयेद्वैष्णवो नरः"॥

यातें ४३ घटी ५९ पल तांई वेध नहीं ४४ पूर्ण भई और या ऊपर जितने पल ४५ के हें यह स्पर्शवेध १, ऐसे ४८ घटी ५९ पल तांई वेध नहीं। जब ४९ पूर्ण भई और या ऊपर जितने पल सो ५० के हैं, ये संगवेध २। ऐसे ५३ घड़ी ५९ पल तांई वेध नहीं जब ५४ पूर्ण भई ओर या ऊपर जितने पल सो ५५ के हैं, यह शल्य वेध। ऐसे ५४ घटी ५९ पल तांई वेध नहीं, जब ५५ पूर्ण भई तापर जितने पल सो ५६ के हैं, यह वेधवेध ४। या प्रकार चार वेध युग भेद व्यवस्था सों मानिये।

"स्पर्शादिचतुरो वेधाः सुप्रसिद्धाः कृते हि वै।
संगादयस्तु त्रेतायां शल्यादौ द्वापरे कलौ॥"

स्पर्शवेध सत्ययुग में १, संगवेध त्रेता में २, शल्यवेध द्वापर में ३, बेधबेध कलियुग में ४। यही निष्कर्ष लिखे। षट्पंचाशद्वेधरहितं कर्त्तव्यं, पूर्वमन्यथाकरणेपि भगवन्मार्गे प्रवेशानन्तरं पञ्च पञ्चाशद्घटिका दशमी चेत्तदा एकादशी त्याज्या। यातें कलियुग में ५६ को बेध मानिये। जबही ५५ दशमी भई, तब वह एकादशी न करें सकाम तें न करिये। बेद विरोध बाधक होय तातें बेध ५६ को, बेध न आवे सो निष्काम, ऐसी एकादशी २४ करिये।

किंच जन्माष्टमी में ७ सप्तमी को बेध न आवे ऐसी करे । याको अरुणोदय वेध नहीं किंतु सूर्योदय वेध है । “उदयादुदया प्रोक्ता हरिवासरर्जिता” इति वाक्यात् । यातें अष्टमी सहित नौमी ९ ९ जन्म तिथि है, माया को जन्म नवमी में कह्यो है ।

“नवम्यां योगनिद्राया जन्माष्टम्यां हरेरतः ।
नवमीसहितोपोष्या रोहिणी बुधसंयुता”। इति यह निष्कर्ष ।

सूर्योदय में सप्तमा एक पल हू होय सो न करिये, बाधक है । “पलवेधेपि विप्रेन्द्र सप्तम्या चाष्टमीं युता ।। “सुराया बिंदुना स्पृष्टं गंगांभः कलशं यथा” इति। सूर्योदय समें सप्तमी होय, पीछे अष्टमो भई, और दूसरे दिन कछु अष्टमी होय, यह बिद्धाधिका कहिये । ऐसी होय तब दूसरे दिन को उदयात् अष्टमी करें । और अष्टमी को सांटया भयो तब दोऊ दिन अष्टमी उदयात् है, यह शुद्धाधिका कहिये । ऐसी होय तब पहले दिन करिये । पहली उदयात् न करे तो ३२ अपराध में निवेश होय । अविद्धभगवद्व्रतत्याग । वेध रहित भगवद्व्रत को त्याग न करिये । और दूसरो उदयात् अष्टमी को व्रत करे तो तिथि मल है । सूर्य ६० घडी को भोग किये ता पीछे घडी रहै सो मल है । यह घडी एकठ्ठो होय तब तीसरे वर्ष मलमास आवत है । तातें वा महीना में उत्सव न करनो । तैसे ये शेष घडो रहीं तिनमें उत्सव करे तो मल

य । एकादशी तो मल में करें, वाधक नहीं । और कछु मल न करें ।

“पष्टिदंडात्मिकायास्तु तिथेर्निष्कक्रमणं परे । अकर्मण्यं थिमलं विद्यादेकादशीदिने” इति ज्योर्तिनिबंधवाक्ये ॥

ऐसे अष्टमी को क्षय भयो तहाँ उदय काल तो सप्तमी में अष्टमी वाही दिन है, दूसरे दिन तो शुद्ध नवमी है, यह द्धान्यूना कहिये । तातें सप्तमोसंयुक्त जो जन्म तिथि है में तो उत्सव होय नहीं,जैसे गंगाजल को घट भर्यो है, और में मदिरा को छींट पड़े तो सब घट अपवित्र होय तैसें सप्तमो पलहू को स्पर्श अष्टमो कों होय तो मदिराबिंदुस्पर्शवत् । ह निष्कर्ष जो अष्टमी मुख्य है, नवमी अंग है बाही में त उत्सव करें, परन्तु जन्म तिथि सप्तमी संयुक्त में सर्वथा करें । करें तो साकाम तें वेद विरोध बाधक होय । तथा हिणी को जो मुख्य मानि के व्रत करे तो जयंति होय, तोहू द विरोध बाधक होय । यातें शुद्ध करनी ।

किंच रामनवमी को संपूर्ण व्रत करें । राम नवमी प्रभृति ानि भगवन्मार्गे कर्त्तव्यानि । जब नवमीविद्धा अधिका होय ब दूसरी करे । शुद्धाधिका होय तब प्रयोग करे। विद्धान्यूना ोय तब अष्टमो विद्धा करे । या व्रतकों दूसरे दिन पारणा आव-यक है । और भांति करे तो सकाम वाधक होय तब वेद विरोध ाधक होय । किंच नृसिंहजयंती तथा वामन जयंती ये दोऊ यन्ती व्रत तो ‘रामनवमोप्रभृतिव्रतानि’ या प्रभृति कहे तें

समाप्त भये। परन्तु इन दोऊन कों व्रत संपूर्ण नहीं, यातें भिन्न हैं। "नृसिंहजयन्तीव्रतमुत्सवश्चेत् कर्त्तव्यं," तथा वामन जयन्तीउत्सवकरणे,' तातें उत्सव पर्यन्त व्रत करे। जन्म ताँई उत्सव, फिर तो नित्य की रीति। जा काहू कों शयन आर्ती पीछें नृसिंहजो को वेष बनाइ तथा राजभोग आर्ती पीछे वामनजी को वेष बनाय दर्शन करनो होय अथवा द्वितीय-स्कंधोक्त भावना करनी होय, यह अवतार मेखलाप्रभृति के है तातें उत्सव पूर्ण नहो भयो। नृसिंहजी कों वेष भावना करतो होय तो रात्रि कों पारणा न करे। तैसे वामनजो को वेष वा भावना करनी होय तो पहिले एकादशो के दिन फला-हार करें, द्वादशो को उपवास करें। "एकादश्यामुपोषणम-कृत्वा द्वादश्यामुपोषणं कर्त्तव्यं"। निष्कर्ष यह, यहां उत्सव मुख्य हैं, व्रत तो मुख्य है नहीं। भोजन कीये पीछे उत्सव करनों निषिद्ध हैं। भगवदावेश न आवे।

'किम्बहुना उत्सवः प्रधानभूतः,
भुक्त्वा चोत्सवो निषिद्धः, भगवदावेभावात्।'

यावत्पर्यन्त उत्सव तहां ताँई व्रत करे। उत्सव होय चुक्यो और व्रत करे तो अनित्य जो जयन्ती व्रत ता आपत्ति करिके वेद विरोध वाधक होय। यातें यहां ताँई आग्रह राखिये जा देह नीको नहों, तोहू उत्सव होय चुक्यो तब कछू खाइये। आग्रह न राखिये, तो वेद विरोध वाधक होय।

'सम्पूर्णोपवासे तु अनित्यजयन्तीव्रतत्वापत्या वेद विरोधो

बाधको भवति।'

इन दोऊ जयन्तीन को सम्पूर्ण उपवास तो गोपालमन्त्र को अङ्ग है। जो गोपालमन्त्र न लीये होय और सम्पूर्ण व्रत करें तो वेद विरोध बाधक होय। यातें 'शंखचक्रादिकं धार्यं' याके आभास में कहे।

'अत्र वैष्णवमार्गे वेदमार्गविरोधो यत्र तन्न कर्त्तव्यं यद्य-नित्यो धर्मो भवेत्।

नित्येपि वेदविरोधः सोढव्य इत्याह, सार्द्धश्लोकद्वय' मिति शेषः।

आश्विन सुदी १ प्रथमपर्व। यव बोवनें। दश मृतिकापात्र में जुदे जुदे वोबे। प्रतिदिन नवोन अंकुरित होय। तातें नित्य सामग्री नई राजभोग में समर्पनी। ये सात्विकादिक नव भेद करि नवमी तांई सगुण भक्तन कों नवांकुरो भाव है।

आश्विन सुदी १० दशहरा समुदाय को भाव है। पर निर्गुण को मुख्य, याही तें श्वतकुल ही,' श्वेत तास को वागा, साडो, दिवारी के तास तें हलको तास होय। तास न होय तो श्वत छापा को। छापा न होय तो श्वेत मलमल को। दश प्रकार को भाव तातें जवारा समर्पिकें माठ दश भोग धरें। तैसें दश गोवर के पूर्वा करि पांच टिपका तथा मध्य पीरे अक्षर प्रत्येक पूर्वा के ऊपर धरे। प्रभु जवारे पहर चुकें तब जवारा पूर्वा पर डारें। जैसें ब्रह्मा पृथ्वी कों थापे तब सृष्टि अंकुरित भई। तब दश प्रत्येक भाव कों स्थापन

कोये। सिंदूर अक्षत फरि पूजन किये सो उभय स्वामिनी वर्ण विशिष्ट अनुराग युक्त कियें। फेर प्रभु को जवारा समर्पि जवारा इन पर धरे तब अंकुरित भगवद्विशिष्ट भये।

आश्विन सुदी १५ रास की। अष्ट भगवत्स्वरूप, षोडश, भक्त या प्रकार के अनेक मण्डल। अलौकिक चन्द्र को लौकिक चन्द्र में निवेश, मध्याकाश पर्यंत गमन, तहां तांई दोय दोय भक्त एक एक भगवत्स्वरूप, या प्रकार की लीला। फेरि अर्धरात्रि पीछें लौकिक चन्द्र को प्रकाश, तहां जितने भक्त तितने भगवत्स्वरूप। यह लीला और प्रकार की। रात्रि अलौकिक हैं, जो कुमारिकान कों वस्त्राहरण लीला विषे दिवस में रात्रि दिखाये, सो श्रुतिरूपा साधन सिद्ध हैं, इनको व्यापिवैकुण्ठ में नित्यलीलास्थ भक्तन को दर्शन भयो। तहां वर भयो। "कल्पं सारस्वतं प्राप्य ब्रजे गोप्यो भविष्यथ" और ब्रह्मा गोपीजन कों स्वरूप कहें तथा इनकी भक्ति हू कहें—"न स्त्रियो ब्रजसुन्दर्यः पुत्र ताःश्रुतयः किल॥ नाहं शिवश्च शेषश्च श्रीश्च ताभिः समः क्वचित्" इति, ये साक्षात् श्रुतिरूपा हैं, साधारण स्त्री नहीं। इनको भक्ति समान और काहू की भक्ति नहीं। ब्रह्मा शिव शेष लक्ष्मी ये सबकी भक्ति को स्वरूप। ब्रह्मा शिव को गङ्गासेवन द्वारा चरण सेवन भक्ति। शेष को नामद्वारा कीर्त्तन भक्ति। लक्ष्मी कों वनमालाऽर्पण द्वारा अर्च्चन भक्ति। इन सबन को मर्यादा भक्ति और ब्रजभक्तन

कों फलरूप आत्मनिवेदन भक्ति, तातें इनकी भक्ति सबनतें श्रेष्ठ है। ऋषिरूपा साधन साध्य भक्त, यातें व्रतचर्या में दिवस में अलौकिक रात्रि को दर्शन कराये और श्रुतिरूपान को तो व्यापि वैकुण्ठ कों दर्शन कराये। तातें और साधन रह्यो नाहीं। ऋषिरूपान कों तो कात्यायनी द्वारा अर्चनभक्ति, श्रुतिरूपान कों पुष्टिव्यसनरूपा आत्मनिवेदन भक्ति। यातें कुमारिकान की भक्ति तें श्रुतिरूपान की भक्ति श्रेष्ठ हैं।

कार्तिक वदी १३ धनतेरस। हरे ताप को बागा तथा चीरा हर्‌यो, ऐसी साड़ी। श्याम पीतरंग करिकें हर्‌यो होय। श्याम शृङ्गार गौर उद्वोधक। गौर सो पीत जब हरयो भयो। तब शृङ्गारोद्वोधक भयो। और हू तास को बागा होय तो श्यामतास एकादशी के दिन पहिरें। पीत तास द्वादशी के दिन पहिरें। धनतेरस के दिन हर्‌यो तास पहिरें। गोपोबल्लभ में फेनी पारी करे। भाव के उद्वोधक को आधिक्य चहिये। जैसें उदय समय को पूर्णचन्द्र।

कार्तिक वदी १४ रूपचतुर्दशी। अभ्यंग फुलेल उवटनों लगाय चुकें तब कुंकुम को तिलक करि, पोरे अक्षत लगाय, बोड़ा पास धरि, मुठिया चार बारि, चून की आर्ती करिये। हाथ धोय बोडा सिंगार को चौकी पर धरि, तप्तोदक सों स्नान कराय, फिरि केशर लगाय स्नान कराय; अंग वस्त्र करि लाल तास को बागा प्रभृति शृङ्गार। निरावृत श्रीअंग में फुलेल पर उवटना लगाइये। सो स्नान समें की

आर्ती के समें कहूँ श्यामता कहूँ पीतता दर्शन होय। सो पहिले दिन एक होय कें अन्यवर्ण होय गयो बागा कौ सो या समें दोऊ वर्ण पृथक् पृथक् व्यक्त दर्शन देत हैं। श्रीअंग में यह भाव उद्बोधक भयो। तातें आर्ती आवश्यक हैं। लाल तासको बागा सों उद्बोधक को अनुरागयुक्त करे, तास है यातें किरण प्रसरित भई। ऐसो दर्शन जिन भाग्यशील भक्तन को भयो तिनको दिवारी के समें की चतुष्पदिका के भाव को बोध भयो। या बागा को वर्ण अनुरागयुक्त हैं, तथा रजोगुण से स्मरोद्बोधक हैं। और दिवारी को वागा निर्गुण हैं, तथा आनन्द को धर्भ तम श्वेत है, सो लयात्मक है। किंच फुलेल स्नेह तें संयोग और उवटना रुक्ष तें वियोग उभयदलात्मक स्वरूप सम्पूर्ण शृङ्गाररूप एककालावच्छेदेन स्नान समें दर्शन भयो। तब तिलक करें सो जय पताका। मध्य धीरें अक्षत करि उद्बोधक मीन केतु भयो। बीड़ा दो २ धरें सो दलद्वय को तृतीयपुमर्थ को समर्पण। मुठिया ४ वारें सों लौकिक चतुर्विध पुरुषार्थ कालपात आर्ती कीये सो चारि जाति करि चतुर्विध जें भक्त तिनके अवलोकन द्वारा सम्पूर्ण श्री अंगानुभव भयो। छह बेर वारें सो षड् गुणैश्वर्यलीला सहित जो बहिर्दर्शनार्थ प्रादुर्भूत, तिनको प्रत्यंगानुभव भयो। शीघ्र बारें सो निरावृत को अवलोकन शीघ्र ही हैं, और यातें वेगि वेगि वारिये सो बात्सल्य तें शीत को समय है। बीड़ा भोग्य हैं सो शृङ्गार कीं चौकी पर धरें। तप्तोदकसों स्नान सों तम

यरूप हैं, तातें श्रम निवृत्ति द्वारा लीलांतर कों उद्वोधक
। केशर लगायकें स्नान होय सो तो केशर रज, तप्त तम,
ल सत्त्व, त्रितय भक्त कौ उद्बोधक भयो। स्वच्छ तें निर्गुण
को हूँ भयो। परि सत्त्व आगें हैं तातें सर्वथा तमकों ही
मुख्यता चाहिये। आनन्द को धर्म तम ही हैं, यातें फेरि
अंगवस्त्र करनों सो जल सत्त्व हैं, ताको रंजक हू अंश न
रहे, वातें अंगवस्त्र ऐसें करिये, सुखद सों प्रत्यवय में तें
जलांश की निवृत्ति होय। सूक्ष्म अवयव होय तो अंगवस्त्र
को बाती करि फिरावे। फिर श्यामस्वरूप होय तो फुलेल
समर्पि अंगवस्त्र करनों सो "स्नेहयुक्त दलितांजन चिक्कण:"
ऐसो स्वरूप सिद्ध करनो। स्निग्धनीरद श्याम में तें जल के,
और गौर स्वरूप होय तो स्नेह ऊपर हो वर्णसाम्य ते प्रगट
हैं। तब काहें कों स्नान ? पीछें फुलेल लगावें। अंगवस्त्र
करे। मनको भाव विदित करिवे कों प्रयोजन नहीं। वश्य
है उहां वर्षा के लिये स्वयंहृत प्रभृति हू लीला विशेष हैं और
अतर तो श्याम वा गौर द्विविध को समर्पनी ही। अधिक
सुगन्ध तें स्नेह व्यसनात्मक है। लाल तासको बागा नख-
शिख अनुराग युक्त करि, हीरा कें आभरण सो शुक्र को रत्न
हैं। आनन्दसारभूत पदार्थ को स्थापन, तेजतें उद्वोधक है।
सामग्री मालपूआ यह जुदे, बूरा बिना सुस्वाद नहीं, तसें अधर
संबंध होय तबही वकार को आविर्भाव होय, "वकारस्य
दंतोष्ठयं" वकार अमृत बीज है।

"प्रादुर्भवति वकारस्त्वदधरपीयूषदशनसंयोगात्,
तेनामृतबीजत्वं युक्तं प्राणप्रिये तस्य" इति स्वरूप प्राकट्य हैं।

तातें रूपचतुर्दशी। काम स्थिति चौदस को चरण में हैं, तातें ऐसी भक्ति विना यह पदार्थ तो गुप्त हैं।

दिवारी। रूपहरी तास को बागा, साडी, कुलही श्वेत सूतरू। तुर्रा किनारी लाल, सूथन लाल अतलस की वा दरियाई की। लाल पटुका निर्गुण अनुराग युक्त। दीवडा, गोपाल वल्लभ शयन आर्ती चौपड़ की सिंहासन पर होय। पीछे हटड़ी बैठवें कों पधारे। शय्या के आसपास सूको लीलो मेवा तथा मिठाई तथा दीवड़ा सामग्री में। चौपड़ की चोको के पास विराजवे की चौकी। शय्या के बीच बीड़ा को थार, तामें अंगराग की कटोरी तथा चोवा छोटी कटोरी में तथा बरास, पास फूल की माला। प्रभु पधारे, चौकी पर बिराजें तब सगरे घर के भेट धरें, सो भेट बाँटि के चौपड़ के आस पास धरिये। आर्ती चौपड़ को होय। पीछें शृङ्गार बड़ो इतनों होय, हार माला गुंजा चन्द्रिका क्षुद्र घंटिका बाजूबद चौकी पदक पान और दूसरी ठौर हू बड़ो हार तथा क्षुद्रघंटिका पीछे पोढाईये। सिंहासन बिछयो राखिये। शय्या तें लेके सिंहासन तांई पेंड़ों बिछाइये। पीछें बाहर निकसिये। चौपड़ को भाव, तामें गोटी १६ षोडशप्रकार के भक्त हैं, सात्त्विकसात्त्विक, सात्त्विकराजस, सात्त्विकतामस राजसराजस, राजससात्त्विक, राजसतामस, तामसतामस तामसराजस

तामससात्त्विक ये नौ भये। सत्, चित् आनन्द मिले १२ भये। चतुर्विध भक्त, नित्यसिद्धा में चार भेद हैं। वामभाग १ दक्षिण भाग १ ललिता प्रभृति १ तुर्य्यं प्रिया १ यह व्यापि वैकुण्ठ में। और अवतार लीला विषे या प्रकार चतुर्विध है-नित्य सिद्धा १, श्रीयमुनायूथ १, अन्यपूर्वा १ अनन्यपूर्वा १६ मिल सत्त्व के भेद के ३ तथा सत् यह श्यामरंग के वस्त्र पहरे हैं। रज के भेद के ३ चित्त १ ये ४ लाल रङ्ग के वस्त्र पहिरें हैं। तम के भेद के ३ तथा आनन्द ये ४ श्वेत वस्त्र पहिरें और चतुर्विध जे भक्त हैं सो भगवद्भावाविष्ट हैं विपराते, तब इनमें स्ववर्ण पीत है, भगवद्वर्ण श्याम पीत वर्ण दोऊ एकट्ठे हैं, ये ४ हरे वस्त्र पहिरें मिले १६ भये। पासा ३ हैं। सो तीनों सुधा सों क्रीड़ा, देवभोग्या १ भगवद्भोग्या २ सर्वभोग्या ३। पासा प्रति १४ अवयव हैं। विद्या हू चौदह हैं; १४ विद्या में निपुणयुक्तता जतावत दान करत हैं। ताही तें ३ विवेक सों दान। खण्ड ९६ हैं सो बन्ध ८४ और बन्ध जसें आधार तैसें शक्ति हू १२ बारह हैं।

"श्रिया पुष्ट्या गिरा कांत्या कीर्त्या तुष्ट्येलयोर्जया।
विद्ययाऽविद्यया शक्त्वा मायया च निषेविता" ॥१॥

येहू शक्ति हैं, तातें आधार है। मिलें ९६ छानवें भये। खेल में प्रभु के सन्मख दक्षिण भाग और वाम भाग के सन्मुख तुर्य्य प्रिया हैं। लाल रजोगुण युक्त तें प्रभु को यूथ। हरयो उभय प्रीति युक्त है, तातें दक्षिण भाग को यूथ हैं। श्याम

वर्ण प्रिय है तातें वामभाग को यूथ । श्वेत निर्गुण हैं सो तुर्य्यप्रिया को यूथ है । चार को एकत्र यूथ सो यातें "विभावानुभावव्यभिचारिसंयोगाद्रसनिष्पत्तिः" विभाव २ आलंबनविभाव १ तथा उद्दीपन विभाव १ तथा अनुभाव १ व्यभिचारो भाव १ तातें चार को यूथ ।

राग कन्हरो "एक अनूपम अद्भुत नारी ।
नैन बैन चौबीस चौगुने सोरह चरन वदन हैं चारी ॥ १ ॥
चतुराननसों प्रीति तीन पति ताकें इकईस दूने नैन ।
श्याम श्वेत आरक्त हरित पद चलत तब बोलतहीं बैन ।२।
राजस सात्त्विक तामस निर्गुण एक, युग्म दरशन को
आवत । मग्न भये सायुज्य मुक्ति फल त्रिविधरूप देखें सचु
पावत ॥३॥ इह विधि खेल रच्यो ब्रजमण्डल दीप दिवारी
प्रगट दिखाई । तुर्यरूपके यूथ विराजित छविपर द्वारकेश
बलि जाई ॥४॥

सात्त्विकादिवत जो रस भेद है, सो मेवा मिठाई के रस को आस्वाद । अंगराग, चोवा, बीड़ा, कपूर वर्णसाम्य करि चतुर्विधमुक्ति क्रोड़ा । दीवडा आकृति साम्य के । भेट सों होड़, होड़ सो होंस, होंससों क्रीड़ा को उत्कंठा । आर्ती हू चौपड़ की बारे, सी रसपरवशत्व सहित मोहित होय । भाव वारे ।

❀ अन्नकूट की भावना ❀

अन्नकूट उत्सव, मङ्गला आर्तीको रात्रि के वागा को

दर्शन होय, तातें ओढ़िके विराजें । श्रीमुखहीको दर्शन होय । रात्रि की लीला गोप्य है, तातें वागा को आच्छादन, आर्ती ताँई गोप्य हैं । वाही वागा पर श्रृङ्गार होय । यह मुख्य पक्ष और यहू पक्ष है, जो वागा बड़ो करि स्नान करें, फिर यही वागा पहिरें । कुलही सेत, तुर्रा लाल सूतरू किनारी, रूपहरी गोकर्णाकार । रात्रि खेल में लाल गोटी आपुको है ताको भाव सूचक लाल तुर्रा है । तथा श्रीहस्त में पीताम्बर है, सोऊ नारंगी रंग को दरियाई को वा केशरी दरियाई को । अन्नकूट के भोग में अनसखड़ो भोग प्रभु के आगें । निपट आगें माखन मिश्री राखिये । सखड़ी भोग अनसखड़ी के परे । प्रौढ़ भाव के भक्त अग्रेसर हैं तातें अनसखड़ो पास है । कोमल भाव के सलज्ज हैं, । तातें सखड़ी दूरि है । सन्ध्या आर्ती पोछे सिंगार बड़ो होय, तब कुलही रहें । तुर्रा बडो करिये ।

भाईदूज । अभ्यंग । वागा सूथन लाल पाट दरियाई वा अतलसके । हरयो चीरा सिंगार भये पोछे भोग में खिचड़ी, घी, संधानो, दही, पापड़ कचरिया प्रभृति । राजभोग में दही भात, अधको मे कछु अन्नकूट को सामग्रीमेंतें राखिये । सो गोपाल वल्लभ राजभोग आय चुके पाछे तिलक आर्त्ती पाछे थार सँवारिये । अवतार लीलाविषैं ऋषिरूपान का कोमल भाव—व्यापि वैकुण्ठ में श्रीयमुनाजी सम्बंधी

भाव । जलक्रीड़ा तें शीत सम्बंधी पाटको वागा तथा उष्ण भोग । श्रम तें शीतलभोग ।

गोपाष्टमी । मुकुट काछनी को शृङ्गार । अभ्यंग नहीं। यातें जो दानलीला की एकादशी तथा रास की पून्यो तथा गोपाष्टमी ये तीन उत्सव अवतारलीला के हैं तातें अभ्यंग नहीं । तथा नये वस्त्र नहीं । वही मुकुट काछनी को सिंगार तथा गोपालवल्लभ में नई सामग्री नहीं । ये तीनों लीला व्यापि वैकुण्ठ में सदा हैं । अवतार लीला में दिन को नियम है तातें वाही दिन होत हैं । लीला सदा है, वनमें पधारि के लीला किये । चतुर्विध पुरुषार्थ तथा दशरस मिले १४ रस की लीला वन में किये । 'एवं वृंदावने श्रीमान्' यह धर्म १, 'क्वचिन्दायंति' यह अर्थ २, 'क्वचिच्च कलहंसानां' यह काम ३, 'मेघगंभीरया वाचा' यह मोक्ष ४, येहू च्यार रस हैं। "एकायनोसौ द्विफलस्त्रिमूलश्चतूरस" इति" । चकोर क्रौंच, यहां तें दशरस, चकोर शृङ्गार १, क्रौंच वीर २, चक्राह्व करुण ३, भारद्वाज अद्भुत ४ बर्हि हास्य ५, व्याघ्रसिंह भयानक ६, क्वचित् क्रीड़ा वीभत्स ७, नृत्य तें रौद्र ८, 'क्वचित् पल्लव' शांत ९, अपरे कृतभक्ति' १०, ये चौदह रस की लीला वन में किये । इनको स्थायी भाव को प्रदर्शन ब्रज में अन्तरंग भक्तन को जतावत हैं । अलक है सो धर्म अर्थ काम मोक्ष को स्थायी भाव । गोरजश्छुरित कुंतल शोभा धायक, रति को उत्पादक, यातें शृङ्गार को स्थायी भाव । गोरज

व्याप्त तें जुगुप्सा भई सो वीभत्स को स्थायी भाव । बद्धबर्हं मोर कों मुकुट अग्रनिमित्त तें वीररस को स्थायी भाव जो उत्साह सो भयो । और मोरके पंख को बाँधि कें मुकुट सिद्ध देख आश्चर्य को स्थायी भाव जो विस्मय सो भयो । वन्य प्रसून बन संबंधी पुष्प है यातें वनविषे प्रीति है । फिरहू वन पधारें तो यह भय भयो । सो भयानक को स्थायी भाव । और प्रसून हैं प्रकृष्टा सूना है । तत्काल कुमिलाय ऐसे को धारण कहा ? यातें हास्य भयो सो हास्य को स्थायीभाव । रुचिरेक्षणं ऐसे सुन्दर नेत्र के दर्शन करन को वन में न गयो जाय तातें भयो शोक सो करुणा को स्थायी भाव । चारु हास देखिकें भयो क्रोध, यातें जो हम (तप्त) तलसत रहें, आप हंसत हैं, यह रौद्र को स्थायी भाव । वेणु को क्वणन सुनिकें प्रयत्नशैथिल्य भयो सो निर्वेद, यह शांतरस को स्थायीभाव । "अनुगैरनुगीतकीर्त्ति," अनुचर करिकें कीर्ति गायवे को अधिकार है । या करिके स्नेह भयो सो भक्तिरस को स्थायी भाव । या भांति १४ रस की लीला जो वन में किये ताके स्थायी भाव विशिष्ट ब्रज सों लीलास्थ भक्तन को दर्शन कराये ।

प्रबोधिनी ११ । अभ्यंग । पीरे पाट को वागा । लाल पाट को वागा । केशरी कुलही अथवा श्वेत कुलही । साड़ी बुलती, प्रभु को रुई को वागा । यहाँ रजाई फर्गुल ओढ़ युग्म । भद्रा न होय ता समे देवोत्थापन । जो सबेरे

देवोत्थापन होय तो राजभोग में फलाहार । सांझ कों देवोत्थापन होय तो शयनभोग में फलाहार आवे । श्वेत खड़ी को चौक सब मंदिर में पूरिये । निज मंदिर में तथा शय्यामंदिर में नहीं । जा ठौर देवोत्थापन होय ता ठौर चौक के खंड में गुलाल भरे । और हू विचित्र करनों होय तो और हू भाँतिके रङ्ग भरिये । खंडरो को मंडप करे, १६ को ८ को ४ को । जैसें सौकर्य होवे सो करे । बीचमें चौकी धरिये चारों कोनें दीवी पर दीवा धरिये । दीवो न होय तो भूमि में धरिये । सबेरे भद्रा न होय तो शृङ्गार भोग सरे पीछें प्रभु कों मंडप में पधराइये, नहीं तो उत्थापन भोग सरे पीछें पधराइये । पीछें देवोत्थापन तीन बेर करिये । और छोटे स्वरूप होय वा शालग्राम वा श्रीगोवर्द्धनशिला को स्नान पंचाभृत सों कराइये । पीछे अंगवस्त्र करि श्रृङ्गार करि पधराइये । धूपदीप करि छोटी टोकरो आगें धरिये । टोकरी में बैंगन शकरकंद, सिंघाड़ा, नये चणाकी भाजी, छोटे बेर, गडेरी, ये वस्तु कच्ची सँवारे बिना राखिये । जो मुख्य स्वरूप मंडप में पधारे होय तो रात्रि के चार भोग में को एक भोग मंडप में धरिये, तब रात्रि को तीन ३ भोग आवें । आरती करि सिंघासन पर पधराय राजभोग धरिये । और छोटे स्वरूप मंडप में पधारे होय तो धूपदीप करि, आर्ती करि पधराइये । तब रात्रि को चार भोग आवें । यह भाव जो मुख्यता निर्गुण को नहीं, यातें सगुण त्रिविध

हैं सो जगावत हैं । तातें तीन बेर देवोत्थापन । गंडेरी रसमय हैं । तातें याको मंडप । मध्य ग्रन्थि हैं सो इनको खांडित्य रीतिणो वक्रोक्ति । षोडश भाव विकार हैं "एकादशामी मनसो हि बृत्तय आकूतयः पंच धियोऽभिमानाः ॥ मात्राणि कर्माणि परं च तासां वदंति हैकादश वीरभूमोः" ॥ इंद्रिय ११, तन्मात्रा ५, मिलि १६, हैं । तातें १६ गंडेरी । नायका अष्टविध हैं ।

'खंडिता विप्रलब्धा च वासकसज्ञाभिसारिका ।
कलहांतरिता चैव तथैवोत्कंठिता परा ॥ १ ॥
स्वाधीनभर्तृका चैव तथा प्रोषितभर्तृका ।
संभोगे विप्रलंभे ता इत्यष्टौ नायिकाः स्मृताः ॥२॥

तातें ८, भक्त चतुर्विध हैं ताते चारि मंडप में दीवा करे । सो रस उद्दीपन करे । पंचामृत सों स्नान सो प्रभू विषे निर्दोष भाव की स्थिति रहे । फलादिक काचे धरनैं सो वय अपक्व है, अंकुरित है । तुलसी सों विवाह है तातें तुलसी अन्य संबंध न होन देइ । तातें सबको अभीष्ट । विवाह के चार भोजन तातें रात्रि को जागरण मे चार भोग । अवतार लीला विषे कुमारिकान का पतिभाव है तातें तुलसी के विवाहांतर्गत इनहू को विवाह है । इनको पतिभाव है तातें द्वारकालीला को अनुभव है । यह भक्त उभय लीलाविशिष्ट है । कितनेक भक्तन को ब्रजलीला में ही अंगीकार

राजलीला में नहीं । कितनेन को राजलीला में अंगीकार जैसे नंदादिक प्रभृतिन को । कितने भक्तन को राजलीला में ही अंगीकार ब्रजलीला में नही, जैसे वसुदेवादि प्रभृतिन को । कितनेक भक्तन को ब्रजलीला तथा राजलीला में दोऊन में अंगीकार जैसे श्रीयमुना जी उभय लीला विशिष्ट जतायवे के लिये तुर्यप्रिया यह नाम है । कालिंदी चतुर्थ हैं, यातें तैसे कुमारिका हू उभय लीला विशिष्ट हैं उत्तरार्ध की सोलमें अध्याय की सुबोधिनी में लिखे हैं 'नन्दगोप कुमारिका भगवता द्वारकायां नीता एव द्वारका माहात्म्ये त्रयोदशाध्याये ।

"अनुज्ञाता भगवता ततस्ता गोप कन्यकाः ।
नमस्कृत्य च गोविन्दं ययुः सर्वा यथागतम्" ॥ १ ॥

इति वाक्यात् । याही तें गोपीचन्दन द्वारका में हैं ।

श्रीगुसाँईजी को उत्सव । पौष वदी ९ । अभ्यंग । वागा नारंगी पाट को । कुलही केसरी । श्रीपादुकाजी को अभ्यंग । राजभोग सङ्ग जुदो भोग आवे । प्रभु को आर्ती करि श्रीपादुकाजी कों तिलक आर्ती । यह प्राकट्य स्वार्थ परमार्थ है । स्वार्थ तो सुधा को अनुभव वेणुहू कों है, वेणु अनुभव आपु करि और कों दैंइ । यहां और सो दैवी, तिनको उपदेश दारा सुधा स्थापन । यह परमार्थ । और परमार्थ तो 'जीवय मृतमिव दासं' यह भगवाक्य है । वाक्बन्ध हैं तातें वाक्पतिसुतको आभिर्भाव होय तो वाक बंध पूर्ण होय, तब सुधारस को आविर्भाव करि मुख्य स्वामिनी दासत्व को प्रार्थना किये । स्तोत्र अष्टक प्रगट किये । अतएव श्रुति प्रतिपाद्य सो ब्रह्म यह श्रीआचार्यजी को स्वरूप सुधा रूपत्व तें, जो श्रीकृष्णचन्द्र साक्षात् वेद के वक्तां त्यों यहां साक्षात् सुधा के दाता "अदेयदान दक्षश्चेति" । और श्रीगुसांईजी विषे वेणुभाव तें देह भावविशिष्ट जो गीता के वक्ता, त्यों यहां श्रीमदाचार्य प्रकटित पुष्टिमार्ग के प्रकाशकर्त्ता, तातें पुरुषोत्तम श्रीविठ्ठलनाथ" इति । श्वेतवाराहकल्पीय श्रीकृष्णावतार गीताके वक्ता हैं । इनमें गीता के वक्ता जा समें हैं ता समेंई पुरुषोत्तमाविर्भाव है और वेर तो मोक्ष के दाता हैं । सो वासुदेव कार्य । "कल्पेस्मिन्सर्वमुक्त्यर्थमवतीर्णस्तु सर्वतः ॥" इति और यहां तो सदा श्रीकृष्णाविर्भाव हैं, तातें उपदेश पुष्टिमार्ग के सदा हैं । गीतावक्ता को सर्वदा आविर्भाव नही । अतएव निवन्धे "सर्वं तत्त्वं सर्वगूढ़ं प्रसंगादाह पाण्डवे" । सबकों तत्त्व और गूढ है सो पूर्ण कला संयोग तें अर्जुन सों कहें । "पाण्डवे अर्जुने प्रसंगात् पूर्णयोगात् आह किंचित् ।" भारत में युधिष्ठिर को राज्यप्राप्ति पीछें अर्जुन प्रभु सों विज्ञप्ति किये ।

पूर्वमुपदिष्टं ज्ञानं मम विस्मृतं तद्वद, तदा भगवानाह । तत्तु योगयुक्तेन मयोक्तमधुना प्रकारांतरेण कथयिष्यते' इति निवन्धे ।

जैसे श्रीमदाचार्यजी विषे भगवद् भाव दास भाव यह दोऊ भाव पूर्ण हैं, तैसे श्रीगुसाँईजी बिषेहू ये दोऊ भाव पूर्ण हैं। किंच नौमी के दिन प्राकट्य हैं, ताहू तें दोऊ भाव पूर्ण को द्योतक नवमी हैं, नौमी को अङ्क पूर्ण हैं, अङ्क नोई हैं। आगें तो फेर पहलेइ अङ्क हैं। और नौ बड़ें तोहू नोही रहें। नो और नो १८ होय, एक और आठ नो। फिर अठारह नो सत्ताईस सो दोइ और सात नो। ऐसें ९० ताँई नोई रहे। याको आशय यह जो जैसें नोके अङ्क कों ऐसो पक्षपात, ९० ताँई बढे तोहू नो ही रहें, तैसे यहांऊ भक्त के उद्धार को पक्षपात। सजातीत या विजातीय को दुःसंग होय तोहू निवेदनांतर त्याग नहीं। श्रीपादुका जी विषें साधन भक्तिरूप चरणारविन्द को दर्शन करि फलरूप श्रीमुखभक्ति ताही को भाव विचारनों। ताते भोग धरनों तथा तिलक करनो। और बागा पाग न पहरें। आढ़नी वा रजाई ओढ़ें, सो दरशन में चरणारविन्द ही आवत है।

माह सुदी ५ वसन्त पंचमी। अभ्यङ्ग। रुई के वागा ऊपर श्वेत पाट को बागा, श्वेत कुलही, सिंघासन वस्त्र पिछवाई चन्दोवा सब श्वेत साज, राजभोग सरे पीछें झारी में जल भर लाल वस्त्र सूतरू लपेट, झारी में खजूर की डार में बेर खोंसें, तथा सरसों के फूल ऐसो वसन्त सिद्ध कर सिंघासन आगें धरि बसन्त खेलें। पीछें भोग तो पहले दिन ही आवे। और डोल ताँई नित्य बसन्त खेलें। तामें

झारी को बसन्त पहले पञ्चमी के ही दिन, वसन्तपंचमी कों काम को जन्म है। बसन्त ऋतु है सो काम को पूजन करत है। भौतिक काम लौकिक विषे हैं। आध्यात्मिक कामकों रुद्र दाह किये। आधि दैविक काम भगवान आप हैं "साक्षान्मन्मथमन्मथः" इति। आधिदैविक काम को आधिदैविक वसन्त ऋतु पूजन करत हैं। केशर चोवा अबीर गुलाल इतने करि पूजन। तहां केशर वामभाग वर्णसाम्य, चोवा भगवद्वर्ण साम्य, अबीर श्वेत तें हास्य प्रसन्नता, गुलाल तें अनुराग। दुपहर कों शय्या पास केशर अवीर गुलाल इतनों रहे, चोवा नहीं। यहां ताँई क्रीड़ा भक्ताधीन हती। शय्या पास क्रीड़ा भगवदधीन हैं, तातें चोवा नहीं। सब श्वेत साज यातें जो मुख्य निर्गुण का कृति। फेर रङ्गीन पाट के बागा १४ चौदश ताँई पहिरें। झारी में वसन्त धरनो सो पुष्पफलयुक्त हे। प्रबोधिनी को अंकुरित है। वसन्तपञ्चमी को पुष्पित भयो। १० मो ताँई उद्दीपन क्रीड़ा है। दश भक्तजन के भाव करि तातें वसन्त गावत हें।

होरी डांड़ो। अभ्यंग। बागा सूतरू श्वेत पाग श्वेत अब तें होरी ताँई पाट के बागा नहीं। रङ्गीन सूतरू बागा होंय सो छठ तांई पहरें। होरी डाँड़ो रोप्यो सो कन्दर्प को आरोपण किये। फाल्गुन कृष्णपक्ष की १ तें उतरे ३० तांई, १ मस्तक, २ नेत्र, ३ अधर, ४ कपोल, ५ कण्ठ, ६ कुक्ष,

७ युग्म, ८ उर, ९ नाभि, १० कटि, ११ गुह्य, १२ जंघा, १३ घोंटू, १४ चरण, १५ पदांगुष्ठ, याही प्रमाण १ तें पन्द्रह १५ ताँई चढ़ें । शुक्ल १ पदांगुष्ठ, २ चरण, ३ घोंटू, ४ जंघा, ५ गुह्य, ६ कटि, ७, नाभि, ८ उर, ९ युग्म, १० कुक्ष, ११ कंठ, १२, कपोल, १३ अधर, १४ नेत्र, १५ मस्तक, । यह प्रकार अलौकिक भावात्मक हैं; लौकिक बुद्धि सर्वथा न राखनो । आलंबन क्रीड़ा हैं महीना पर्यंत तातें धमार गावत हैं ।

श्रीजी को उत्सव । वड़ों, अभ्यंग । वागा केशरी, चीरा हर्यो, युग्माविर्भावतें । उत्सव दोय मुख्य । श्रीजी को १ तथा श्रीगोकुलचन्द्रमाजी को २ दोय उत्सव । गुप्त स्थान तथा आधार भेद मिलि ४ चार उत्सव । श्रीगोकुलचंद्रमाजी के इहाँ ४ उत्सव और मंदिरन में २ उत्सव हैं ।

फालगुन शुक्ल ११ तें खेल वडो । शयन आर्ती समें गुलाल उड़े, होरी ताँई ।

होरी । अभ्यंग, वागा श्वेत, पाग श्वेत । रात्रि कों होरी मंडली सो आरोपण । तेजोमय हैं यह द्योतन किये ।

डोल । अभ्यंग । वागा श्वेत पाट को, कुलही श्वेत । वसन्तपंचमी को शृङ्गार और डोल को शृङ्गार एक । शृङ्गार भोग सरे पीछे डोल बैठें । सो सूर्योदय पहिलें डोल बैठें, तो आछो । 'दोलोत्सव उत्तरानक्षत्रे अरुणोदयसमये कार्य.' इति पत्रलिखितत्वात् याही तें डोल तें उतरे पीछे राजभोग आवें । यह निकुंज क्रीड़ा है । तातें निज मंदिर मे डोल न झूलें, अतएव डाल तें उतरि बागा ऊपर को गुलाल सब पोंछि श्रीमुख पोंछें । आभरण पोंछि कें पहरावनें । पीछें राजभोग आरोगवे को निज मंदिर में पधारें । भोग तीन हैं सो वामभाग दक्षिणभाग ललिता प्रभृति समस्त कों, तातें तीसरो भोग बड़ो । खेल च्यार हैं सो ३ खेल तो इनके, चतुर्थ खेल प्रभु को । यह लीला अधिकार बिना विशेष भावनीय नहीं ।

चैत्रसुदी ९ रामनौमी । श्रीराम हस्यावतार हैं । अभ्यंग। केशरी वागा कुलही साड़ी । या उत्सव कों संपूर्ण व्रत हैं । "रामनवमीप्रभृतिव्रतानि भगवन्मार्गे कर्त्तव्यानि" इतिवाक्यात् । यातें श्रीनंदराय जी या उत्सव कों जन्मानंतर फलाहार करत हैं । तातें राजभोग सरे पीछें जन्म होय । उत्सव के भोग संग फलाहार भोग आवें । वसन्त ऋतु पुष्पित होय पूजत हैं, तातें डोल पीछें जब फूल आवें तबतें फूलमंडली होय । सिंहासन की मंडली अक्षयतृतीया के पहले दिन ताँई होय । और शय्यामंडली तथा सांगामांची की मंडली फूल होय तो वैशाख सुदी १३ ताँई होय ।

वैशाख कृष्ण एकादशी ११ श्रीआचार्यजी को उत्सव । अभ्यंग, केशरी कुलही, वागा छूटे बंदको वा पिछोड़ा, केशरी

साड़ी श्रीपादुकाजी विराजत होंय तो अभ्यंग । राजभोग संग जुदो भोग आवें । प्रभु कों आर्ती करि श्रीपादुकाजी कों तिलक करि अक्षत लगाय बीड़ा धरि मुठियां ४ बारि चूँन की आर्ती करिये । यह प्राकट्य परार्थ तथा परमार्थ हैं । परार्थ तो दैवी जीवन के उद्धारार्थ हैं—

“दैवी सृष्टिर्व्यर्था च भूयान्निजफलरहिता देव वैश्वानरैषा” इति । परार्थ तो भगवदर्थ, ‘न पारयेहं निरवद्यसंयुजां’ इति ।

अतएव दोऊ भाव मुख्य । भगवद्भाव तथा दास्यभाव । तहाँ भगवद्भाव तो:—

‘अर्थं तस्य विवेचितुं न हि विभुर्वैश्वानराद्वाक्यते ।
रन्यस्तत्र विधाय मानुषतनुं मां व्यासवच्छ्रीपतिः दत्त्वाज्ञां च कृपावलोकनपटुः । यह अशेषमाहात्म्य । और दास्यभाव तो “इति श्रीकृष्णदासस्य वल्लभस्य वचः” यह शेष माहात्म्य, दैवी के उद्धारार्थ प्राकट्य । यातें श्रीआचार्यजीन को प्राकट्य चिदानंदसद्रूपः । वैश्वानरः चित्, वल्लभाख्यः आनन्द, सद्रूपः—सत् ।

अक्षयतृतीया । अभ्यंग । पिछौडा, पाग, साड़ी प्रभृति धुइ सेत, कोर केसरी । राजभोग आये पीछे, चन्दन केसर मल्यो गाढो घसिये । एक छन्ना में धरि जल नितार डारिये गोली बाँधि गोला एक कीजिये । तहां प्रभु के लिये दो गोली

चरणारविन्द पर पहरायवे की, एक गोली वक्षःस्थल के लिये, ३ गोली सिद्ध करीये । स्वामिनी जी विराजत होंय तो दो गोली चरणारविन्द की सिद्ध करके राजभोग सरे पीछे पहिराइये । नये पंखा कीजीये । पाछें सीतल भोग धरिये । भोग सरे पीछे राजभोग आर्ती करि, हाथ धोय, चन्दन की गोली बडी करीये । मूर्तिमंत ग्रीष्म ऋतु को अङ्गीकार अक्षयतृतीया के दिन । यातें सबही सीतल सामग्री है । ऐसें वर्षा ऋतुको अंगीकार आषाढ सुदी छठ्ठ कसुंबा छट्ठ के षडरूपर्व दिन । शरद्ऋतु को अंगीकार भाद्रपद सुदी ११ दानलीला के दिन । हेमंत ऋतु को अंगीकार कार्तिक ११ प्रबोधिनी के दिन । शिशिर ऋतु को अंगीकार पौष वदी ९ श्रीगुसाँईजी के उत्सव के दिन । वसन्तऋतु को अंगीकार माघ सुदी पंचमी बसन्तपंचमी के दिन । ग्रीष्म ऐश्वर्य, वर्षा वीर्य, शरद् यश, हेमंत श्री, शिशिर ज्ञान, वसन्त वैराग्य ।

नृसिंहचतुर्दशी । अभ्यंग । पिछौडा, पाग, साडी प्रवृति, श्वेत धुइ सो निर्गुण तुरीया प्रिया । केसर छिडके सो वामभाग वर्ण साम्य । चोवा लगाये सो भगवद्वर्ण साम्य । लाल आभरण सो दक्षिणवर्ण साम्य । नृसिंहावतार है सो कौस्तुभावतार है । कौस्तुभ कंठ में है, क्रियाशक्तिः, ज्ञानशक्ति के मध्य में स्थापित है । चोवा है सो अवतार है, केसर तथा लाल आभरण के मध्य है । याही तें संध्या समे प्राकट्य है । या

उत्सव को शयन आर्ती पीछे सखडी महाप्रसाद लीजे सर्वथा, 'उत्सवांते च पारणं' मितिवाक्यात् । या उत्सव के पारणा को निर्णय वामनजयंती के निर्णय में विशद् करिकें लिखे हैं। तातें यहां नहीं लिखे ।

ज्येष्ठ सुदी १० गंगादशहरा । गंगाजी को उत्सव है । पहिलें गंगाजी कों भगीरथ जी जब पधराय लाये, तब हरिद्वार जो मायापुरी, तहाँ ताँई पधारे । आगें भगीरथ सङ्खध्वनि करत जात हैं । पाछें गंगाजी या प्रकार सों पर्वतन को विदारण करत पधारत हैं ।

"गंगावारि मनोहारि मुरारिचरणच्युतम् ।
त्रिपुरारिशिरश्चारि पापहारि पुनातु माम् ।।१।।
सन्तापहारि दुरितारि तरङ्गधारि शैलप्रचारि गिरिराजगुहाविहारि । साक्षात्कारकारि हरिपादरजो विहारि गागं पुनानुपठतः शुभकारि वारि ।२।"

हरिद्वार में जह्नु ऋषि ध्यान करत हते । ता समै गंगाजी को पधारवे को शब्द सुनि, क्रोध भयो जो ऐसा नदी कौन है ? में ध्यान करत हूँ, मेरे ऊपर आवत है ? सो क्रोध करि पी गये ? तब शब्द रहि गयो । तब भगीरथ फेरिके देखे तो श्रीगंगाजी को दर्शन न भयो । तब यों जाने जो यह ऋषीश्वर को कार्य है । यह जानि जह्नु की स्तुति किये । तब जह्नु प्रसन्न भये, पूछे कहा है ? तब भगीरथ कहे में श्रीगङ्गाजी कूँ हमारे पितरन को उद्धारार्थ पधराय लायो । सो अब दर्शन नहीं होत । तब जह्नु अन्तर्दृष्टि करिके भीतर देखे तो श्रीगङ्गाजी विराजत हैं । जब जह्नु भगीरथ सों कहे घर आई गंगा कौन छोडे ? में पान कियो । तब भगीरथ कहे मेरे पितरन को उद्धार कैसें होय ? तब जह्नु श्रीगंगाजी सों पूछे भगीरथ विनती करत है पितरन के उद्धारार्थ । तब श्रीगङ्गाजी आज्ञा दिये जो तुमको क्रोध भयो सो दक्षिणकर्ण तें श्रवण करके भयो है । सो दक्षिण कर्ण तें प्रवाह निकसेगा । सो वैशाख शुक्लपक्ष को सप्तमी के दिन प्राकट्य भयो । जह्नु के दाहिने कर्ण तें प्रकटे ।

"वैशाखे शुक्लपक्षे सप्तम्यां जह्नुना जाह्नवी स्वयम् ।
क्रोधात् पीता तुनस्त्यक्ता कर्णरन्ध्रात् च दक्षिणात् ।।"
इतिवाक्यात् ।

वैशाख सुदी सप्तमी को हरिद्वार में प्रकटे । पीछे ज्येष्ठ सुदी १० के दिन प्रयाग में श्रीयमुनाजी को समागम भयो । पहिलें चरण सम्बन्ध तें गङ्गाजी को यह माहात्म्य हतो "सो राजन् दर्शनादेव ब्रह्महत्यापहारिणी" । अब श्रीयमुनाजी के संगम तें मुररिपु श्रीकृष्णचन्द्र, तिनको प्रियंभावुका भई ।

"यया चरणपद्मजा मुररिपोः प्रियंभावुका ।
समागमनतोऽ भवत्सकलसिद्धरा सेविताम्' इति ।।

और अष्टविध ऐश्वर्य जे अलौकिक ताको दान दिये । अब गङ्गास्नान जो भावपूर्वक करे, तिनको कृष्णचन्द्र प्यारे

लगे। यह भगवदीयत्व को दान श्रीयमुनाजी द्वारा गङ्गाजी को भयो, तातें यह ज्येष्ठ सुदी १० कों उत्सव मानिये तो आपुन को भगवदीयत्व होय।

ज्येष्ठ सुदी १५ स्नानयात्रा। जा दिन उदयात् ज्येष्ठा होइ ता दिन स्नानयात्रा। पहिले दिन जल ल्याय, शयनार्ती करि, अधिवासन करिये। दूसरे दिन मंगलार्ती पीछे स्नान कराइये। पुरुषसूक्त पढाइये। याको आशय यह जो नन्दराय जी अपने आगें ब्रज को राज्याभिषेक करावत हैं। पिता अपने आगें पुत्र को राज्य देइ वाको युवराज कहिये। राज्य न देहिं तो श्रीकृष्णचन्द्र ब्रजराज सुत कहवावे, ब्रजराज नहीं। या प्रकार सों ब्रजराज कहवावे। 'ब्रजराजविराजितघोषवरे' इत्यार्या। और प्राकट्य समय श्रीवसुदेवजी मस्तक पर पधराय चले नन्दालय कों, ता समे शेष आय छाया किये हैं, 'शेषोन्वगाद्वारि निवारयन् फणैः' इति। यातें सर्प जाको उन्नत फण कर मस्तक पर रहे ताकों राज्य होइ यह फलस्तुति में शकुन कह्यो है। सो यहाँ यद्यपि प्रभु सर्वेश्वर हैं, तथापि ब्रज में व्यापिवैकुंठ को आविर्भाव है, यातें ब्रजेश होनो यह मुख्य। अन्तारलीला विषे या प्रकार है। और व्यापिवैकुण्ठ में हू श्रीनन्दराय जो सदा विराजमान हैं तहाँ तो यह प्रकार है। और ग्रीष्मऋतु है यातें जलक्रीड़ा है। राज्याभिषेक है, यातें सिंगार होय चुके पीछे भोग आवे। तामें दही भात, तथा सेंधाना, अनसखड़ी में मूँग को अंकूरो। तथा पणा मिश्री को

तथा खाँड को। दोउ भांत के होइ। बीजके लडुवा तथा चिरोंजीके लडुवा। आंव। याको आशय। दहीभात उत्सवको अंग। संधाना स्वादिष्ट। अंकुरो भाव अंकुरित। मिश्री तथा खांड को पणा श्रम निवारण को। बीजचिरोंजीके लडुवा अवयवाङ्गानुभव। आंबा फलानुभव। दुपहर के शय्या भोग में पणा अंकुरी, आंब धरिये। उत्थापन भये पीछे यह भोग प्रसादो में काढिये। फिर अंकुरी घी में तली होइ सो उत्थापन भोग सङ्ग धरीये। राज्य प्राप्ति के पीछे निर्भय क्रीडा है तातें दुपहर को भाव अंकुरित है। छौंको अंकुरी धरी, सो यह फिर अंकुरित न होय। यथा "भर्जिताः क्वथिता धानाः भूयो बीजाय नेष्यते" इति वचनात्। भगवद्भाव जो युवराज, या त्सव पीछे यह भाव दृढ रहे। ब्रजराज सुत यह भाव पूर्व हतो। अब ब्रजराज पूर्वक युवराज यह भाव सिद्ध भयो।

आषाढ सुदी २ रथयात्रा। जा दिन पुष्प नक्षत्र होइ ता दिन रथोत्सव। अभ्यंग। वस्त्र महीन, पर बूटा कस्तूरी को अथवा कसीदा की वा मुकेश को। ऐसो वागा। साडी प्रभृति सेत, कुलह लाल आभरण, सिंगार भोग सरें पाछें रथ पर युग्म पधराइये। माला फूल की पहिराइये। रथ थोरो सो चलाइये। पीछे एक मृत्पात्र में पणा तथा और पात्र में अंकुरी वा ऊपर आम ऐसें भोग तीन आवें। थोडो ो रथ चलाइये। ता पीछें भोग आवें। रथ डोल तिवारी में आवें। थोडी सी बेर ताँई दरसन होइ। पाछें बडो भोग

आवें। या भोग में बीज के लडुबा, खांड को पना, मिश्री को पना, आम प्रभृति सब आवें। भोग सरे पाछें दरसन होइ। फिर आरती कर रथ डोल तिवारी तें चौक में होइ कें तिवारी में लाइय। भीड सरकाय प्रभु युगम रथ पर तें चौकी पे पधराइये। पणा भोग धरिये। भोग सराय वागो वडो कर पिछोडा पहिराइये। पीछे राजभोग धरिये। दुपहर को अंकुरो वा आंव, पणा। उत्थापन भोग में छोंकी अंकुरी। इन पदार्थन को आशय। भक्तन के भाव रूप जो मनोरथ जो राज्याभिषेक देखिके अन्तः तें बाहिर प्रसर, द्रव रूप भयों। तब रथ रूप भयो। इनके भावात्मक हैं, तातें रथवाहक जो अश्व, सो स्त्रीं जनके गहना पहिरें। प्रथम भोग वामभाग रथको। भाव अंकुरित होइ फलित भयो तातें अंकुरा पर आंव धरनें। श्रम निवृत्यर्थ पना। फेरि रथ चल्यो सो दक्षिण भागस्थ को आकर्षण भयो, तब इनके द्वितीय भोग त हू को। यही प्रकार फेर रथ चल्यो, सो ललिता प्रभृतिन को मनोरथ आकर्षन भयो तब इनको तृतीय भोग, ताहू का यही प्रकार। फेर श्रीमातृचरण घर पधारें जानि, मार्ग में भोग धरत हैं। फिर डोल तिवारी में आवे। तहाँ सबको भाव एकत्र है। वामभाग, दक्षिण भाग, ललिता प्रभृति, तुर्य प्रिया यह व्यापिवैकुण्ठस्थ कों तथा अवतारलीला विषेऊ। अन्य पूर्वा अनन्यपूर्वा सबकी और को भोग हैं तातें वडो भोग है। याही तें उत्सव को एक ही आरती, बीडा विशेष याही भोग के। रथ

उतारि सीतल भोग श्रीमातृचरण को ओर को, श्रम निवृ- र्थ, तातें खांड को पना। श्रीमातृचरण को देह संबंध नहीं। तें इतने रस की न्यूनता।

'देहेन भावतो वापि संबंधः फल साधकः।
नंदादयो देहजेन प्रादुर्भावेन गोपिकाः ॥१॥'

देह करिके अथवा भाव करिकें। देहसंबंध फलसाधक । नंदादिक देह संबंध करिके पाये, गोपिका भाव करिकें ये। वागा वड़ो किये, पिछोडा पहिरे। कुलही रहे।

हिंडोला। श्रावण वदी में जा दिन वृखराशि को चन्द्रमा छो होइ ता दिन हिंडोला बैठावे। ता दिन अभ्यंग, लाल सुंभी, पिछोडा प्रभृति। और श्रावण वदी ४ के दिन श्री- कुलचन्द्रमाजी को उत्सव है, तातें हिंडोला बाहू दिन बैठत। तातें या मंदिर के जे वैष्णव हैं, ते चतुर्थी पहलें हिंडोला बैठावें। चतुर्थी ते जब सौकर्य होइ, तब बैठावें। ता दिन भ्यंग करे, तथा केसरी वस्त्र पहिरावें। संध्या आरती करिकें त्य हिंडोला बैठाइयें। पहिले दिन हिंडोला पें भोग आवें। तरे ता दिन आरती होइ। श्रीगोकुलचंद्रमाजी के पहिले नहू आरती होइ, तातें या घर के जो अनुचर हैं सो हिंडोरा ठावें, ता दिन भोग धरें, उतरिवे कें समय आरती होइ और डोला तें उतरे ता दिन आरती होइ। हिंडोला को भाव न में हू है तथा घर में हू है। 'तैसी यह हरितभूमि, तैसीय

वोरवधू चलत सुहाय माई।' यह वनको। ओर 'रंग मच्यो सिंहद्वार हिंडोरा व झूलना' यह घर को। वन के हिंडोला में अंतरंग लीला प्रगट, बाह्य लीला गुप्त। तहाँ श्रीजी के यहां वन को हिंडोरा हो है, तातें हिंडोरा तें उतरि संध्या आरति होइ। और सातों मंदिर में घरको हिंडोरा हैं, तातें संध्या आरती भये पीछे हिंडोला झूलें। यातें वैष्णव के यहाँ तों सातो मंदिर की रीति है। त तें संध्या आरती करि नित्य हिंडोरा बैठावें। हिंडोरा उतरवे को मुहूर्त सांझ को न होइ तो सवेरे शृङ्गार भोग सरे पाछें झूलें।

श्रावण सुदी ३ ठकुरानी तीज। अभ्यंग, लाल सुई, पीरी चूँदडी। पाग पिछोडा साडी प्रभृति। होरा के आभरण। यह हिंडोला बरसाने में झूलकें नंदालय पधारि झूलत हैं। तातें चूनरी, लाल पीरो रंग सो दोऊ भागको वर्णसाम्य। हीराके आभरण सो जैसे 'हारहास उरसि स्थिर विद्युत्'।

श्रावण सुदी ११ पवित्रा। अभ्यंग, कसुंभी पाग पिछोडा साडी प्रभृति। फिर जा घरके सिंगार की जैसी रीति। पवित्रा राखि के संग अधिवासन होइ। भद्रा न होइ ता समय पहिरें। केसरी पाट का सलंग और रंग नहो ऐसो पवित्रा एक पहिराइये। पीछे १ पवित्रा रंगीन में ते गुरु को भाव कर आस्यरूप हैं, तातें श्रीमुख के साम्हे देखि प्रभु को पहिराइये। तब भेट धरीये यथा सौकर्य, तैसें घरके होइ सोउ पवित्रा होइ तो एक एक सवित्रा पहिरावत जाय और यथा साकय भेट धरत जाय। जे प्रभु को छूवत होइ वाको पवित्रा देहि पहिरावे। आपुन भेट करें। स्वगुरु को पवित्रा पहिराये बिना जलपान कैसे करे? तातें अवश्य गुरु को भाव करि प्रभु को पहिराय चुकें पाछें दूसरो पवित्रा पहरावे। यह भेट जहां अपने मंदिर उत्सव कीर्तन की रहत होय, तहाँ सोंपनी। याहीं तें मन्दिर में तीन भेट हैं। १ जन्माष्टमी के पालने के समय को, तथा २ दिवारी के दिन हटरी के समय की, ३ पवित्रा के दिन की, सो सब उत्सव कीर्तन की भेट रहे, तहाँ सोंपनी। तामें दोइ भेट तो प्रभु को भई। सो प्रभु में जो जहां के सेवक हैं तहां के प्रभु को आविर्भाव है। यातें ये दोइ भेट वहांई की हैं। और पवित्रा की तो गुरु की ही है। मुख्य गुरु वे, जे निवेदनमंत्र को उपदेश दियो होइ ते। जाको निवेदन मन्त्र नहीं, ताको शरणमंत्र लियो होइ सो गुरु मुख्य। सूतका पवित्रा तार ३६० पहिरावनो आवश्यक नहीं। शास्त्रमें कह्यो है, देव को नित्य नये वस्त्र पहिरावनें, तातें इतनो सौकर्य न होइ तो वर्ष एक के दिन ३६० होंइ, तातें सूत के तार ३६० करि देवको पहेरावे, जो नित्य को एक एक तार करि नये वस्त्र पहरे यों कह्यो है। परन्तु श्रीआचार्यजी के मार्ग में नित्य नये वस्त्र पहिरावने यह रीति नहीं। जन्माष्टमी को शृङ्गार नवमी के दिन वही रहे। तथा दशमी के दिनहू जन्माष्टमी के वागा पहिरें। तथा दूसरे उत्सव कोहू पहिरें। तैसें दिबारी के वागा अन्नकूट के दिन पहिरें।

तैसे प्रवोधिनी को सिंगार द्वादशी के दिन रहे, और हू कितनेक उत्सवन को सिंगार दूसरे दिन होत है । यातें नये वस्त्र की रीति होइ तो फेर वही सिंगार कैसें होइ ? यातें सूत को पवित्रा आवश्यक नहा । और ब्रह्मसम्बन्ध को आज्ञा भई जा समय, ता समय श्रीआचार्यजी महाप्रभु सूतको पवित्रा पहिराये, ताको आशय यों जानि पड़त है । आपको त्यागपक्ष को स्वीकार हतो, निरपेक्षता हती । तातें जब जो संप्राप्त भयो तब वाको स्वीकार । श्रीगोकुल में बसती तो तब हतो नहीं, जो पाटको मिलें । यातें द्वादशीको पहेरावनों शास्त्र सिद्ध हैं, तातें सूत को करि राखे । सो एकादशी के दिन,अर्धरात्रा को समय, साक्षात् प्रभु पधारे,तब वा समय वही पवित्रा पहिराये । यातें एकादशी के दिन प्रभु पहिरें । पाटके पवित्रा में पहिलें पहिरें केवल केसरी पाटको । सो पीतांबर स्वीकार है, यातें "तुव बरन तन श्याम सुन्दर धरत पट पीरे," जैसें पीतांबराबृत तैसें पाटको पवित्रा । पीछे और भक्त को स्वीकार, तातें और रंग के पवित्रा को अंगीकार । पीछे द्वादशी के दिन आपुन प्रसादी पवित्रा पहिरिये । सो भक्त विशेष भगवत्स्वरूप अपने हृदयारूढ होइ । मिश्री भोग । मिश्री मधुर है तातें मधुरभावाविष्ट भक्त होइ, मधुरता को स्वरूप तहां यह है ।

'अधरं मधुरं वदनं मधुरं नयनं मधुरं हसितं मधुरम् ।
हृदयं मधुरं गमनं मधुरं मधुराधिपतेरखिलं मधुरं' ॥

या माधुर्य लावण्यको पान होइ । पवित्रा हिंडोरा को लपेटे तथा झालर कीये सो भक्तन करि हिंडोला वेष्टित है । वाम भाग करि प्रभु वेष्टित है । भक्तन के वस्त्र को तथा पवित्रा को वर्ण दोऊ को साम्य है । और पोरो पवित्रा श्रीकंठमें है, सो तो श्रीअंग को वर्ण साम्य है, तातें श्रीकंठ में हैं तास को पवित्रा सो भाव प्रकाशक है, या भाव को प्रकाश होइ तबहि कार्य सिद्धि होइ । यातें तास को पवित्रा हू सौकर्य होइ तो आवश्यक है । मुख्य पाटकों । कीर्तन में हू पाटके पवित्रा को वर्णन है, सूतको नहीं, पाटको जब बनि न आवे, तब सूतको सिद्ध करे ।

श्रावण सुदी पूनम राखी । अभ्यंग, पीरो हरदिया पिछोरा । कुलही साडो प्रभृति । लाल आभरण । जा घरको जैसी वस्त्र की रीति, सो पहिरें, तथा आभरण पहिरें । राखीकों अधिवासन पवित्रा के संग भयो है । भद्रा न होय तब पहिरें । राखी लाल पाट की होइ । वर्षाऋतु को अंगीकार तों आषाढ सुदी ६ के दिन है । वर्षाऋतु पुष्पिता भई सो राखोके दिन । आगें जन्माष्टमी के दिन फलित होयगी । तातें क्रियाशक्ति जो हस्त तामें अङ्गीकार है । वर्षाऋतु को जो भगवद् विषयक प्रीति ता अनुराग के ये पुष्प है । याही तें जन्माष्टमी के दिन चंदोवा वा पिछाबाई बंधें । गादी पर लाल साज होइ । खिलौना सों खेलें । पुष्पित होत हैं तब गुड के पूव

होत हैं। वर्षाऋतु हू पुष्पित भावापन्न है, तातें भोग हू गुड पापड़ो। तिलक कुमकुम को। पीरे अक्षत। आरती नहीं, पुष्पित है तातें। फलित होइ तो आरती, श्रावण सुदी ३ तैसें राखो तांई हिंडोला आवश्यक है। फिर जा दिन मुहूर्त आवे ता दिन उतरवे के समय आरतो होइ। हिंडोला बैठे ता दिन भोग आवे।

या प्रकार तीन भावना कही। प्रथम स्वरूपभावना कही। याको फलितार्थ यह है जो स्वरूप तो श्रीजी तथा सातों स्वरूप। 'षोडश गोपिकानां मध्ये अष्टकृष्णा भवन्ति' यातें आठों स्वरूपकी भावना करनी। जैसें स्वरूप विराजत हैं, कोई श्याम कोई गौर कोई गौरश्याम है। कोई द्विभुज, कोई चतुर्भुज, कहूँ शंख चक्र गदा पद्म यह चारो आयुध हैं। कहूँ शंख मात्र हैं, कहूँ अच्छिद्र। कहूँ श्रीहस्त अभयंकर। इत्यादि पदार्थ स्वरूपमें हैं तिनकी भावना। यह कौन लीला विशिष्ट विग्रह है? यह स्वरूप भावना।

दूसरी लीलाभावना कही। याको फलितार्थ यह है। जो लीलास्थ जे भक्त, श्रीस्वामिनी जी, श्रीयमुना जी श्रीगोवर्धन पर्वत, प्रभृति की भावना करनी सो, यह लीला भावना।

तृतीय भाव भावना। याको फलितार्थ यह है। जो सेवा के तो अधिकारी लीलास्थ भक्त, इनके भाव की भावना। सो

दोइ प्रकार की। सो प्रातआरंभ्य सायंपर्यन्त। तथा वर्षके उत्सवकी सेवा। इन दोऊनकी भावना करनी। यह भावभावना। या प्रकार तीन भावना कही।

या भावना तब सिद्धि होइ जब गुरु प्रसन्न होय। तातें गुरु को प्रसन्न राखिये। गुरु है सो हृदयांधकार के निवर्तक है।

"गुशब्दस्त्वंधकारे स्यात् रुशब्दस्तन्निवर्त्तकः।
अन्धकारनिवृत्त्वाद् गुरुरित्यभिधीयते' इति ॥

हरि जब अप्रसन्न होइ तब गुरु रक्षा करे। जब गुरु अप्रसन्न होइ तब कोउ रक्षक नही। यातें तनुजा वित्तजा सेवा करिकें गुरु को प्रसन्न करीये।

'हरौ रुष्टे गुरुस्त्राता गुरौ रुष्टे न कश्चन।
तस्मात्सर्वप्रयत्नेन गुरुमेव प्रसादयेत्' ॥

तहां मुख्य गुरु तो श्रीआचार्यजी तथा श्रीगुसाँईजी। ता पीछे इनको कुल गुरु है। श्रीकृष्णज्ञानन्दः, या पद करिके श्रीमहाप्रभुजी गुरु हैं। और श्रीगुसांईजी को शेष माहात्म्य तथा अशेष माहात्म्य यह दोउ माहात्म्य को स्थापित किये हैं, यातें गुरु हैं। "श्रीविठ्ठलेशे स्वाखिलमाहात्म्यस्थापकाय नमः।" और कुलमें तो "अस्मत्कुलं निष्कलंकं श्रीकृष्णेनात्मसात्कृतं" या वाक्यतें कुल हैं सो गुरु है। 'यथा देहे तथा देवे, यथा देवे तथा गुरौ'। इन्द्रिय व्रत करिकें देह पोखन करिये। तो प्रान पोखन सेवा होइ। जैसें प्रान सेवा करनी तैसें देव

सेया करनी प्राण सेवा करे तो इन्द्रिय देह भाव को प्राप्त होइ । ।‘आसन्यस्य हरेर्वापि सेवया देवभावत:’’ । आसन्य सो प्राण । हरिसेवा करे तो व्यापि वैकुंठ की प्राप्ति तब होइ जब गुरु सेवा करे । जैसी हरिसेवा तैसी गुरुसेवा ।

‘यस्य देवे परा भक्तिर्यथा देवे तथा गुरौ ।
तस्यैते कथिता ह्यर्था: प्रकाशन्ते महात्मन:।।

देह सेवा तथा देव सेवा, गुरु सेवा, यह तीनो सेवा नित्य करनी ताको प्रकार । तहाँ देह सेवा तो याको जो पदार्थ अपेक्षित है सो सिद्ध करत है । तैसे देव सेवा जो पदार्थ अपेक्षित है सोउ सिद्ध करत है । दोई सेवा तो भई । गुरु सेवा तो शेष रही । यह सेवा होइ सो पहेली दोउ सेवा सिद्ध होइ । गुरु सेवा तो कीनी न जाय श्रम बिना, सो उपाय कहत हैं । तहाँ जाको उपदेश निवेदन मंत्र न लीनो होइ तहां ताइ शरणमंत्र को उपदेश भयो । येही गुरु मुख्य हैं । यह जानि भगवदीय यों करे, जो घर में नित्य खरच होय सो लिखिये । तब वामें ते रुपया पीछे पैसा वा अधेला व छदाम, यह तीन पक्ष हैं सा काढि जुदी थैली में धरत जाइये । और कमायवे मे ते तेउ ऐसे काढिये । तो व्यापार में वृद्धि होय, और प्रभु प्रसन्न होइ और जुदी भेट काढिकै एक थैलो में राखते जइये । जब भेटआ आवे तब ढील न होय । और जो जुदो न काढिए तो जब वैष्णव साथ प्रस्ताव में और बेर भेट मांगे तब काढो न जाय याते यह अनायास सुगम मार्ग है । उद्धार तो गुरु के हाथ । वहां सन्मुख भयो तब जन्म धरे कौ सार्थक कियो । यातें मंदिर में तीन भेट होइ । १ पालने के समय २ हटडी के ममय ३ पवित्रा समय यह तीन भेट तथा उत्सव कोर्तन भेट यह सब अपने प्रभु के मंदिर पहोंचे तो गुरु सेवा तदनंतरगत भगवत्सेवा दोऊ सिद्ध होय । अपने यहाँ प्रभु बिराजत हैं उनमें तिनको आविर्भाव है । तिनकी सेवा गुरु द्वारा सिद्ध भई । यह परम महा भाग्य मान कीजिये । और कीर्तन के प्रमाण राखिये तो कोर्तन चले । अधेड़ी कीर्तन भेट । एक टका श्रीजी को, एक पैसा रणछोड़जो को, एक पैसा टहलवा कों दीजिये । तो कीर्तन ठहराइ आवें, यह सेवा चोंप सों करे । समर्पण मंत्र लीजिये तब श्रीजा के भेट देह पाछें गुरु कों भेट करिये । यहां रणछोडजो को भेट नहीं । उत्सव कीर्तन की भेट तथा पधरावनी में श्रीजो तें आदि रणछोडजी की भेट । समर्पण मंत्र लेइ ता समय नहीं । नाम मंत्र ले तब श्रीजी को हू भेट आवश्यक नही । जो उत्साह में आवे सो धरे । परन्तु इतनो विचारिये जो जगत में बहुतेरे जोव हैं तिनतें हमारे ऐसे भाग्य हैं । श्रीमद्वल्लभाचार्यजी श्रीगुसाँईजी साक्षात् ईश्वर पूर्ण पुरुषोत्तम इनकी शरण गये । और मार्ग में गुरु जीव है सेवा ईश्वर को । या पुष्टिमार्ग मे गुरु हो पूर्ण पुरुषोत्तम सेवा हू पूर्ण पुरुषोत्तम को सेवोपयोगी पदार्थ हू निर्दोष है । शरणमंत्र लियो तब आपु में ते आसुर

भाव निवृत्त भयो है। 'तस्मात् सर्वात्मना नित्य श्रीकृष्णः शरण ममेति ।' और निवेदन मंत्र लियो तब स्वसंबंधी पदार्थ में ते सर्व दोष निवृत्त होय सेवा योग्य सब पदार्थ भये। अब ऐसें शुद्ध जो द्रव्यादि पदार्थ हैं ताकों व्यर्थ न करिये इतनो बिचार के जो कर्तव्य होइ सो करिये ।

क: काल: कानि मित्राणि को देश: कौव्ययागमौ ।
कश्चाहं का च मे शक्तिरिति चिन्त्यं मुहुर्मुहुः ॥

प्रथम समय विचारिये पाछें आपुनो हित विचारिये। पीछे देश विचारिये। पीछे खर्च विचारिये। पीछे आमदनी विचारिये। पीछे अपनो स्वरूप विचारिये। जो मोकों कितनो अधिकार भयो है ? पीछे अपुनो सामर्थ्य विचारिये। यह सातों वार्ता विचारिकैं कार्य करे तो कबहू क्लेश न होय।

"हरिस्तु सर्वतो रक्षां करिष्यति न संशयः"

भगवान् षडगुण युक्त ऐश्वर्य सम्पन्न होइ के रक्षक हैं और भगवदीय भक्ति माने हैं तब कछु चिता नहीं। भगवान् भक्ति माने हैं ऐसे चित्त स्थिर राखि सेवा तथा स्मरण ही करिये।

* इति श्रीद्वारकेशविरचिता भावभावना सम्पूर्णा *

मुद्रक——रामस्वरूप रावत, अमर प्रिंटिंग प्रेस, सतघड़ा मथुरा ।

* अनुक्रमणिका *

विषय	पृष्ठ	विषय	पृष्ठ
१ प्रातः स्मरण	५	३१ दान एकादशीको भाव	८८
२ देहकृत्य	५	३२ वामनद्वादशीको भाव	८८
३ तिलक मुद्रा	६	३३ नवरात्री को भाव	९९
४ अंतःशुद्धि	७	३४ दशहरा को भाव	९९
५ नित्य सेवाप्रकार	७	३५ शरद् पूनमको भाव	१००
६ मार्गकी रीत	२०	३६ धनतेरस को भाव	१०१
७ सेव्यस्वरूप निर्णय	२३	३७ रूपचौदसको भाव	१०१
८ भेटको प्रकार	२४	३८ दिवारी को भाव	१०४
९ जपको प्रकार	२५	३९ अन्नकूटकी भावना	१०६
१० श्रीनाथजीको भावना	३३	४० भाईदूज को भाव	१०७
११ श्रीनवनीतप्रियाजो	३४	४१ गोपाष्टमोकीभावना	१०९
१२ श्रीमथुर नाथजीको स्वरूप	३५	४२ प्रबोधिनी एकादशी को भाव	१०९
१३ श्रीविट्ठलेश्वररायजो को स्वरूप	३७	४३ श्रीगुसांईजीकोउत्सव की भावना	११२
१४ श्रीद्वारिकानाथजी को स्वरूप	३८	४४ वसंत पंचमी को भावना	११५
१५ श्रीगोवर्धनधर जी को स्वरूप	३९	४५ श्रीजीको पाटोत्सव को भाव	११६
१६ श्रीगोकुलचन्द्रमाजी को स्वरूप	४१	४६ होरी की भावना	११६

१७ श्रीमदनमोहनजीको स्वरूप ४४
१८ गोदके ६ स्वरूप ४६
१९ लीलाभावना ४८
२० श्रीयमुनाजीकोस्वरूप ४९
२१ श्रीमदाचार्यजीकोस्वरूप ५८
२२ श्रीगुसांईजी को स्वरूप ६१
२३ श्रीसातों स्वरूप ६५
२४ श्रीगोवर्धनपर्वत को स्वरूप ७०
२५ व्रजको स्वरूप ७३
२६ भावभावना ७५
२७ प्राकट्यविचार ७६
२८ नित्यसेवाभावना ८१
२९ जन्माष्टमीको भाव ८६
३० श्रीराधाष्टमीको भाव ८०
४७ डोल को भावना ११६
४८ रामनवमी को भाव ११७
४९ अक्षयतृतीया को भाव ११८
५० नृसिंहचतुर्दशीकाभावना ११९
५१ गङ्गादशहराकोभाव १२०
५२ स्नान यात्रा को भाव १२२
५३ रथयात्रा को भाव १२३
५४ हिंडोला की भावना १२५
५५ ठकुरानी तीज को भाव १२६
५६ पवित्रा एकादशी को भाव १२६
५७ राखी पूनम की भावना १२९
५८ उपसंहार १३२
५९ गुरुसेवा १३५
६० वैष्णव कर्तव्य १३६

ई !   छप गई !!   छप गई !!!

गो० श्री हरिराय जी प्रणीत

चौरासी वैष्णवन की वार्ता

[तीन जन्म की लीला भावना वाली]

संपादक— गो० वा० श्रीद्वारिकादास परीख

प्रस्तावना-लेखक : डा० गोवर्द्धन नाथ जी शुक्ल
रीडर हिन्दी विभाग वि० वि० अलीगढ़

अभिप्राय लेखक : श्री प्रभुदयाल जी मीतल

इस प्रमुख ग्रन्थ से स्वमार्गीय जन तो भली-भाँति परिचित ही हैं,
रीखजी ने इस ग्रन्थ में जो भाव प्रकाश, एवं भावनाओं का शोध
सम्पादन कर पुष्टि जगत को ही नहीं, समग्र बुद्धिजीवी वर्ग को
पनी विद्वता पूर्ण शैली की ओर आकर्षित कर लिया है, और
म्पादन के पश्चात् ही श्री परीख जी द्वारा अनेक शोधकर्ताओं को
दशन प्रदान किया गया । यह ग्रन्थ विदेशों में भी सम्मानित
र ब्रजभाषा प्रचार में सहायक हुआ है । स्वमार्गीय जन तो इस
के भाव प्रकाशों को पठन कर गद्-गद् रोमाँच-प्रेमाँच हो जाते हैं ।
बार इस ग्रन्थ का अध्ययन अवश्य करें ।

मुख्य कवर पर श्री वल्लभप्रभु के प्राकट्य का "रसमय श्रीकृष्ण"
प का नयनाभिराम भावना पूर्ण तिरंगा चित्र एवं श्री वल्लभा-
जी, श्रीयमुनाजी, श्रीगुसाँईजी, श्रीगोकुलनाथजी, श्रीहरिरायजी
करंगे चित्रों से सुसज्जित ग्रंथ ।   न्योछावर सादा जिल्द १६)
कपड़ा जिल्द १७)५० रु०

प्राप्ति संस्थान :—

श्री बजरंग पुस्तकालय
दाऊजी घाट मथुरा (यू० पी०)

श्री गोवर्द्धन ग्रन्थमाला के नूतन-प्रकाशन

४१ वाँ-पुष्प–	श्री यमुनाजी की आरती न्यौ०	)
४२ वाँ-पुष्प–	नित्य कीर्तन के पद	१)
४३ वाँ-पुष्प–	वर्षोत्सव कीर्तन के पद	२)
४४ वाँ-पुष्प–	श्री गुसाँई कृत-मंगल चतुष्पदी, श्री यमुनाष्टपदी, सौन्दर्य पद की श्रीहरिराय जी कृत टीका भाव प्रकाश सहित अष्ट सखा एव अष्ट समय के भाव सहित न्यौ०	)
४५ वाँ-पुष्प–	श्रीहरिरायजी प्रणीत चौरासी वैष्णवन की वार्ता तीन जन्म की लीला भावना वाली न्यौ० सादा जिल्द	१६)
	कपड़ा जिल्द	१७)
४६ वाँ-पुष्प–	श्री नारायण कवच गजेन्द्रमोक्ष [सटीक]	०८)
४७ वां-पुष्प–	श्री नारायण कवच [सटीक]	८०)
४८ वां-पुष्प–	गजेन्द्रमोक्ष [सटीक]	००)
४९ वां-पुष्प–	षोडशग्रन्थ, श्री वल्लभगीता [सटीक]	१)
५० वां-पुष्प–	श्री गोरधनलाल जी महाराज के ४१ वचनामृत	१)
५१ वां पुष्प–	वृह्मसंबंध मंत्र चित्रमय चार्ट	००)
५२ वां-पुष्प–	नित्य कीर्तन मोटे अक्षरों में सजिल्द [कीर्तन कुसुमाकर]	७)
५३ वां-पुष्प–	कीर्तन कुसुमाकर-भाग दूसरा वर्षोत्सव के कीर्तन मोटे अक्षरों में सजिल्द	९)
५४ वां-पुष्प–	कीर्तन कुसुमाकर-भाग तीसरा (सजिल्द) बसत होरी, धमार कीतन मोटे अक्षरो में	६)
५५ वां-पुष्प–	कीर्तन कुसुमाकर भाग १-२-३ ऊपर के समस्त कीर्तनों का संग्रहित ग्रन्थ न्यौ० कपड़ा जिल्द	१८)
५६ वां-पुष्प–	वल्लभाख्यान (सटीक)	१)

प्राप्ति संस्थान :—

श्री बजरंग पुस्तकालय, दाऊजी घाट, मथुरा।